कांग्रेस-लीग और हिन्दूमहासभा

लेखक—
विजयकुमार पुजारी

पहली बार] दिसम्बर, १९४६ [तीन रुपया

प्रकाशक—
रतन एण्ड को, बुकसेलर्स,
दरीबा कलाँ, देहली

पुस्तक मिलने का पता—
पं० विश्वेश्वरदयालु, सरस्वती भण्डार
पो० शहादरा, देहली

मुद्रक—
रूपवाणी प्रिंटिङ्ग हाउस,
२३, दरियागंज, देहली

हिन्दुस्तान की तीस करोड़ हिन्दू जनता

की

सेवा में सप्रेम समर्पित

भूतकाल में की हुई गलतियों के दुष्परिणाम हम वर्तमान
काल में भुगत रहे हैं । यदि हम अपने भविष्य
काल को उज्ज्वल बनाना चाहते हैं, तो हमें
वर्तमान काल में उन गलतियों से
बचना चाहिये, जो हमने
भूतकाल में की थीं ।

—विजयकुमार पुजारी

विषय-सूची

*

भूमिका

मैंने श्रीयुत विजयकुमार पुजारी की हस्त-लिखित पुस्तक 'कांग्रेस-लीग और हिन्दू महासभा' को ध्यानपूर्वक पढ़ा। मुझे अत्यन्त हर्ष हुआ कि स्वर्गीय श्री माधव गोविन्द भडकमकर और स्वर्गीय श्री चन्द्रगुप्त वेदालंकार के बाद हमारे बीच में महासभा की राष्ट्रीय विचार-प्रणाली का ओजस्वी भाषा में तथा प्रभावशाली शैली में युक्ति युक्त समर्थन करनेवाले हिन्दुत्व-निष्ठ हिन्दी-लेखकों का अभाव नहीं है। निस्सन्देह श्रीयुत् विजयकुमार पुजारी एक सफल लेखक और निर्भीक समालोचक हैं। भाषा-प्रभुत्व, भावगाम्भीर्य, चित्ताकर्षक शैली, विषय का समुचित ज्ञान, सीधी और स्पष्ट आलोचना आदि गुणों के कारण पुस्तक पठनीय तथा प्रशंसनीय है। राष्ट्र-भाषा हिंदी में हिंदू-मुस्लिम समस्या के सम्बन्ध में हिंदू दृष्टिकोण का समर्थन करनेवाली पुस्तकों की बहुत आवश्यकता है। लेखक महोदय ने प्रस्तुत पुस्तक लिख कर इस आवश्यकता की किसी सीमा तक पूर्त्ति की है। अतः मैं लेखक महोदय को हार्दिक बधाई देता हूँ।

लेखक महोदय ने प्रस्तुत पुस्तक में सरकार की 'विभाजन तथा शासन' की नीति, मुस्लिम लीग की साम्प्रदायिक नीति और कांग्रेस की राष्ट्रीयता की दृष्टि से कमजोर नीति की तीव्र भाषा में कड़ी आलोचना की है और पुस्तक के प्रायः प्रत्येक प्रकरण के अन्त में विभिन्न दृष्टियों से महासभा की आवश्यकता का प्रतिपादन किया है। पुस्तक में प्रधानतया दो बातों की ओर हिन्दू जनता का ध्यान आकर्षित करने का प्रयत्न किया गया है। एक

तो यह कि कांग्रेस की मुस्लिम-पोषक नीति सरकार की 'विभाजन तथा शासन' की नीति में सहायक होती रही है और इसी के फलस्वरूप राष्ट्रीय आन्दोलन की प्रगति के साथ ही साथ साम्प्रदायिक संघर्ष भी बढ़ता गया है। दूसरे यह कि राजनीतिक सिद्धान्तों की दृष्टि से महासभा की विचार-प्रणाली राष्ट्रीय है और स्थायी हिन्दू-मुस्लिम समझौता राष्ट्रीयता के आधार पर ही हो सकता है, साम्प्रदायिकता के आधार पर नहीं। कांग्रेस और लीग की विचार-प्रणाली तथा कार्य-प्रणाली का अध्ययन करनेवाला कोई भी विचारक हिन्दू लेखक के विचारों से सहमत होगा।

विचारक हिन्दुओं के लिये हिन्दू-मुस्लिम समस्या के अध्ययन की पर्याप्त सामग्री पुस्तक में विद्यमान है। सनातन धर्म, आर्य-समाज तथा हिन्दू महासभा के प्रचारकों और अस्पृश्योद्धार शुद्धि तथा संगठन का कार्य करनेवालों के लिये हिन्दुत्व की दृष्टि से प्रचार करने में यह पुस्तक बहुत ही सहायक सिद्ध होगी। हिन्दू विद्यार्थियों में इस पुस्तक का खूब प्रचार होना चाहिये। मैं आशा करता हूँ कि सर्व-साधारण हिन्दू जनता इस पुस्तक को अपनायेगी और लेखक का परिश्रम सफल होगा।

— गणपतराय

ता० १-१२-४६

लेखक की ओर से

विभिन्न कारणों से वर्तमान भारतीय राजनीति में हिन्दू दृष्टिकोण का सर्वथा अभाव है, परन्तु इसका मुख्य कारण हिन्दुओं की अपने अधिकारों के प्रति उदासीनता ही है। मुस्लिम लीग के 'प्रत्यक्ष संघर्ष' ने हिन्दुओं की उदासीनता पर घातक प्रहार किया है। इसके फलस्वरूप हिन्दू जनता अपनी ग़लती को अनुभव कर रही है। हिन्दुओं में हिन्दुत्व की भावना जागृत हो रही है। हिन्दुत्व की भावना से प्रेरित होकर ही मैंने प्रस्तुत पुस्तक लिखी है। पुस्तक में भारतीय राजनीति में हिन्दू दृष्टिकोण को स्पष्ट करनेका प्रयत्न किया गया है। इस प्रयत्न में कहाँ तक सफलता मिली, इसका विवेचन करने का अधिकार मुझे नहीं है।

पुस्तक के लिखने में विभिन्न पुस्तकों, नेताओं के भाषणों, वक्तव्यों तथा समाचार पत्रों से सहायता ली गई है; परन्तु पुस्तक लिखते समय हिन्दू महासभा के बिलासपुर अधिवेशन के प्रस्तावों ने ही मेरा पथ-प्रदर्शन किया है। यह कहा जा सकता है कि प्रस्तुत पुस्तक महासभा के बिलासपूर अधिवेशन के प्रस्तावों की विवेचनात्मक विस्तृत व्याख्या है।

पुस्तक में जो दोष रह गये हैं, उनसे मैं अनभिज्ञ नहीं हूँ। काम बहुत ही थोड़े समय में करना पड़ा। पुस्तक के तीन प्रकरण तो मुझे प्रेस में बैठ कर लिखने पड़े। समय अधिक मिलता,

तो पुस्तक और अच्छी बन सकती थी। प्रूफ संशोधक की असावधानी से कुछ अशुद्धियाँ छूट गई हैं। आशा है, पाठक सुधार कर पढ़ेंगे।

अखिल भारतीय हिन्दू महासभा के भूतपूर्व मंत्री माननीय लाला गणपतरायजी ऍडवोकेट ने पुस्तक को ध्यानपूर्वक पढ़ा, क़ानून की दृष्टि से पुस्तक की जाँच की और भूमिका भी लिख दी। यह काम उन्होंने बहुत ही सहृदयतापूर्वक किया। इसके लिये मैं उनके प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ।

—विजयकुमार पुजारी

२५-१२-४६

काँग्रेस, लीग और हिन्दू महासभा

विभाजन और शासन

गाँधी जी ने काँग्रेस का परिचय देते हुए कहा है—"काँग्रेस देश की सब से अधिक शक्तिशाली और प्रातिनिधिक संस्था है। उसका इतिहास उच्च कोटि की अटूट सेवा और त्याग का इतिहास है। शुरू से ही उसने जितने तूफ़ानों का सफलता के साथ सामना किया, उतना किसी संस्था को नहीं करना पड़ा। उसके आदर्श से लोगों ने इतना अधिक त्याग किया है कि जिस पर देश गर्व कर सकता है।" यह काँग्रेस का संक्षिप्त परिचय है।

२ सितम्बर १९४५ को बर्मिंघम में एक सभा में मि० नियामत अली नूर ने मुस्लिम लीग का परिचय देते हुए कहा है—"मुस्लिम लीग अधिकतया ऐसे लोगों की संस्था है, जो चाहते हैं कि भारत में अंग्रेज़ों का शासन बना रहे। मुस्लिम लीग भारत की स्वतन्त्रता के लिए कभी नहीं लड़ी। उलटे इसके भारतीय स्वतन्त्रता के युद्ध में बाधक बन कर वह ब्रिटिश साम्राज्यवाद की सहायता करती रही है।" ६ अक्टूबर १९४६ को आज़ाद हिन्द फ़ौज के अफ़सर मिर्ज़ा अमीर बेग ने

लण्डन में भारतीयों की एक सभा में मुस्लिम लीग की पाकिस्तान की माँग के सम्बन्ध में कहा है—"भारत का विभाजन चाहने वाले क्विजलींग (देशद्रोही) हैं। उन पर भारत में नूरेम्बर्ग के मुकदमों के समान मुकदमा चलाया जाना चाहिए।" यह मुस्लिम लीग का संक्षिप्त परिचय है।

काँग्रेस ३० करोड़ हिन्दुओं का प्रतिनिधित्व तो करती ही रही है, पर उसमें अल्पसंख्यक मुसलमान, सिख, ईसाई, पारसी आदि सम्मिलित होने से वह ३० करोड़ से भी अधिक भारतीय जनता का प्रतिनिधित्व करती है। मुस्लिम लीग भारत के ६ करोड़ मुसलमानों का प्रतिनिधित्व करने का दावा करती है, पर मुस्लिम जनता में अन्य मुस्लिम दल भी हैं और वे लीग से पूर्णतया सहमत नहीं हैं। तात्पर्य यह कि मुस्लिम लीग लगभग ६ करोड़ भारतीय मुस्लिम जनता का प्रतिनिधित्व करती है। अन्य मुस्लिम दल भी साम्प्रदायिकता से बिल्कुल मुक्त नहीं हैं।

संख्या तथा उद्देश्य की दृष्टि से काँग्रेस और लीग में इतना आकाश-पाताल का अन्तर होते हुए भी भारतीय राजनीति में सरकार की ओर से दोनों संस्थाओं को समान रूप से महत्वपूर्ण समझा जा रहा है, दोनों को एक ही दृष्टि से देखा जा रहा है और दोनों को समान प्रतिष्ठा प्रदान की जा रही है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि स्वतन्त्रता के नाम पर प्रत्येक प्रकार का त्याग करनेवाली और ३० करोड़ से भी अधिक भारतीय जनता का प्रतिनिधित्व करने वाली काँग्रेस जैसी देश-भक्त तथा व्यापक

संस्था को मुस्लिम लीग जैसी भारतीय स्वतन्त्रता में बाधक, अल्प-संख्यक जाति का नेतृत्व करनेवाली, संकुचित तथा साम्प्रदायिक संस्था की बराबरी में बिठा कर सरकार ने स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष करने वालों का —मर मिटने वालों का—भारत की बहु-संख्यक जनता का—भारत राष्ट्र का अपमान तथा उपहास किया है और भारत की स्वतन्त्रता के विरुद्ध भयानक तथा शरारत-भरा षड़यन्त्र किया है, परन्तु कोई भी ईमानदार काँग्रेसी इस तथ्य से इन्कार नहीं कर सकता कि काँग्रेस का नेतृत्व इस षड़यन्त्र में सहायक होता रहा है। 'इस घर को आग लगी घर के चिराग़ से।'

भारत के राष्ट्रीय आन्दोलन का इतिहास प्रकारान्तर से काँग्रेस और लीग के संघर्ष का इतिहास है। आज भारत साम्प्र-दायिक संघर्ष का अखाड़ा बना हुआ है। भारत की वर्तमान शासन-व्यवस्था साम्प्रदायिकता की बुनियाद पर आश्रित है। सरकार ने ऐसा वातावरण पैदा कर दिया है कि सभी जातियों में समझौता हो ही नहीं सकता। अन्य स्वतन्त्र देशों की राजनीति में मजहब अर्थात् धार्मिक सम्प्रदायवाद का कोई स्थान नहीं है, पर इसी अभागे देश की राजनीति में मजहब को घसीटा जाता है और साम्प्रदायिक मतभेद पैदा करके अपना उल्लू सीधा किया जाता है। यह स्पष्ट है कि वर्तमान राजनीतिक परिस्थिति की सारी कठिनाइयाँ सम्प्रदायवाद को लेकर हैं। जब तक मज-हब को राजनीति से अलग नहीं कर दिया जाता तब तक वर्त-

मान राजनीतिक उलझनें सुलझ नहीं सकतीं। भारत में जब तक राष्ट्रीयता की स्थापना नहीं होती, तब तक लोकतन्त्र की भी स्थापना नहीं हो सकती। और जब तक लोकतंत्र की स्थापना नहीं होती तब तकदेश में स्थायीशाँति की आशा दुराशा मात्र है।

काँग्रेस और लीग के संघर्ष ने आज हिन्द - मुस्लिम संघर्ष का रूप धारण कर लिया है। भारतीय हिन्दू - मुस्लिम समस्या को समझने के लिये सरकार की 'विभाजन तथा शासन की नीति, मुस्लिम लीग की साम्प्रदायिक नीति और काँग्रेस की राष्ट्रीय (?) नीति का मनोवैज्ञानिक दृष्टि से अध्ययन करने की आवश्यकता है।

२८ दिसम्बर १८८५ को मि० ह्यूम साहिब के प्रयत्न से श्री उमेश बनर्जी के सभापतित्व में काँग्रेस का पहला अधिवेशन हुआ। काँग्रेस की स्थापना करने में मि० ह्यूम साहिब का उद्देश्य भारतीयों की क्राँति कारी भावना को दबाकर भारत में विधान-वाद का जाल फैलाना था। अंग्रेज कूटनीतिज्ञ इस बात को जानते थे कि शासन-सूत्र हमारे हाथ में रहने पर भी भारतीयों के सहयोग के बिना शासन-व्यवस्था की गाड़ी सुचारु रूप से चल नहीं सकती। इस सहयोग के लिये आज नहीं तो कल कुछ साधारण अधिकार भारतीयों को देने ही पड़ेंगे। ऐसा न हो कि इन अधिकारों का उपयोग भारतीय समाज संगठित होकर ब्रिटिश शासन के विरुद्ध करे। इस भय को दूर करने के लिये अंग्रेजों ने भारतीय समाज में फूट का बीज बोना आवश्यक

समझा। इसके फलस्वरूप सर आक्लैण्ड कालविन की प्रेरणा से सर सैयद अहमद ने काँग्रेस की स्थापना के ठीक तीन साल बाद ही १८८८ में "Anglo-Muslim Defence Association" की स्थापना की। डॉक्टर पट्टाभि सीतारामय्या ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'काँग्रेस का इतिहास' (History of the Congress) में सर ऑक्लैण्ड कालविन के सम्बन्ध में लिखा है—"कोई यह खयाल करेंगे कि यह साम्प्रदायिक या जातिगत प्रतिनिधित्व का प्रश्न आजकल (१९०९ के मिण्टो-मोर्ले सुधार योजना के समय) ही खड़ा हो गया है। नहीं, सर ऑक्लैण्ड कॉलविन (१८८८) जब संयुक्त प्रान्त के लेफ्टिनेण्ट-गवर्नर थे तब से इसकी बुनियाद पड़ चुकी है। उस समय यह दिखाने की कोशिश की गई थी कि मुसलमान काँग्रेस के विरोधी हैं। यहाँ तक कि मि० ह्यूम साहब ने भी इसे महत्वपूर्ण समझा और इसके विषय में उन्होंने एक लम्बा जवाब सर ऑक्लैण्ड को भेजा। इसमें कोई शक नहीं कि काँग्रेस के पहले दो-तीन अधिवेशनों की सफलता ने नौकरशाही के मन में हल चल मचा दी थी, जिसके कि मुख का काम लेफ्टिनेण्ट गवर्नर महोदय ने कर दिया।'

हाँ, तो सर सैयद अहमद ने मुसलमानों को बताया कि उनका हित अंग्रेजों से मिलकर रहने में है। साम्प्रदायिक भावना में प्रेरित होकर सर साहिब ने मुसलमानों को हिन्दुओं के विरुद्ध उभारा। इसका परिणाम वही हुआ, जो होना था। सैयद अहमद

का देहान्त १८९८ में हुआ, पर अपनी मृत्यु से पहले ही वह हिन्दू-मुस्लिम दंगे की पृष्ठभूमि तैयार कर गये थे। बम्बई और नासिक में जो हिन्दू-मुस्लिम दंगे हुये और उन दंगों से सरकार ने हिन्दुओं की नागरिक स्वतन्त्रता पर जो आक्रमण किया, उससे लोकमान्य तिलक जैसे राष्ट्रीय नेता ने भी हिन्दू संगठन की आवश्यकता को अनुभव किया। लोकमान्य तिलक ने हिन्दुओं को संगठित करने और वीरता का पाठ पढ़ाने के लिए हिन्दुओं में गणेशोत्सव तथा श्री शिवाजी उत्सव की प्रथायें प्रचलित कीं। डाक्टर पट्टाभि सीतारामय्या 'काँग्रेस का इतिहास' में लिखते हैं—'शिवाजी महाराज की स्मृति को फिर से ताजा करने का श्रेय लोकमान्य तिलक को ही है। सारे महाराष्ट्र में शिव जयंतियाँ मनाई जाने लगीं, जिनमें उत्सव के साथ सभाएँ भी होती थीं। पहली ही सभा में दक्षिण के बड़े बड़े मराठा राजा और मुख्य मुख्य जागीरदार और इनामदार आये थे। इस सिलसिले में १४ सितम्बर १८९७ को कुछ पद्य तथा अपना भाषण छापने के अपराध में उन्हें १८ महीनों की कड़ी कैद की सजा दी गई थी, पर वह ६ सितम्बर १८९८ को छोड़ दिए गए। अध्यापक मैक्समूलर, सर विलियम हण्टर, सर रिचार्ड गार्थ मि० विलियम केने और दादाभाई नौरोजी ने एक दरख्वास्त दी थी, जिसके फलस्वरूप उनकी रिहाई हुई थी। उनके जेल में रहते हुए ताजीरात हिन्द में १२४ ए और १५३ ए दफाएँ नई जोड़ी गईं, जिससे कि वह कानून के शिकंजे में फँसाये जा सकें।"

मसजिद के सामने बाजा बजाने या हिन्दुओं के सामाजिक था धार्मिक जलूस पर मुसलमानों द्वारा आक्रमण किये जाने से प्रायः हिन्दू-मुस्लिम दंगे हुए हैं। मुसलमानों के शासन-काल में भी दिल्ली जैसे राजधानी के शहर में जामा मसजिद के सामने से होकर रामलीला के धार्मिक जलूस विभिन्न प्रकार के बाजे बजाते हुए धूम-धाम के साथ गुजरते थे, इतना ही नहीं, शाही खानदान के लोग फूलमालाएँ अर्पण करके जलूस का सम्मान भी करते थे। वास्तव में मसजिद के सामने वाद्य न बजाने का शरियत से कोई सम्बन्ध नहीं है। मसजिद के सामने बाजा नहीं बजाया जा सकता—यह तो मुसलमानों की साम्प्रदायिक वृत्ति का प्रदर्शन मात्र है। मौलाना शौकतअली ने भी इस बात को कबूल किया था कि उनकी शादी का जलूस रामपुर की मसजिद के सामने से बाजा बजाते हुए ही गुजरा था। फिर भी मसजिद के आस पास तथा सामने बाजा बजाना कानूनन बन्द करा दिया गया।

दूसरी ओर विदेशी तथा विधर्मी शासन-व्यवस्था से देशभक्त हिन्दू नवयुवकों के हृदय में असन्तोष की अग्नि प्रज्वलित होने लगी। क्रान्तिकारी युवक मैदान में आये। इनमें चापेकर बन्धुओं का नाम उल्लेखनीय है। १८६७ में श्री दामोदर पन्त चापेकर ने रण्ड और आइर्स्ट इन दो अफसरों का पिस्तौल से खून किया। श्री वासुदेव चापेकर ने ब्रोयन साहेब को मार दिया। १६०१ में वीर सावरकर पूना के फर्ग्युसन कालेज में

प्रविष्ट हुए और वहाँ आपने देशभक्त युवकों का संगठन करना शुरू कर दिया। पण्डित श्यामजी कृष्ण वर्मा ने १९०५ में लंदन में "इण्डिया होम रूल सोसाइटी" की स्थापना की।

१८५७ के स्वातन्त्र्य युद्ध में असफल होने के बाद यद्यपि हिंदूसमाज विवशतापूर्ण निःशस्त्र जीवन व्यतीत कर रहा था तथापि स्वदेश को स्वतन्त्र देखने की भावना उसमें काम कर रही थी। जब लार्ड कर्जन ने १९०५ में राष्ट्र की की इच्छा के विरुद्ध वंग-भंग की योजना को कार्यान्वित करना चाहा, तो उपर्युक्त भावना भड़क उठी। वंग-भंग का उद्देश्य पूर्व बंगाल और आसाम को मिलाकर एक नये प्रान्त का निर्माण करना था, जिसमें मुस्लिम प्रभाव से साम्प्रदायिकता कोप्रोत्साहन मिले। इससेभावुक बगाली युवकों का खून खौल उठा। स्वदेशी आन्दोलन के साथ सशस्त्र क्रान्तिकारी आन्दोलन भी हुआ। सरकार हिन्दुओं के स्वदेश-प्रेम के प्रति सतर्क और सचेत हो गई। वह समझ गई कि हिन्दुस्थान में ब्रिटिश साम्राज्यवाद की जड़ को मजबूत बनाये रखने के लिये हिन्दुओं के राष्ट्रीय आन्दोलन को कुचल देना आवश्यक है। सरकार ने मुसलमानों की अराष्ट्रीय मनोवृत्ति से फायदा उठाना समयोचित समझा और भारत में विभाजन और शासन (Divide and Rule) की नीति कार्यरूप में परिणत हो गई।

यह विचारणीय बात है कि १९०५ में वंग-भंग आन्दोलन हुआ और १९०६ में सरकार के हिन्दू विरोधी दृष्टिकोण का अध्ययन कर अपना साम्प्रदायिक स्वार्थ सिद्ध करने के लिये सर

आगा खाँ की अध्यक्षता में एक मुस्लिम डेपुटेशन भारत के तत्कालीन वायसराय लार्ड मिन्टो से मिला और मुसलमानों के लिये संख्या की दृष्टि से अधिक तथा पृथक प्रतिनिधित्व की और स्वतन्त्र निर्वाचक संघ की माँग की। कहने की आवश्यकता नहीं है कि राष्ट्रीयता की छाती पर बैठ कर ही मुसलमानों ने यह राष्ट्र-द्रोही माँग की थी। लार्ड मिन्टो तो साम्प्रदायिक मुस्लिम मनोवृत्ति से अपना जातीय स्वार्थ सिद्ध करना ही चाहते थे। आपने बड़े मजे में डेपुटेशन से कह दिया—"तथास्तु"। इसी वर्ष ढाका में मुस्लिम लीग की स्थापना हुई। आज भारतीय राजनीति में हिन्दू-मुस्लिम समस्या को लेकर जो गतिरोध पैदा हुआ है, उसकी कहानी यहीं से प्रारम्भ होती है। हिन्दू और मुसलमानों के बीच में अविश्वास की खाई खोदने का काम लार्ड मिन्टो ने सफलता पूर्वक किया। इस प्रकार ब्रिटिश सरकार का बल पाकर मुसलमानों का हौसला बढ़ गया। वे साम्प्रदायिकता के रंग में रंग गये। हिन्दू स्त्रियों और बच्चों को मुसलमान बनाने के लिये तब लीग जैसी संस्थाएँ स्थापित हो गईं। अस्पृश्यों को मुसलमान बनाकर मुसलमानों की संख्या बढ़ाने का प्रयत्न किया जाने लगा। प्रत्येक सम्भव उपाय से साम्प्रदायिकता का प्रदर्शन किया जाने लगा।

सन् १९०९ के मिण्टो-मोर्ले सुधार योजना के अनुसार मुसलमानों को पृथक् प्रतिनिधित्व पृथक् निर्वाचक संघ तथा साम्प्रदायिक संरक्षण दिया गया। इसमें भी पूर्णतया पक्षपात से काम

लिया गया, ताकि हिन्दू जाति के विरोध में संगठित तथा शक्ति-सम्पन्न मुस्लिम जाति खड़ी हो सके।

डॉक्टर पट्टाभि सीतारामय्या 'कांग्रेस का इतिहास' में लिखते हैं—"लार्ड मिण्टो के जमाने में साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व के ख़याल ने मूर्त-रूप धारण किया। मिण्टो की शासन-सुधार-योजना में मुसलमानों के लिये अलग निर्वाचन संघ की तजवीज की गई थी, परन्तु साथ ही संयुक्त निर्वाचन में भी राय देने का उनका अधिकार भी ज्यों का त्यों रक्खा गया। संकीर्ण-बुद्धि के राजनीतिज्ञों ने उस समय यह बताया कि बंगाल, और पंजाब की छोटी हिन्दू जातियों को ऐसा विशेषाधिकार नहीं दिया गया। परन्तु यह तो असल में सही रास्ता छोड़कर भटक जाना था। जो बड़ी अजीब बात थी, वह तो यह कि भिन्न भिन्न जातियों के लिये भिन्न भिन्न मताधिकार रक्खा गया था। एक मुसलमान तीन हजार रुपये साल की आमदनीवाला जहाँ मतदाता हो सकता था, वहाँ एक गैर-मुस्लिम अर्थात् हिन्दू तीन लाख सालाना आमदनीवाला हो सकता था। मुसलमान ग्रेजुएट को मतदाता बनने के लिये यह काफी था कि उसे ग्रेजुएट हुए तीन साल हो जायँ, परन्तु गैर-मुस्लिम के लिये तीस साल हो जाना जरूरी था। जरा गौर तो दीजिये, एक तरफ तीन हजार रुपये और दूसरी तरफ तीन लाख रुपये! एक तरफ तीन साल और दूसरी तरफ तीस साल! जब तक कोई सार्वजनिक बालिग मताधिकार नहीं मिल जाता है, तब तक हम अक्सर ऐसे मतावलम्बों की प्रति-

ध्वनि सुना करते हैं। मुसलमान दोनों जातियों के लिये मताधि-कार के भिन्न भिन्न स्टैण्डर्ड चाहते हैं, जिससे कि मतदाताओं में ठीक ठीक अनुपात कायम रहे। १६१० में हालत बहुत नाजुक हो गई। सर डबल्यू. एम वेडर बर्न कांग्रेस के सभापति हुए थे। आपने यह चाहा था कि हिन्दू और मुसलमानों की एक परिषद की जाय, जिससे इस जातिगत प्रश्न पर मेल हो जाय। उस समय म्युनिसिपैलिटियों और लोकल बोर्डों में पृथक् निर्वाचन का तरीका जारी होने की बात चल रही थी। युक्तप्रान्त में, जहाँ कि पृथक् निर्वाचन नहीं था, यह पाया गया कि संयुक्त निर्वाचन में मुसलमानों की सख्या कुल आबादी की ¦ होते हुए भी जिला-बोर्ड में मुसलमान १८६ और हिन्दू ४४५ चुने गये और म्युनि-सिपैलिटियों में मुसलमान ३१० और हिन्दू ५६२। एक 'बर्न' सरक्यूलर निकला था जो कि स्थानिक संस्थाओं में जातिगत प्रतिनिधित्व के पक्ष में था। उसमें यह प्रतिपादन किया गया था कि मुसलमानों को पृथक् निर्वाचन के अलावा संयुक्त निर्वाचन में भी राय देने की सुविधा होनी चाहिये, क्योंकि इससे दोनों जातियों में अच्छे ताल्लुकात कायम रखने में मदद मिलेगी। इस पर पण्डित बिशननारायण दर ने जो कि १६११ में कलकत्ता काँग्रेस के सभापति थे, कहा था कि "मैं इतना ही कहूंगा कि हमारी एकता बढ़ाने की यह उत्कण्ठा, हमारे भोलेपन से, बहुत भारी हुण्डी लिखवा लेना है।" उन्होंने यह भी बताया कि "जब सर डब्ल्यू. एम. वेडर वर्न और सर आगाखाँ की सलाह के अनुसार दोनों

जातियों के प्रतिनिधि एक साल पहले इलाहाबाद में मिलने वाले थे, इस उद्देश्य से कि आपस के मतभेद मिटा दिये जायँ, तब एक गोरे अखबार ने, जोकि सिविल सर्विस वालों का पत्र समझा जाता है, लिखा था कि "ये लोग क्यों इन दोनों जातियों को मिलाना चाहते हैं, सिवा इसके कि दोनों जातियों को मिला कर सरकार का विरोध किया जाय ?' उसका यह वाक्य भारत की राजनीतिक परिस्थिति पर एक भयानक प्रकाश डालता है।"

डॉक्टर पट्टाभि सीतारामय्या ने मिण्टो-मोर्ले सुधार योजना तथा तत्कालीन परिस्थिति की जो विवेचना की है, उससे दो बातें स्पष्टतया ज्ञात हो जाती हैं। एक तो यह कि मिण्टो-मोर्ले योजना हिन्दू जाति के विरुद्ध एक भयानक षड़यन्त्र था, जिसमें अल्प संख्यक मुस्लिम जाति को निर्वाचन सम्बन्धी पक्षपातपूर्ण सुवि-धाएँ तथा संख्या से अधिक पृथक् प्रतिनिधित्व और पृथक् निर्वा-चक संघ देकर बहु-संख्यक हिन्दू जाति के विरोध में बराबरी के नाते ऊँचा उठाने की क़ानूनी कोशिश की गई थी। दूसरे यह कि काँग्रेस हिन्दू दृष्टिकोण से इतनी अधिक निकम्मी संस्था थी कि जिस हिन्दू-हित-घातक सम्पूर्ण योजना का विरोध शक्ति के अभाव के कारण काँग्रेस नहीं कर सकती थी, उसमें हिन्दुओं के न्यायोचित अधिकारों की रक्षा के लिए हिन्दू-हित की दृष्टि से कम से कम कुछ संशोधन पेश करने की इच्छा प्रकट करने वालों को काँग्रेस के क्षेत्र में "संकीर्ण-बुद्धि के राजनीतिज्ञ" समझा जाता था और समझा जाता है। बंगाल तथा पंजाब के अल्प-

संख्यक हिन्दुओं को वे विशेषाधिकार, जो अल्प-संख्यक मुस्लिम जाति को मिले थे, दिये जाने की माँग न्यायोचित थी, पर ऐसी माँग करने की बात सोचनेवालों को 'संकीर्ण बुद्धि के राज-नीतज्ञ' लिख कर डॉक्टर पट्टाभि सीतारामय्या ने अपने तथा अन्य काँग्रेस के नेताओं के विशाल (?) हृदय का परिचय दिया है। काँग्रेसी नेताओं की इस विचार-प्रणाली से प्रत्येक सरकारी योजना में हिन्दू-हितों की उपेक्षा होती रही है।

काँग्रेस को चाहिए था कि वह मिण्टो-मोर्ले योजना का प्रबल विरोध करती, पर चूँकि मुसलमान इस राष्ट्र द्रोही योजना के पक्ष में थे, इसलिए काँग्रेस ने इस साम्प्रदायिक योजना का विरोध नहीं किया। काँग्रेस ने अपने राष्ट्रीय जीवन में यह बड़ी भूल की। इस योजना से भारत की राजनीति में साम्प्रदायिकता का भूत प्रविष्ट हुआ और यह भूत आज भी भारत की राष्ट्रीयता तथा प्रजातन्त्र के सिद्धान्तों का गला घोंट रहा है। काँग्रेस की इस मुस्लिम-पोषक तथा हिन्दू-हित-विघातक नीति की ओर पंजाब के लाला लालचन्द जी का ध्यान आकर्षित हुआ। आपने समझ लिया कि काँग्रेस के हाथों में हिन्दुओं के हित-सम्बन्ध सुरक्षित नहीं हैं। लाला लालचन्द जी ने १९०७ में लाहौर में एक हिन्दू सम्मेलन का आयोजन किया। उस सम्मेलन में लाला जी ने यह विचार पेश किया कि हिन्दुओं को अपने अधिकारों की रक्षा के लिए अपना स्वतन्त्र संगठन बनाना चाहिये। इसके फलस्वरूप १९१० में महामना पण्डित मदनमोहन मालवीय जी

की अध्यक्षता में अखिल भारतीय हिन्दू महासभा का प्रथम अधिवेशन प्रयाग में हुआ। हिन्द महासभा की जन्म-कथा केवल इसलिये दी गई है कि सरकार, कांग्रेस, मुस्लिम लीग और हिन्दू महासभा का सम्बन्ध स्पष्टतया समझ में आ जाय।

सरकार, कांग्रेस और लीग के विरूद्ध

हिन्दू महासभा

मुझे इस बात में तनिक भी सन्देह नहीं है कि कांग्रेस ने अराष्ट्रीय तथा अलोकतन्त्रीय पृथक् निर्वाचन को मान कर ग़लती की। यदि हमने दिलेरी के साथ पृथक् निर्वाचन के अराष्ट्रीय तथा अलोकतन्त्रीय सिद्धान्त को मानने से इन्कार कर दिया होता, तो आज के बहुत से झगड़े बचाये जा सकते थे।

—आचार्य कृपलानी

पृथक् निर्वाचन प्रणाली तथा साम्प्रदायिक राजनीति राष्ट्र के लिये घातक है। मुस्लिम लीग की प्रत्येक साम्प्रदायिक माँग को स्वीकार करके कांग्रेस स्वयं साम्प्रदायिक संस्था बनती जा रही है। देसाई-लियाक़त अली पैक्ट कांग्रेस की राजनीति पर कलंक है। एक कांग्रेस-भक्त होने के नाते मैं शिमला कन्फ्रेन्स पर लज्जित हूं। —यू० पी० असेम्बली के स्पीकर,

माननीय बाबू पुरुषोत्तमदास टण्डन

बहु-संख्यक जाति ने अल्प-संख्यक जाति के सामने इतना अधिक आत्म-समर्पण किया हो, इसकी संसार के किसी भी देश में कोई मिसाल नहीं मिलती। —यू० पी० के प्रधान मन्त्री,

पण्डित गोविन्दवल्लभ पन्त

अल्प-संख्यक जाति को धार्मिक तथा सांस्कृतिक संरक्षण अवश्य ही मिलना चाहिये, पर उसको राजनीतिक संरक्षण देने का अर्थ है राष्ट्र के राष्ट्रीय जीवन में फूट। १६०६ के मिण्टो-मोर्ले सुधार योजना का विरोध न करके कांग्रेस फूट की योजना से सहमत हो गई। कांग्रेस और आगे बढ़ी। कांग्रेस के नेताओं ने सोचा कि सरकार मुसलमानों के पृथक् निर्वाचक संघ को स्वीकार कर ही चुकी है और चूँकि मुसलमान उससे खुश हैं, इसलिये हम उसका विरोध भी नहीं कर सकते। इसलिये क्यों न साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व के आधार पर ही मुसलमानों से मेल-जोल पैदा किया जाय? हाँ कुछ ऐसा ही सोचा होगा। इसलिये कांग्रेस ने मुसलमानों की मित्रता खरीदने के लिये १६१६ में लखनऊ अधिवेशन के अवसर पर मुस्लिम लीग से एक समझौता किया, जो लखनऊ-पैक्ट के नाम से प्रसिद्ध है। इस समझौते के अनुसार प्रान्तीय कौन्सिलों में मुसलमानों को जितनी सीटें मिलीं, उनका ब्यौरा नीचे की तालिका में दिया है।

प्रान्त	१६११ की जनगणना के अनुसार मुसलमानों की प्रतिशत संख्या	लखनऊ समझौते से मुसलमानों को मिली हुई प्रतिशत सीटें
बंगाल	५२.७	४०
पंजाब	५४.८	५०
यू० पी०	१४	३०
बिहार ओरिसा	१०.६	२५
मद्रास	६.७	१५
बंबई सिन्ध	२०.४	३३⅓
मध्यप्रांत	४.१	१५

ऊपर की तालिका देखने से स्पष्टतया मालूम हो जाता है कि लेन-देन के तौर पर यह समझौता हुआ है। इसके अनुसार मुसलमानों को असेम्बली में एक तिहाई स्थान दिये गये और यह मान लिया गया था कि इनका निर्वाचन मुसलानों के पृथक् निर्वाचन संघ से हो।

हम यह मानते हैं कि इस समझौते से लेन-देन की दृष्टि से यद्यपि मुसलमानों को विशेष प्रतिनिधित्व (Weightage)

अधिक मिला है, तथापि उससे हिंदुओं के अधिकारों की विशेष हानि नहीं हुई है। हमारा विरोध केवल इसलिए है कि इस समझौते ने राष्ट्रीयता तथा लोकतंत्र के मौलिक सिद्धाँतों पर चोट की है। मुसलमानों के पृथक् प्रतिनिधित्व तथा पृथक् निर्वाचन संघ को सरकार पहले ही स्वीकार कर चुकी थी। अब इस राष्ट्र-विघातक योजना पर काँग्रेस को 'राष्ट्रीय' मुहर लग गई। सरकार ने तो 'विभाजन तथा शासन' की नीति से मुसलमानों को पृथक् प्रतिनिधित्व दिया था। राष्टीय होने के नाते काँग्रेस की नीति सरकार की नीति के विरुद्ध होनी चाहिये थी, पर हुआ यह कि काँग्रेस की नीति सरकार की 'विभाजन तथा शासन' की नीति में सहायक हो गई। सरकार को राष्ट्र-द्रोही नीति और काँग्रेस की राष्ट्रीय नीति में कोई अंतर न रहा। इससे अन्य अल्प-मतों में पृथक् प्रतिनिधित्व के राष्ट्रद्रोही विचार पैदा होने लगे। इसका अनिवार्य परिणाम यह हुआ कि १९१९ के मांटेग्यु-चेम्सफर्ड सुधार योजना में लखनऊ पैक्ट काँग्रेस की अपेक्षा अधिक उदारतापूर्वक शामिल कर ही लिया गया, पर साथ ही उसमें विभिन्न पृथक् निर्वाचक संघों को मान्यता दी गई। इस प्रकार सरकार को काँग्रेस के नाम पर साम्प्रदायिकता को प्रोत्साहन देने के लिये लखनऊ पैक्ट का बहाना मिल गया।

कांग्रेस के इतिहास में १९२० से गाँधी-युग शुरू होता है। गाँधीजी ने कांग्रेस में आते ही हिन्दू-मुस्लिम एकता का नारा बुलन्द किया। गाँधीजी ने कहा "जब तक हिन्दू-मुस्लिम एकता नहीं

होती, तब तक भारत स्वतन्त्र नहीं हो सकता।" इससे मुसलमानों का मूल्य पहले से अधिक बढ़ गया। १६१६ में महायुद्ध समाप्त हुआ। मित्रराष्ट्रों ने तुर्की की राजनीतिक सत्ता को छिन्न-भिन्न कर दिया। तुर्की के सुलतान को सारे मुसलमान खलीफा मानते थे। खिलाफत के प्रश्न से मुसलमानों में जोश की लहर दौड़ गई। उनको आन्दोलन करने के लिये हिन्दुओं की सहायता की आवश्यकता थी। इसलिये मुसलमान कांग्रेस में घुस पड़े। मुसलमानों के कांग्रेस में आ जाने से गाँधीजी तथा अन्य हिन्दू कांग्रेसी नेता बड़े प्रसन्न हुए और उन्होंने खिलाफत के प्रश्न को भारत का प्रश्न बना लिया।

गाँधीजी ने खिलाफत आन्दोलन चलाने के लिये लाखों का फण्ड इकट्ठा किया और साम्प्रदायिक वृत्ति के मुसलमानों को संगठित करने में वह पैसा खर्च किया। उधर राष्ट्रीय-वृत्ति के अतातुर्क कमालपाशा ने मजहबी खिलाफत को तुर्की के राष्ट्रीय विकास में बाधक समझकर खलीफा को देश-निकाला दे दिया। शक्ति और सत्ता के सामने मजहबी जोश कर ही क्या सकता है? भारतीय मुसलमान कमालपाशा का तो कुछ बिगाड़ नहीं सकते थे, इसलिये उन्होंने अपना मजहबी जोश हिन्दू जाति पर ही उतारा। १६२१ में मालाबार के मोपलों ने हिन्दू जाति पर जो अत्याचार किये, उनका वर्णन पढ़कर हृदय रो पड़ता है। खिलाफत आन्दोलन से मुसलमानों का मजहबी जोश बढ़ गया। मौलाना महम्मद अली ने तो अफगानिस्तान के अमीर अमानुल्ला को

पत्र लिख कर भारत में इस्लामी राज्य स्थापित करने की सलाह दी थी। गाँधीजी भी प्रकारान्तर से इस सलाह से सहमत थे। ४ मई १९२१ के यंग इण्डिया में गाँधी जी लिखते हैं—"I would in a sense, certainly assist the Amir of of Afghanistan if he waged war against the British Government. That is to say, I would openly tell my contrymen that it would be a crime to help the Government which had lost the confidence of the nation to remain in power." इसमें कोई सन्देह नहीं कि ब्रिटिश सरकार से असहयोग की भावना से प्रेरित होकर ही गाँधीजी ने यह वक्तव्य प्रकाशित किया, पर प्रकारान्तर से अमीर की मदद करने की विचारधारा का मुसलमानों पर विपरीत प्रभाव पड़ा। अदूरदर्शी मुसलमान सचमुच ही भारत में इस्लामी राज्य का स्वप्न देखने लगे। हिन्दू स्त्री-पुरुषों पर पाशविक अत्याचार करनेवाले मालाबार के मोमला विद्रोह के नेता अली मुसलियार ने कहा था—"हिन्दू और मुसलमानों की स्थायी एकता का यही मार्ग है कि सारे हिन्दुओं को मुसलमान बना दिया जाय। जो हिन्दू मुसलमान बनने से इन्कार करते हैं वे हिन्दू-मुस्लिम एकता के शत्रु हैं। ऐसे हिन्दू देशद्रोही हैं और कत्ल करने के योग्य हैं।" यह था गाँधी जी के खिलाफत-आन्दोलन का विपरीत परिणाम। खिलाफत-आन्दोलन ने मुसलमानों में पॅन इस्लामिज्म की भावना को बढ़ाया।

खिलाफत-आन्दोलन के बाद मुस्लिम लीग ने लखनऊ पैक्ट को मानने से इन्कार कर दिया। फिर एकता सम्मेलनों की धूम सी मच गई। गाँधीजी झुकते जाते थे और मि० जिन्ना अकड़ते जाते थे। कांग्रेस दीनतापूर्वक मुस्लिम लीग का पल्ला पकड़ती जाती थी और मुस्लिम लीग कांग्रेस को ठुकराती जाती थी। मि० जिन्ना गाँधीजी तथा कांग्रेस की कमजोरी को भली भांति समझ गये थे और इसलिये वे अपनी माँगों को इस प्रकार बढ़ाने लगे कि समझौता होने ही न पाये। १६३२ में लण्डन में गोल-मेज कान्फ्रैन्स हुई। गाँधीजीने मुसलमानों को कोरा चेक दिया कि आप इस पर जो कुछ लिख देंगे मैं मान लूँगा। मि० जिन्ना जानते थे कि ब्रिटिश सरकार से सहयोग करने से मुसलमानों को जो कुछ मिल सकता है, वह कांग्रेस से नहीं। मि० जिन्ना ने गाँधीजी के चेक को ठुकरा दिया। फिर आगाखाँ आदि नेताओं से गुप्तरूप से हिन्दू-मुस्लिम समझौते की बातें होने लगीं। एक दिन समझौते की कुछ सम्भावना होगई थी, पर कूटनीतिज्ञ अंग्रेजों ने इस समझौते को ब्रिटिश साम्राज्यवाद के लिये घातक समझ कर मुसलमानों को $33\frac{1}{3}$ प्रतिनिधित्व देने का आश्वासन दिया और इस प्रकार मुसलमानों को अपनी ओर कर लिया। मुसलमानों को अपना हित प्यारा था, भारत की स्वतंत्रता नहीं। इस प्रकार सरकार और मुस्लिम लीग का गठबंधन हो गया।

इस गठबंधन पर गोलमेज परिषद् के व्यापारिक प्रधिनिधि मि० बेन्थल तथा उनके राजभक्त साथियों ने जो 'गुप्त गश्ती-पत्र'

प्रचारित किया था, उससे भली भांति प्रकाश पड़ता है। डॉक्टर पट्टाभि सीतारामय्या ने 'कांग्रेस का इतिहास' में इस गश्तीपत्र का उल्लेख किया है। उसके कुछ उद्धरण नीचे दिये जाते हैं :-

"गोलमेज परिषद् में मुसलमानों का दल बहुत ठोस और मजबूत रहा। यहाँ तक कि राष्ट्रीय मुसलमान कहे जाने वाले अली इमाम भी उससे बाहर नहीं रहे। शुरू से आखिर तक बड़ी होशियारी के साथ मुसलमानों ने खेल खेला। हमारा समर्थन करने का उन्होंने वादा किया था, जिसे उन्होंने पूरी तरह निभाया। बदले में उन्होंने हमसे कहा कि बंगाल में उनकी जो बुरी हालत है, उस पर हम ध्यान दें। उनकी ज्यादा लल्लो-चप्पो करने की तो जरूरत नहीं, पर अंग्रेजी फर्मों में हमें उनको जगह देने का प्रयत्न करना चाहिये, जिससे वे अपनी माली हालत और अपनी जाति की सामान्य स्थिति को ठीक कर सकें।...... हमें यह भी निश्चय हो गया था कि काँग्रेस के साथ लड़ाई अनिवार्य है, तब हमने महसूस किया और कहा कि जितनी जल्दी वह शुरू हो जाय उतना ही अच्छा है। लेकिन इसके साथ ही हमने यह भी सोच लिया कि इसमें पूरी सफलता तभी मिल सकती है, जब कि जितने हो सकें, उन सब मित्रों को अपने पक्ष में कर लें। मुसलमान तो हमारे साथ थे ही, जैसा कि अल्प-संख्यक समझौते और मुसलमानों के प्रति सरकार के सामान्य रुख से स्पष्ट था। यही हाल राजाओं और दूसरी अल्प-संख्यक जातियों का था।

मुसलमान तो अंग्रेज़ों के पक्के दोस्त हो ही गये हैं। अपनी स्थिति से उन्हें पूरा संतोष है और वे हमारे साथ काम करने को तैयार हैं।"

इस गश्ती-पत्र की आलोचना करते हुए डॉक्टर पट्टाभि सीतारामय्या लिखते हैं—"गोलमेज-परिषद् के समय की गई सेवाओं के पुरस्कार स्वरूप अपने को भारत के किसी प्रदेश का राजा बनाने की सर आग़ा ख़ाँ की माँग से, जिसका कि हाल ही में असेम्बली में रहस्योद्‌घाटन हुआ, इस सौदे का नग्न स्वरूप बड़े वीभत्स रूप में सामने आया है। लेकिन यह विश्वास करना ग़लत होगा कि उन्नति-विरोधी मुसलमानों के, जो कि अपने थोड़े से स्वार्थ के लिये अपने देश को बेचने के लिये तैयार थे, और हिन्दुस्तानियों को हमेशा गुलाम बनाये रखने के इच्छुक उन्नति-विरोधी-ब्रिटिशों के बीच जो समझौता हुआ, वह एकाएक ही हो गया। उसकी नींव तो गोलमेज-परिषद् के दूसरे अधिवेशन से कहीं पहले हिन्दुस्तान और इंग्लैण्ड दोनों जगह रक्खी जा चुकी थी। सच तो यह है कि जब गाँधी जी और लार्ड अर्विन के बीच समझौता हुआ तो उसके बाद ही भारत में उन सब उन्नति-विरोधी लोगों ने, जो समझौते को पसन्द नहीं करते थे, शीघ्रता के साथ अपनी शक्तियों को संगठित किया और भारतीय राष्ट्रवादियों को शिकस्त देने के लिये अपना सम्मिलित गुट बना दिया था।"

सरकार-लीग गठबंधन के फलस्वरूप प्रधान मंत्री रेम्जे

मैक्डोनाल्ड ने १६३२ में 'साम्प्रदायिक निर्णय' (Communal Award) की घोषणा कर दी। यह साम्प्रदायिक निर्णय भारत की एकता तथा राष्ट्रीयता पर जबर्दस्त आघात था। ब्रिटिश साम्राज्यवाद के संचालकों ने यह एक ऐसी चाल चली थी कि भारत के सभी साम्प्रदायों में समझौता कभी हो ही न सके। इसने राष्ट्रीयता के टुकड़े-टुकड़े कर दिये। हिंदू, मुसलमान, सिक्ख, ईसाई, एंग्लोइण्डियन, अछूत आदि सब को पृथक्-पृथक् कर दिया गया। इस निर्णय के अनुसार सिंध को बम्बई से पृथक् कर दिया गया और सीमा प्रांत में प्रातिनिधिक शासन प्रणाली प्रचलित की गई। ब्रिटिश भारत में पहले पंजाब और बंगाल ये दो मुस्लिम बहुमत प्राँत थे। अब सिंध और सीमा प्रांत मिलकर चार हो गये। केन्द्र में मुसलानों को एक तिहाई प्रतिनिधित्व प्राप्त हुआ। लखनऊ पैक्ट में लेन-देन के तौर पर पंजाब और बंगाल इन दो मुस्लिम बहुमत प्रांतों में अल्पमत हिंदुओं को जो विशेष प्रतिनिधित्व (Weightage) दिया गया था उसको अस्वीकार कर दिया गया, पर बम्बई, मद्रास, यू० पी० तथा मध्यप्रान्त इन हिंदू बहुमत प्रांतों में अल्पमत मुसलमानों को जो अधिक प्रतिनिधित्व दिया गया था उसे ज्यों का त्यों रक्खा गया। बिहार और ओरिसा में भी मुसलमानों को अधिक प्रतिनिधित्व दिया गया। सिक्खों को कम प्रतिनिधित्व दिया गया, पर एंग्लोइण्डियन और यूरोपिअनों को उनकी संख्या से अधिक प्रतिनिधित्व दिया गया। डा० अम्बेडकर ने

अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "Thoughts on Pakistan" में ठीक ही लिखा है—"The Award gave the Muslims all that they wanted without caring for the Hindu opposition." अर्थात् "हिंदुओं के विरोध की बिल्कुल परवाह न करके इस साम्प्रदायिक निर्णय ने मुसलमानों की सब मांगें स्वीकार कर लीं।" यह स्पष्ट है कि यह 'निर्णय' सरकार ने मुसलमानों को खुश करने और उनको अपने पक्ष में बनाये रखने के लिये किया था।

काँग्रेस राष्ट्रीय संस्था कहलाती थी। यह काँग्रेस की राष्ट्रीयता की परीक्षा का समय था। सरकार फूट पैदा करने की नीति पर चलना चाहती थी। मुस्लिम लोग अपना साम्प्रदायिक स्वार्थ सिद्ध करना चाहती थी। राष्ट्रीयता की थोड़ी बहुत लाज बचाने के लिये काँग्रेस का यह कर्तव्य था कि वह सरकार और मुस्लिम लीग की स्वार्थान्धता का निषेध करके साम्प्रदायिक निर्णय का प्रबल विरोध करती, परन्तु काँग्रेस ने ऐसा नहीं किया। चूँकि मुसलमानों ने इस निर्णय को पसंद किया था इसलिये काँग्रेस ने इसका विरोध नहीं किया। काँग्रेसी मुसलमान भी निर्णय के पक्ष में थे। २ जून १९३६ को प्रकाशित अपने एक वक्तव्य में पं० जवाहरलाल नेहरू ने कहा था—"It has been a matter of great surprise and regret to me that many of our friends and comrades who have stood for Indian Indepen-

dence should so approve of this pernicious decision." अर्थात् "मेरे लिये यह बड़े आश्चर्य और दुःख की बात है कि हिन्दुस्तान की स्वतन्त्रता की आवाज़ बुलंद करनेवाले हमारे मुसलमान मित्र और साथी इस घृणित तथा घातक साम्प्रदायिक निर्णय पर इस प्रकार का समाधान प्रकट कर रहे हैं।"

काँग्रेस के नेता साम्प्रदायिक निर्णय की सभी बुराइयों को भली भाँति जानते थे, पर हाय री कमजोरी! काँग्रेस इस राष्ट्र-विघातक निर्णय को स्वीकार भी न कर सकी और मुसलनानों को खुश करने की नीति के कारण अस्वीकार भी न कर सकी। और इसलिये काँग्रेस ने "Neither accept nor reject." अर्थात् "कांग्रेस निर्णय को न तो स्वीकार करती है और न अस्वीकार"—इस प्रकार की नपुंसक नीति का अवलंबन किया। काँग्रेस की यह कमजोर नीति आखिर सरकार की 'विभाजन और शासन' की नीति में सहायक हो गई। लोक नायक अणे और महामना मालवीयजी ने काँग्रेसी नेताओं पर बहुत जोर डाला कि निर्णय को अस्वीकार कर दें, पर नेताओं के कान पर जूँ तक नहीं रेंगी। सेन्ट्रल असेम्बली में केवल महासभा के नेता भाई परमानन्द ने निर्णय का विरोध किया। कांग्रेसी मेम्बर तटस्थ रहे। धारा सभा ने पार्लामेण्ट को सूचित किया कि भारत ने निर्णय को स्वीकार किया है। काँग्रेस की मुस्लिम-पोषक नीति से नाराज होकर लोकनायक अणे और महामना

मालवीय जी कांग्रेस से अलग हो गये। डॉ० मुंजे और भाई परमानन्द हिन्दू महासभा का मत प्रकट करने और निर्णय का विरोध करने के लिये लंदन गये, पर परिस्थिति प्रतिकूल होने से आपके प्रयत्न सफल न हो सके।

साम्प्रदायिक निर्णय के सम्बन्ध में कॉंग्रेस की गलत नीति की आलोचना करते हुये पंडित जवाहरलाल नेहरू अपने ज़ीवन-चरित्र में लिखते हैं—"यह उस (कॉंग्रेस) की पिछली तटस्थता की नीति का या यों कहो कि कमजोर नीति का लाजिमी परिणाम था। शुरू से ही मजबूत नीति अख्तियार की जाती और बिना किसी तात्कालिक परिणाम की चिन्ता किए उसका पालन करते रहना अधिक शानदार और सही तरीका होता।" हम पण्डित जी को धन्यवाद देते हैं कि आपने अपनी और कॉंग्रेस की कमज़ोरी को खुले शब्दों में स्वीकार किया है, परन्तु हमें पण्डित जी से शिकायत है कि आप अपनी और कॉंग्रेस की ग़लत और कमज़ोर नीति को अनुभव करते हुए भी मजबूत नीति को क्यों नहीं अपनाते? 'अधिक शानदार और सही तरीक़ा' कार्य रूप में क्यों नहीं परिणत करते? दुःख है कि पण्डित जी जैसे प्रभावशाली नेता की हुई ग़लती को सुधारने में अपने को असमर्थ पाते हैं और उसके फलस्वरूप कॉंग्रेस की कमज़ोर नीति को ही आगे बढ़ाते चले जा रहे हैं। कॉंग्रेसी नेताओं की पराजित मनोवृत्ति और कमज़ोर नीति का परिणाम यह हुआ कि मि० जिन्ना और उनके अनुयायी इस बात को

भली भाँति समझ गये कि काँग्रेसी नेता मुस्लिम लीग की किसी भी माँग का विरोध नहीं कर सकते। इधर सरकार भी समझ गई कि वह मुसलमानों को जो कुछ भी देगी, उसका काँग्रेस डट कर विरोध नहीं कर सकती। हाँ, साम्प्रदायिक निर्णय के सम्बन्ध में काँग्रेस की समज़ोरी का ऐसा ही राष्ट्र-विघातक परिणाम हुआ इससे मुसलमानों की साम्प्रदायिकता को प्रोत्साहन मिला और उनका हौसला भी बढ़ गया। इसके फलस्वरूप ही १६४० में मुस्लिम लीग ने पाकिस्तान की माँग पेश की।

इधर हमारे तटस्थ वृत्ति के अनुयायी-हीन निर्दल हिन्दू नेता भी काँग्रेस की कमजोर नीति और पराजित मनोवृत्ति के शिकार हो रहे हैं। सप्रू कमेटी की योजना इस बात का प्रमाण है। सप्रू कमेटी ने सिफ़ारिश की है कि केन्द्रीय धारा सभा के १६० स्थानों में से ५१ सवर्ण हिन्दुओं को और ५१ मुसलमानों को दिये जायें। हिन्दुस्थान में ६० प्रति शत सवर्ण हिन्दू हैं और २३ प्रति शत मुसलमान। सवर्ण हिन्दू और मुसलमानों की संख्या में इतना अधिक अन्तर होते हुए भी उनकी समता (Parity) की सिफारिश सप्रू कमेटी ने किस राजनीतिक मौलिक सिद्धान्त के आधार पर की? केवल इसलिये कि मुसलमानों की बढ़ती हुई साम्प्रदायिक मनोवृत्ति को खुश किया जाय? आग में घी डालने से आग शान्त नहीं होती—इस बात को न तो काँग्रेस समझी और न सप्रू कमेटी। और दोनों ने आग को बढ़ाने में सहायक का काम किया है। पराजित मनोवृत्ति से

ऐसी मुस्लिम-पोषक बातें बनाने का परिणाम आगे चल कर घातक सिद्ध होता है। देसाई-लियाकतअली पैक्ट इसका प्रमाण है। स्वर्गीय भूलाभाई देसाई ने वायसराय की कार्य-कारिणी समिति (Executive Council) में काँग्रेस और मुस्लिम लीग के समान प्रतिनिधित्व (Parity) के आधार पर मुस्लिम लीग के सेक्रेटरी मि० लियाकतअली से गुप्त समझौता किया। इस समझौते का मुख्य उद्देश्य काँग्रेस की वर्किंग कमेटी के सदस्यों को रिहा कराना था। यह योजना वायसराय लार्ड वेवल के पास पहुँची। इसी के आधार पर वेवल योजना (The Wavell Plan) का निर्माण हुआ। इसमें विदेश, अर्थ और गृह विभाग भारतीय सदस्यों को सौंपने का लालच दिया गया था और काँग्रेस को सवर्ण हिन्दू संस्था मान कर मुस्लिम लीग के बराबर प्रतिनिधित्व देने का षडयंत्र किया गया था। २ जून १९४५ को वायसराय महोदय ने ब्राडकास्ट (Broadcast) भाषण में कहा—"The Proposed new Council would represent the main communities and would include equal Proportions of Caste Hindus and Muslims." अर्थात् "प्रस्तावित नई कौन्सिल प्रमुख जातियों का प्रतिनिधित्व करेगी और इसमें सवर्ण हिन्दू और मुसलमान सदस्यों की संख्या समान होगी।"

उपर्युक्त योजना को काँग्रेस ने स्वीकार किया। 'भारत छोड़ दो' का जोशीला प्रस्ताव पास करके तीन साल जेल में बंद रहने

के बाद काँग्रेसी नेताओं का सवर्ण हिन्दू संस्था के प्रतिनिधियों की हैसियत से वेवल योजना को स्वीकार करने के लिये शिमला पहुँचना राष्ट्रीयता तथा लोकतंत्र की दृष्टि से काँग्रेस के अत्यधिक पतन का परिचायक था। मान्य काँग्रेसी नेता और यू० पी० असेम्बली के स्पीकर माननीय बाबू पुरुषोत्तमदास टण्डन ने शिमला कान्फ्रेन्स के सम्बन्ध में कहा था—"पृथक् निर्वाचन प्रणाली तथा साम्प्रदायिक राजनीति राष्ट्र के लिये घातक है। मुस्लिम लीग की प्रत्येक साम्प्रदायिक माँग को स्वीकार करके कांग्रेस स्वयं साम्प्रदायिक संस्था बनती जा रही है। भूलाभाई-लियाकतअली समझौता काँग्रेस की राजनीति पर कलंक है। एक काँग्रेस भक्त होने के नाते मैं शिमला कान्फ्रेन्स पर लज्जित हूँ।" सचमुच ही भारत में ६० प्रतिशत सवर्ण-हिन्दू और २३ प्रतिशत मुसलमानों में समान प्रतिनिधित्व (Parity) का सिद्धान्त स्वीकार किया जाना हिन्दुओं के लिये लज्जा की ही बात है। जब हिन्दू महासभा के नेता ऐसी हिन्दू-विरोधी योजना का विरोध करते हैं, तो उनका सम्प्रदायवादी कह कर उपहास किया जाता है। हिन्दू महासभा ने भारत भर में निषेध-सप्ताह मना कर वेवल-योजना का निषेध तथा विरोध किया था। शिमला कान्फ्रेन्स के अवसर पर काँग्रेस वर्किंग कमेटी के भूतपूर्व सदस्य तथा यू० पी० के प्रधान मंत्री पण्डित गोविन्दवल्लभ पंत ने कहा था—"बहुमत जाति ने अल्पमत जाति के सामने इतना अधिक आत्म-समर्पण किया हो, इसकी संसार के किसी

भी देश में कोई मिसाल नहीं मिलती।' काँग्रेस की इतनी गिरावट के बाद भी मि० जिन्ना इस बात पर अड़ गये कि सभी मुस्लिम सदस्यों का निर्वाचन करने का अधिकार मुस्लिम लीग को ही मिलना चाहिये। काँग्रेस ने ५ मुस्लिम सदस्यों में कम से कम १ काँग्रेसी मुसलमान शामिल किये जाने पर ज़ोर दिया, पर मि० जिन्ना न माने। इस प्रकार कान्फ्रेन्स उजड़ गई। यह सब कुछ इसलिये लिखा गया है कि पाठक समझें कि हवा का रुख किधर है।

२४ मार्च १६४६ को ब्रिटिश मंत्रिमण्डल मिशन (Cabinet Mission) भारत आया। कांग्रेस और मुस्लिम लीग में समझौता न होने से मिशन और वायसराय ने अपना ही 'सरकारी समझौता' हिन्दुस्थानियों पर लादा। मिशन ने १६ मई १६४६ को दीर्घकालीन-योजना अर्थात् विधान परिषद् (Constituent Assembly) की रूप-रेखा तथा अधिकार सम्बन्धी योजना पेश की, जिसकी विवेचना आगे चल कर की जायेगी। १६ जून १६४६ को मिशन ने अन्तःकालीन सरकार (Interim Government सम्बन्धी योजना की घोषणा की। अन्तःकालीन सरकार के सदस्य के तौर पर जिन व्यक्तियों को आमन्त्रित किया गया था, उनके नाम यहाँ दिये जाते हैं।

काँग्रेसी सवर्ण-हिन्दू—(१) पण्डित जवाहरलाल नेहरू, (२) श्री राजगोपालाचार्य, (३) डा० राजेन्द्रप्रसाद, (४) वल्लभभाई पटेल (५) श्री हरेकृष्ण मेहताब।

१ काँग्रेसी हरिजन (Scheduled Caste)—१ श्रीयुत् जगजीवनराम ।

लीगी मुसलमान—(१) मि० जिन्ना, (२) मि० लियाकत अली खान, (३) ख्वाजा सर निज़ामुद्दीन, (४) नवाब मुहम्मद इस्माईल खान, (५) सरदार अब्दुर्रब निश्तर ।

पारसी प्रतिनिधि—१ श्री एन० पी० इंजिनीयर ।

सिख ,, —१ सरदार बलदेवसिंह ।

ईसाई ,, —१ डा० जान मथाई ।

कहने की आवश्यकता नहीं है कि देसाई-लियाकत अली पैक्ट और वेवल योजना के सम्बन्ध में कांग्रेस की कमजोर नीति का अध्ययन करके ही मन्त्रिमण्डल मिशन और वायसराय महोदय ने यह योजना पेश की । पहली शिमला कान्फ्रेन्स के अवसर पर वायसराय ने यह आश्वासन दिया था कि वेवल योजना को अर्थात् सवर्ण हिन्दू और मुस्लिम समान प्रतिनिधित्व (Parity) को भविष्य के लिए मिसाल न बनाया जायेगा । कहा गया था कि यह तो युद्धकालीन अस्थायी योजना है । आज युद्ध समाप्त हो गया है । फिर भी वही बात । २५ करोड़ सवर्ण हिन्दुओं के ५ प्रतिनिधि, ६ करोड़ मुसलमानों के ५ प्रतिनिधि और ५ करोड़ अस्पृश्यों (Scheduled Caste) का १ प्रतिनिधि—यह हिसाब किस राजनीतिक सिद्धान्त के अनुसार किया गया है । इस योजना में सवर्ण और दलित हिन्दुओं के साथ अन्याय हुआ है ।

इस अन्तःकालीन सरकार के सम्बन्ध में कांग्रेस की ओर से जो आपत्तियाँ की गई थीं और जिन कारणों से कांग्रेस ने इस योजना को पहले अस्वीकार कर दिया था, उन पर कुछ लिखना आवश्यक प्रतीत होता है। कांग्रेस को चाहिये था कि साधारण आपत्तियाँ करने से पहले योजना के पक्षपातपूर्ण साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व का ही प्रबल विरोध करती, पर उसने ऐसा नहीं किया। कांग्रेस की आपतियाँ थीं—(१) श्री हरेकृष्ण मेहताब के स्थान पर श्रीयुत शरतचन्द्र बोस को क्यों नहीं लिया गया (२) सरकारी नौकर सर एन. पी. इन्जीनीयर को क्यों लिया गया। (३) चुनाव में हारे हुए सरदार अब्दुर्रब निश्तर को क्यों लिया गया। (४) एक कांग्रेसी मुसलमान क्यों नहीं लिया गया।

हमारा खयाल है कि वायसराय महोदय को मेहताब के स्थान पर बोस को और सर एन. पी. इंजिनियर के स्थान पर कोई दूसरा पारसी प्रतिनिधि नियुक्त करने में कोई विशेष आपत्ति नहीं हो सकती थी। कांग्रेस के थोड़ा जोर देने से ही यह सब कुछ हो सकता था। मुस्लिम लीग के प्रतिनिधि सरदार अब्दुर्रब का विरोध करने का कांग्रेस को कोई अधिकार न था, क्योंकि ऐसा करने से मुस्लिम लीग को भी कांग्रेस सदस्यों के सम्बन्ध में आपत्ति करने का अधिकार प्राप्त हो जाता। कांग्रेस की प्रमुख आपत्ति या माँग, जिसके अस्वीकार होने से योजना को अस्वीकार कर दिया गया, यह थी कि कांग्रेस को अपने सदस्यों में एक कांग्रेसी मुसलमान सम्मिलित करने का अधिकार दिया जाय।

अन्तःकालीन सरकार के सम्बन्ध में वायसराय लार्ड वेवल और मौलाना आज़ाद में जो पत्र-व्यवहार हुआ, उसमें लार्ड वेवल का अन्तिम पत्र, जो २२ जून १९४६ को मौलाना आजाद को लिखा गया था, पढ़ने से उपर्युक्त बात स्पष्टतया प्रमाणित हो जाती है। आप लिखते हैं—

My dear Maulana Sahib,—I understand from Press reports that there is a strong feeling in Congress circles that the party should insist on their right to include a Muslim of their own choice among the representatives of the Congress in the Interim Government.

For reasons, of which you are already aware, it is not possible for the Cabinet Mission or myselfto accept this request.

इस पत्र के जवाब में मौलाना आज़ाद ने वायसराय को सूचित किया था कि कांग्रेस को अन्तःकालीन सरकार का प्रस्ताब स्वीकार नहीं है।

पाठक समझ सकते हैं कि यदि कांग्रेस की उपर्युक्त माँग स्वीकार की जाती, तो अन्तःकालीन सरकार में ४ सवर्ण हिन्दू, १ दलित हिन्दू और ६ मुसलमान हो जाते। दलित समेत हिन्दुओं की संख्या ३० करोड़ है। ३० करोड़ हिन्दुओं के ५ प्रतिनिधि और ९ करोड़ मुसलमानों के ६ प्रतिनिधि—यह है कांग्रेस की राष्ट्रीय डिमोक्रेसी।

यह एक आश्चर्य की बात है कि मंत्रिमण्डल मिशन की सम्पूर्ण दीर्घकालीन योजना में किसी भी सम्प्रदाय को संख्या से अधिक प्रतिनिधित्व (Weightage) नहीं दिया गया है। उसमें '१० लाख का एक प्रतिनिधि' का सिद्धान्त स्वीकार किया गया है। अन्तःकालीन सरकार का निर्माण भी उसी सिद्धान्त के आधार पर होना चाहिये। हिन्दू राष्ट्रपति डॉ० श्यामाप्रसाद मुकर्जी का ब्रिटेन की मजदूर सरकार के प्रधान मंत्री मि० एटली और उनकी ब्रिटेन से प्रश्न है—"Would the labour Government, which has behind it the majority of British votes, accept parity with the Conservatives in the formation of their national Government ?"—क्या ब्रिटेन की बहुमत प्राप्त मजदूर सरकार अपनी राष्ट्रीय सरकार में अनुदार दल को समान प्रतिनिधित्व देना स्वीकार करेगी ? ब्रिटेन में तो बहुमत का शासन है। फिर यहाँ क्यों अल्पमत को बहुमत की बराबरी में बिठाया जा रहा है ?

मुस्लिम लीग ने दीर्घकालीन तथा अन्तःकालीन दोनों प्रस्तावों को स्वीकार किया था, पर चूँकि कांग्रेस ने अन्तःकालीन सरकार सम्बन्धी प्रस्ताव को स्वीकार न किया, इसलिये वायसराय महोदय ने २६ जून १९४६ को ८० फी सदी गोरों की कामचलाऊ सरकार (Caretaker Govrnment) की घोषणा कर दी। इससे मि० जिन्ना नाराज हुए। अन्तःकालीन सरकार में मुस्लिम

लीग का बोलबाला करने की उनकी आशा पूर्ण न हुई। मि० जिन्ना ने यह भी सोचा कि विधान परिषद् में मुस्लिम लीग की दाल गलना टेढ़ी खीर है। आखिर आपकी प्रेरणा से बम्बई में २६ जुलाई १६४६ को मुस्लिम लीग की अखिल भारतीय समिति ने मिशन के दीर्घकालीन तथा अन्तःकालीन दोनों प्रस्तावों को अस्वीकृत कर दिया और पूर्ण पाकिस्तान की माँग की। लीग द्वारा दीर्घकालीन तथा अन्तःकालीन सरकार की योजना अस्वीकृत कर दिये जाने पर वायसराय महोदय ने मिशन योजना के अनुसार अन्तःकालीन सरकार गठित करने के लिये कांग्रेस को निमंत्रित किया। मौलाना आज़ाद १८ अगस्त १६४६ को प्रकाशित अपने वक्तव्य में लिखते हैं—"यह सब को मालूम है कि पहले कांग्रेस ने अन्तःकालीन सरकार का निमंत्रण अस्वीकार कर दिया था। इस बार यह निमंत्रण बिना शर्त है और कांग्रेस इच्छानुसार किसी भी प्रकार का प्रस्ताव करने को स्वतंत्र है। लीग तथा अन्य अल्पमतों का सहयोग प्राप्त करने के लिये कांग्रेस मिशन प्रस्ताव के अनुसार ही अर्थात् ६ कांग्रेसी, ५ लीगी, ३ अल्प-संख्यक सहित १४ सदस्यों की सरकार बनाने को तैयार हो गई है।" इस प्रकार २ सितम्बर १६४६ को सवर्ण हिन्दू-मुस्लिम समान प्रतिनिधित्व के आधार पर ही केन्द्र में पण्डित जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता में कांग्रेसी अन्तःकालीन सरकार की स्थापना हो गई। भारत के कोने-कोने से खुशी प्रकट की गई। इस खुशी में हिन्दू महासभा भी शामिल है, पर हिन्दू-

महासभा के नेताओं का कांग्रेस से यह शिकायत है कि कांग्रेस के नेताओं ने चुनाव के दिनों में हिन्दू जनता को जो आश्वासन दिया था, उसका पालन नहीं किया। १४ जनवरी १९४६ को अहमदाबाद की सभा में सरदार पटेल ने कहा था—"हम अब शिमला में की हुई ग़लती की पुनरावृत्ति नहीं करेंगे।" हम ज़ोर देकर कहते हैं कि कांग्रेस ने शिमला में की हुई ग़लती की पुनरावृत्ति ही नहीं, प्रत्युत उससे भी बढ़ कर ग़लती की है। शिमला में तो ५ मुस्लिम प्रतिनिधियों में एक कांग्रेसी मुस्लिम शामिल किये जाने पर कांग्रेस ने ज़ोर दिया था और इसी लिये शिमला कांफ्रेन्स असफल हुई थी। अब कांग्रेस ने उस माँग को छोड़ कर सवर्ण हिन्दुओं को मिली हुई ५ सीटों में एक सीट कांग्रेसी मुसलमान को दिये जाने पर ज़ोर दिया है। एक राष्ट्रीय मुसलमान को अन्तःकालीन सरकार में अवश्य लिया जाना चाहिये, पर बहु-संख्यक के अधिकारों की हत्या करके नहीं।

मुस्लिम लीग ने १६ अगस्त १९४६ को 'खुला संघर्ष' दिवस मना कर कांग्रेसी सरकार अर्थात् हिन्दुओं के विरुद्ध विद्रोह प्रारम्भ कर दिया। कलकत्ता तथा नोआखली में मुस्लिम लीगी गुण्डों ने हिन्दुओं पर जो पाशविक अत्याचार किये, उनका वर्णन आगे के प्रकरण में किया जायेगा।

कांग्रेस समाजवादी दल की कार्य-समिति ने २२ सितम्बर १९४६ को एक प्रस्ताव में कहा है "यहाँ पर यह बता देना आवश्यक है कि जो लोग हमारे देशवासियों की हत्या कर रहे

हैं और देशवासियों के प्रभुत्व का विरोध कर रहे हैं, उन्हें संतुष्ट करने के प्रयास का अर्थ देश में वर्षों तक विदेशी प्रभाव को बनाये रखना होगा। देशवासियों को क्षति पहुँचा कर मुस्लिम लीग तथा नरेशों को सुविधायें देने से हमें कभी भी सफलता नहीं मिलेगी। साम्प्रदायिक दंगे की धमकी देने वालों को कभी भी सुविधा नहीं देनी चाहिये।"

समाजवादी दल की चेतावनी का कांग्रेस के नेताओं पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। फिर वायसराय महोदय के इशारे से नवाब भोपाल ने कांग्रेस-लीग समझौता करने का प्रयत्न प्रारम्भ किया, पर समझौता न हो सका। समझौते के सबध में जो जिन्ना-जवाहर पत्र-व्यवहार हुआ, उसमें १३ अक्टूबर १९४६ को पंडित जवाहरलाल नेहरू ने मि० जिन्ना को अन्तिम पत्र में लिखा है—"अब हमारी आपसी बातचीत की कोई आवश्यकता नहीं रह जाती, क्योंकि वायसराय ने मुझे सूचित किया है कि मुस्लिम लीग ने उनके निमंत्रण को स्वीकार करके अन्तःकालीन सरकार में शामिल होना स्वीकार किया है।"

खान अब्दुल गफ्फार खाँ ने १५ अक्टूबर १९४६ को बाबरी गाँव में भाषण देते हुए कहा—"अंग्रेज में ऊपर ऊपर से थोड़ा सा परिवर्तन हुआ है, लेकिन उसका दिल वही पुराना है और यदि उसमें कुछ परिवर्तन हुआ भी है, तो सिर्फ इतना कि वह मुस्लिम लीगी हो गया है। कारण यह है कि मुस्लिम लीगियों की तरह वह भी यह महसूस करता है कि उसकी ताकत कम हो

रही है। अन्तःकालीन सरकार में कांग्रेस की बढ़ती हुई ताकत से भयभीत होकर वायसराय ने अपने पुराने दोस्त मुस्लिम लीग का दरवाजा खटखटाया है, ताकि कांग्रेस के पाँव पीछे खींचने में लीग वायसराय की मदद करे। अगस्त क्रान्ति के वीर श्रीयुत जयप्रकाश नारायण ने १५ अक्टूबर १९४६ को पटना में भाषण देते हुए कहा—"अन्तःकालीन सरकार को असफल बनाने के लिये ही वायसराय ने लीग को अन्तःकालीन सरकार में सम्मिलित करने का प्रयत्न किया है, क्योंकि वे झगड़े का बीज बोना चाहते हैं और उसका जो परिणाम होगा, उससे वे संसार को बतलायेंगे कि भारतीय लोग शासन करने में अयोग्य हैं। हमें अन्तिम संघर्ष के लिए अपनी तैयारी जारी रखनी चाहिये।"

१५ अक्टूबर १९४६ को वायसराय भवन से यह विज्ञप्ति प्रकाशित हुई—"मुस्लिम लीग ने अन्तःकालीन सरकार में सम्मिलित होने का निश्चय कर लिया है और सम्राट् द्वारा अन्तःकालीन सरकार में निम्नलिखित (लीगी) सदस्यों की नियुक्ति की गई है—(१) मि० लियाकतअली खाँ, (२) मि० चुन्दरीगर, (३) मि० गजनफरअली खाँ, (४) मि० अब्दुरब निश्तर, (५) श्री जोगेन्द्रनाथ मण्डल (लीगी हरिजन)।

मन्त्रिमण्डल का पुनर्निर्माण सम्भव करने के लिये श्री शरतचन्द्र बोस, सर शफात अहमद खाँ और सैयदअली जहीर ने अपने पदों से इस्तीफे दे दिये हैं।

वर्तमान मन्त्रिमण्डल के सदस्य, जो सेवा करते रहेंगे, इस

प्रकार हैं:—पण्डित जवाहरलाल नेहरू, सरदार वल्लभ भाई पटेल, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, श्री आसफअली, श्री राजगोपालाचार्य, डॉ० जानमथाई, सरदार बलदेवसिंह, श्री जगजीवनराम व श्री भाभा।"

अन्तःकालीन सरकार में विभिन्न जातियों का प्रतिनिधित्व इस प्रकार है :-४ सवर्ण हिन्दू, ५ मुसलमान, २ हरिजन, ३ अल्पसंख्यक।

यदि लीग अपने कोटे के सदस्यों में बंगाल के दलित जाति के नेता श्री जोगेन्द्रनाथ मण्डल को सम्मिलित न करती, तो विभिन्न जाति का प्रतिनिधित्व इस प्रकार होता-४ सवर्ण हिन्दू, ६ मुस्लिम, १ दलित हिन्दू, ३ अल्पसंख्यक।

मुस्लिम लीग ने दलित हिन्दू जाति में फूट पैदा करके दलित हिन्दुओं को मुसलमान बनाने और कांग्रेस को अपने कोटे के सदस्यों में एक मुस्लिम शामिल करने का जवाब देने के उद्देश्य से ही श्री जोगेन्द्रनाथ मण्डल को लीगी सदस्यों में स्थान दिया है। अन्तःकालीन सरकार में लीग की ओर से नियुक्त होते ही श्री जोगेन्द्रनाथ मण्डल ने कहा कि मेरा पहला कर्तव्य मुस्लिम लीग के प्रति वफादार बने रहना है, जिसने दलित जाति से सहानुभूति प्रकट की है। श्री जोगेन्द्रनाथ मण्डल पहले बंगाल के लीगी मंत्रिमण्डल में थे। आसाम लेजिस्लेटिव असेम्बली के कुछ दलित जातीय सदस्यों ने श्री जोगेन्द्रनाथ मण्डल से प्रार्थना की थी कि वह पूर्वी बंगाल में दलित जातियों पर किये गये अत्या-

चारों के विरोध-स्वरूप बंगाल मंत्रिमण्डल से त्यागपत्र दे दें। श्री मण्डल ने इसके उत्तर में लिखा था—"मेरा त्यागपत्र स्थिति को शान्त करने की अपेक्षा उसे खराब ही करेगा। मुसलमानों से हमारी मित्रता आगे चलकर बगाल में नामशूद्रों तथा अन्य दलित जातियों की रक्षा करेगी।"

श्री जोगेन्द्रनाथ मण्डल का जवाब पदलोलुपता तथा आत्माभिमान-शून्यता का परिचायक है। डॉ अम्बेडकर ने भी धमकी दी है कि यदि कांग्रेस ने उनकी माँगें मंजूर न कीं, तो वे और उनके अनुयायी मुस्लिम या ईसाई समाज में शामिल होने की बात पर विचार करेंगे।

एक लीगी कार्यकर्ता मि० खलील अहमद पाकिस्तानी ने हरिजनों के नाम एक अपील निकाली है कि वे अपनी बाँह या शरीर के किसी अन्य अंग पर अपना कोई ऐसा निशान लगाया करें, जिससे एक दृष्टि में ही मुसलमानों को मालूम हो जाय कि उनका सम्बंध 'अत्याचारों से पीड़ित हरिजन' कौम से है, इस प्रकार दोनों कौमों में मित्रता जल्दी स्थापित हो सकती है।

सिंध के मंत्री तथा अखिलभारतीय मुस्लिम लीग की कार्यकारिणी समिति के सदस्य श्री एम० ए० खुरों ने केन्द्रीय सरकार में पाँच सदस्यों के लीगी कोटा में श्री मण्डल का नाम सम्मिलित किये जाने पर कहा कि मुस्लिम लीग का उद्देश्य समस्त अल्पसंख्यकों की एक अखिल भारतीय संस्था बनाने का है।

१६ अक्टूबर १६४६ को गाँधीजी ने सायंकाल की प्रार्थना के

पश्चात् अपने भाषण में कहा–"मुस्लिम लीग ने अपने कोटा के ५ स्थानों में से एक पर एक हरिजन सदस्य को नियुक्त किया है। इसमें मुझे लीग की कोई उदार भावना नहीं दीखती, विशेष कर जब कि पूर्वी बंगाल में होनेवाली दुर्घटनाओं के समाचार मिले हैं। यूँ तो एक हरिजन का लिया जाना मुझे अच्छा लगना चाहिये, लेकिन मैं धोखा क्यों दूँ ? मुझे सदमा पहुँचा है। मि० जिन्ना कहते हैं कि हिंदू-मुस्लिम दो राष्ट्र हैं। मैं पूछता हूं कि हरिजन किस राष्ट्र में हैं ? लीग तो मुसलमानों की संस्था है। यदि वह सब को मिलाना चाहती है, तो सीधे रास्ते से मिलावे। मैं सोचता हूं कि क्या हरिजनों में दो फिर्के बन जायेंगे। क्या हरिजनों का ऐसा ही भला किया जायेगा, जैसा कि बंगाल में हो रहा है। मुझे आशंका है कि राष्ट्रीय सरकार का जो काम चल रहा था, वह कहीं बिगड़ न जाय। कहीं आपस में ही संघर्ष न हो।" गाँधीजी की आशंका निराधार नहीं है।

१६ अक्टूबर १६४६ को अखिल भारतीय हरिजन संघ (लीग) के प्रधान मंत्री भगतचंद ने अपने एक वक्तव्य में कहा–"मुस्लिम लीग ने अन्तःकालीन सरकार में श्री योगेन्द्रनाथ मण्डल को नियुक्त करके हरिजनों में वैमनस्य के बीज बोने का प्रयत्न किया है, परंतु हरिजन ऐसी शरारत-भरी कार्रवाई से भ्रम में न पड़ेंगे। वे जानते हैं मि० जिन्ना हरिजनों के मित्र नहीं हैं। वे कांग्रेस को नीचा दिखाने के लिये यह राजनीतिक खेल रच रहे हैं। मैं अपने सब हरिजन भाइयों को उन वैमनस्यकारी चालों

के विरुद्ध चेतावनी देता हूं, जो कि मुस्लिम लीग डॉ० अम्बेडकर के साथ षडयंत्र रच कर अपना रही है। मुस्लिम लीग अभी तक एक साम्प्रदायिक संस्था रही है और मि० जिन्ना तथा पण्डित जवाहरलाल नेहरू के बीच जो पत्र-व्यवहार हुआ है, उसका इसके सिवा कोई परिणाम नहीं निकलता। जान पड़ता है कि जिन क्षेत्रों ने श्री मण्डल की नियुक्ति का सुझाव रक्खा, वे हरिजनों के मित्र नहीं हैं। हरिजन यह भली भाँति जानते हैं कि उनका मित्र कौन है?

अखिल भारतीय हरिजन संघ के उपाध्यक्ष श्री देवीदासजी ने इसी प्रश्न पर एक वक्तव्य में कहा—"हिंदू अब अच्छी तरह जान गये हैं कि अछूतों पर अत्याचार करना पाप है और वे इसे दूर करने का प्रयत्न कर रहे हैं। हाँ, यह ठीक है कि इस कार्य में प्रगति की रफ्तार बढ़ाने की आवश्यकता है। कुछ अछूतों का ख़याल है कि अछूतों की भलाई मुसलमान या ईसाई हो जाने में है। मैं जानता हूं कि किसी समय डॉक्टर अम्बेडकर चेष्टा कर रहे थे कि बड़ी संख्या में अछूत मुसलमान या ईसाई हो जायें, किंतु उनकी चेष्टा असफल हो गई। अंतःकालीन सरकार में मुस्लिम लीग ने अपने कोटे में श्री जोगेन्द्रनाथ मण्डल को लेकर पुनः इसी बात का प्रचार करना चाहा है। मुझे आशा है कि परिगणित जाति के सदस्य हिंदू समाज में उचित स्थान प्राप्त करने की चेष्टा करेंगे और राष्ट्रीयता विरोधी राजनीतिज्ञों की चाल में न आयेंगे।"

श्री जोगेन्द्रनाथ मण्डल का प्रश्न हिंदू जाति के लिये एक चिंताजनक बात हो गई है, इसी लिये विभिन्न वक्तव्य उद्धृत करके परिस्थिति को स्पष्ट किया गया है। पाठक इस बात को भली भाँति समझ लें कि जिन्ना-जोगेन्द्र गठबंधन कांग्रेस की मुस्लिम-पोषक नीति का अनिवार्य परिणाम है। कांग्रेस ने अंतःकालीन सरकार में सवर्ण हिंदू-मुस्लिम समान प्रतिनिधित्व (Parity) स्वीकार करके मुस्लिम लीग को संख्या की दृष्टि से अधिक प्रतिनिधित्व दिया, पर इस बात का कोई खयाल नहीं रक्खा कि अस्पृश्य समाज को अंतःकालीन सरकार में संख्या की दृष्टि से प्रतिनिधित्व मिलना चाहिये। कांग्रेस ने न तो सवर्ण हिंदुओं के अधिकारों का ध्यान रक्खा और न अस्पृश्यों के अधिकारों का। कांग्रेस ने मुस्लिम लीग को संख्या से अधिक सीटें देकर इस योग्य बनाया कि लीग अपने कोटे की सीटों में से एक सीट का लालच देकर अछूतों को अपनी ओर करे। गाँधी जी और कांग्रेस ने हरिजनोद्धार की अपेक्षा मुस्लिमोद्धार का खयाल अधिक रक्खा। परिणाम सामने है। जिन्ना-जोगेन्द्र के गठबंधन से गाँधी जी को सदमा पहुँचा है, पर गाँधी जी को अनुभव करना चाहिये कि उन्हीं की मुस्लिम-पोषक नीति का यह गठबंधन अनिवार्य परिणाम है। गाँधी जी और कांग्रेस के अन्य नेता अपनी ग़लती को अनुभव करें या न करें, पर हिंदू समाज को यह बात भली भाँति समझ लेनी चाहिये कि कांग्रेस की कमज़ोर नीति हिंदू जाति को दुर्बल बनाने में सहायक हो रही है

और कांग्रेस से हिंदू-हित रक्षा की आशा करना दुराशा मात्र है। कांग्रेस की तथाकथित राष्ट्रीयता हिंदू जाति के लिये एक अभिशाप बन गई है।

मुस्लिम लीग की अंतःकालीन सरकार में सम्मिलित होने की नीयत को भी सही तौर पर समझना आवश्यक है। मि० जिन्ना ने १ अक्टूबर १९४६ को वायसराय को भेजे हुए पत्र में लिखा है—"मुसलमानों व अन्य सम्प्रदायों के हित की दृष्टि से केन्द्र में शासन का समूचा क्षेत्र कांग्रेस के हाथ में छोड़ देना घातक होगा।" बस, केवल इसी भय से प्रेरित होकर लीग ने अपने बम्बई के निश्चय में परिवर्तन किया है। वायसराय ने एक पत्र में मि० जिन्ना से पूछा कि क्या लीग २६ मई की घोषणा पर अमल करना चाहती है? पर मि० जिन्ना ने इस प्रश्न का कोई सीधा उत्तर नहीं दिया है। वह इस बात को टाल गये। वायसराय ने भी बात को स्पष्ट करने के लिये मि० जिन्ना पर कोई ज़ोर नहीं दिया। कारण स्पष्ट है। कांग्रेस का विरोध करने के लिये वायसराय और जिन्ना दोनों को एक दूसरे के सहयोग की आवश्यकता थी।

ध्यान रहे, लीग कांग्रेस से समझौता करके अंतःकालीन सरकार में सम्मिलित नहीं हुई है, प्रत्युत वायसराय के निमंत्रण पर और उन्हीं से बात करके उसमें सम्मिलित हो गई है। कहा जाता है कि पंडित जवाहरलाल नेहरू ने वायसराय से यह आश्वासन ले लिया है कि लीगी सदस्य अन्य मंत्रियों से

सहयोगपूर्वक काम करेंगे और लीग विधान परिषद् में भी शामिल होने की बात पर विचार करेगी, पर यह आश्वासन देने का ढंग ऐसा है कि उस पर विश्वास नहीं किया जा सकता। यदि मि० जिन्ना की नीयत साफ थी, तो उनको यह आश्वासन स्वयं पण्डित नेहरू को लिख कर देना चाहिये था, पर ऐसा न करके वायसराय के द्वारा निरा जबानी आश्वासन दिलाया गया है। अंतःकालीन सरकार के लीगी सदस्यों की घोषणा हो जाने के बाद मि० गजनफरअली खां और मि० लियाकतअली ने जो विचार प्रकट किये हैं, उनसे साफ मालूम हो जाता है कि 'मंत्रिमण्डल' को आपसी मतभेद का अखाड़ा बनाया जायेगा और झगड़ों का फैसला करने का महत्वपूर्ण काम वायसराय महोदय करेंगे। लीग वायसराय के वीटो के अधिकार की रक्षा करना चाहती है।

१६ अक्टूबर १६४६ को मि० गजनफरअली खाँ ने लाहौर में इस्लामिया कालेज के विद्यार्थियों के समक्ष भाषण देते हुए कहा— "हम अंतःकालीन सरकार में इसलिये शामिल हो रहे हैं कि पाकिस्तान की प्राप्ति के लिए जो संघर्ष करना है, उसमें हमारी स्थिति को सुदृढ़ बनाने का अवसर प्राप्त हो सके। मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि हम पाकिस्तान लेकर रहेंगे। अंतःकालीन सरकार लीग के 'खुला संघर्ष' आंदोलन का एक मोर्चा है और हम कायदे-आजम जिन्ना द्वारा दिये गए आदेशों का सभी मोर्चों पर पूर्ण रूप से पालन करेंगे।"

२६ अक्टूबर को मि० लियाकतअली ने प्रेस कान्फ्रेंस में कहा—"यह अंतःकालीन सरकार वर्तमान विधान के अनुसार बनी है, इसलिये इसमें 'संयुक्त उत्तरदायित्व' जैसी कोई चीज नहीं है। फिर भी हरेक सदस्य की इच्छा सहयोग की होनी चाहिए। वर्तमान विधान के अंतर्गत कोई एक व्यक्ति सरकार का नेता नहीं हो सकता। सरकार में कांग्रेस एवं लीग इन दो प्रमुख पार्टियों के नामजद व्यक्ति तथा तीन अल्प-संख्यक हैं। कांग्रेसी दल का अपना एक नेता है और उसी प्रकार मुस्लिम लीग दल का अपना एक नेता होगा।"

इन वक्तव्यों से लीगी सदस्यों का रुख भली भांति मालूम हो जाता है। इतना ही नहीं, मि० गजनफर अली ने नोआखाली की घटनाओं से संतप्त हिंदू समाज को और अधिक चिढ़ाने के लिये प्रत्येक मुस्लिम से अपील की कि वह प्रत्येक गैर मुस्लिम को मुस्लिम बनने की सलाह दें। इसका स्पष्ट मतलब यह है कि नोआखाली में जिन हिंदू स्त्री-पुरुषों को जबर्दस्ती मुसलमान बनाया गया, उसका मि० गजनफरअली और मुस्लिम लीग खुले तौर पर समर्थन करते हैं।

गांधीजी को भी कहना पड़ा, मुस्लिम लीग का रुख बेमेल है।

प्रसिद्ध किसान नेता स्वामी सहजानंद ने कांग्रेस के मेरठ अधिवेशन पर अपने भाषण में कहा—"कांग्रेस की कमजोरियों और अंग्रेजों के पीठ थपथपाने से ही मुस्लिम लीग का इतना हौसला बढ़ा है।"

अंतःकालीन सरकार के लीगी सदस्य जिस ख़याल से प्रेरित होकर सरकारी काम कर रहे हैं, उस पर पंडित जवाहरलाल नेहरू ने २१ नवम्बर १६४६ को कांग्रेस के मेरठ अधिवेशन के अवसर पर विषय समिति में भली भांति प्रकाश डाला है। आपने कहा—"मैं साफ-साफ कह देना चाहता हूँ कि जिस ढंग से मुझे अंतःकालीन सरकार बनाने के लिये कहा गया था, वह बदलता जा रहा है। प्रारम्भ में यह सरकार एक नये ढंग से चलने लगी। यह मंत्रिमंडल की तरह काम करने लगी और मिली-जुली जिम्मेदारी से काम होने लगे। इस सरकार को मंत्रिमंडल कहा जाने लगा। नई दिल्ली में नई हवा फैल गई। अंग्रेजी हकूमत गायब होने लगी—वह कमजोर होती चली। कुछ दिनों बाद अंतःकालीन सरकार में मुस्लिम लीग के शामिल हो जाने से नक्शे ने फिर दूसरा रङ्ग बदला। मंत्रिमंडल के लीगी सदस्य टीम की तरह मिल-जुल कर काम नहीं करने लगे। उनके काम करने का ढङ्ग जुदा रहा। पहले ही दिन उन्होंने कहा कि मिलजुल कर काम नहीं करेंगे। वे संयुक्त सरकार भी नहीं मानते। मैंने मि० जिन्ना को लिखा कि हम दोनों अंग्रेजी हकूमत से मदद न मांग कर झगड़ा आपस में तय करेंगे। वह खुले आम इसका विरोध तो नहीं कर सकते थे, किन्तु उनकी नीति और रुख अंग्रेजी हकूमत की मदद लेना और राष्ट्रीय भावना कुचलने का रहा। अंग्रेज अपनी हकूमत को जमाये रखने के लिये लीग को बढ़ाना चाहते हैं। जब से लीग

दाखिल हुई है, वह शाही पार्टी बनती जा रही है। प्रकट है कि अभी तक देश से अंग्रेजों को हटाने का काम कांग्रेस ने ही किया है, इसलिये अंग्रेज लीग से समझौता कर लेते हैं।

छोटे और बड़े सवालों में उलझनें पैदा हो गई हैं। पिछले हफ्ते में हम दो बार त्याग पत्र देने को तैयार हो गये थे। हम तलवार की धार पर रहते हैं। यदि सिलसिला ऐसा ही रहा, या बात इससे और बिगड़ी तो कशमकश बढ़ेगी और मैं नहीं जानता कि भविष्य में क्या होगा। मैं वायसराय को चेतावनी दे देना चाहता हूँ कि हमारा धैर्य अब अपनी सीमा पर पहुंच गया है।"

पण्डित नेहरू के वक्तव्य से इस बात का पता लग जाता है कि अन्तःकालीन सरकार में मुस्लिम लीग ने वातावरण को कितना विषाक्त बना दिया है। कांग्रेस की मुस्लिम-पोषक नीति का यह अनिवार्य परिणाम है। पृथक् निर्वाचन तथा केन्द्रीय कार्यकारिणी में हिंदू-मुस्लिम या कांग्रेस-लीग समान प्रतिनिधित्व का सिद्धान्त स्वीकार करके कांग्रेस ने जो गलती की, उसका भयानक परिणाम हमारे सामने है। कांग्रेस के मेरठ अधिवेशन के अध्यक्ष आचार्य कृपलानी ने अपने भाषण में कांग्रेस की गलती और कमजोरी को खुले शब्दों में स्वीकार किया है। आपने कहा—"इतिहास की दृष्टि से साम्प्रदायिकता की अपेक्षा राष्ट्रीयता का सिद्धांत ऊँचा है और लोकतंत्र किसी समूह के शासन से बड़ा है। इसलिए जो भी हो, हमें राष्ट्रीयता और लोकतंत्र के ऊपर साम्प्रदायिक और अलोकतंत्रीय सिद्धांतों को हावी नहीं होने देना चाहिये। इस दृष्टि

से मुझे इस बात में तनिक भी संदेह नहीं है कि कांग्रेस ने पृथक् निर्वाचन को, जो अराष्ट्रीय तथा अलोकतंत्रीय है, मानकर गलती की। यदि हमने दिलेरी के साथ पृथक् निर्वाचन के अलोकतंत्रीय तथा अराष्ट्रीय सिद्धांत को मानने से अस्वीकार कर दिया होता तो आज के बहुत से झगड़े बचाये जा सकते थे।"

हिंदूमहासभा समय समय पर कांग्रेस की अराष्ट्रीय तथा अलोकतंत्रीय नीति का विरोध करती रही है। महासभा के नेता कांग्रेस के नेताओं से बार-बार कहते रहे कि राष्ट्रीयता की रक्षा के लिये कांग्रेस दिलेरी को अपनाये, पर कांग्रेस के नेता सच्ची राष्ट्रीयता को तिलाञ्जली देकर बनावटी राष्ट्रीयता के फेर में पड़े रहे। इससे भारतीय राजनीति में हिंदुओं का पक्ष कमजोर रहा है। कांग्रेस हिंदू-हितों की दुश्मन नहीं है, पर कांग्रेस ने जो नीति अपना रक्खी है, उससे भारतीय राजनीति में हिंदुओं का प्रतिनिधित्व भली भाँति नहीं हो पाता। कांग्रेस हिंदुओं का प्रतिनिधित्व तो करती है, पर वह अपने को हिंदू संस्था नहीं मानती। इधर कांग्रेस सरकार की 'विभाजन तथा शासन' की नीति तथा मुस्लिम लीग की स्वार्थान्ध साम्प्रदायिक नीति के कारण राष्ट्रीयता की रक्षा करने में भी असफल रही है। ऐसी परिस्थिति में हिंदुओं के अधिकारों की उपेक्षा हो जाना स्वाभाविक ही था। ऐसा ही हुआ।

स्वर्गीय पण्डित महामना मालवीय जी ने १ नवम्बर १९४६ को अपने अंतिम संदेश में कहा—"कई वर्ष से हिंदू-मुस्लिम समझौते के लिये हिंदुओं ने काफ़ी सहिष्णुता का परिचय दिया है,

परंतु इस सहिष्णुता को कमज़ोरी समझा जा रहा है। कांग्रेस और मुस्लिम लीग को समान समझा जाकर बहु-संख्यक अर्थात् हिंदू जाति के अधिकारों को कुचला गया है। यह अत्यंत आवश्यक है कि हिंदू संगठित हों।"

भारत संक्रमण-काल में से होकर गुजर रहा है। इस परिस्थिति में हिंदुओं को भारतीय राजनीति में हिंदू-दृष्टिकोण उपस्थित करनेवाली 'हिंदू महासभा' को सुदृढ़ तथा शक्ति-सम्पन्न बनाना चाहिये। कांग्रेस की मुस्लिम-पोषक नीति का विरोध और मुस्लिम लीग की साम्प्रदायिकता का सामना करने के लिये आज भारत के राजनीतिक क्षेत्र में शक्ति-सम्पन्न हिंदू महासभा की आवश्यकता है।

★

हिन्दू महासभा पाकिस्तान के विरुद्ध क्यों ?

यह सम्मेलन घोषणा करता है कि भारत का भावी विधान उसकी अखण्डता और स्वतंत्रता के आधार पर ही बनाया जाय। सम्मेलन यह भी घोषित करता है कि यदि भारत की अखण्डता को किसी भी प्रकार से नष्ट करने का कोई प्रयत्न किया जायेगा, तो प्रत्येक प्रकार का बलिदान और मूल्य देकर उसका विरोध किया जायेगा। —अखण्ड हिंदुस्तान नेता सम्मेलन

सैकड़ों जिन्ना भी हिंदू-मुस्लिम आबादी का परिवर्तन नहीं कर सकते। —सरदार पटेल

हिंदुस्थान में पाकिस्तान अर्थात् मुस्लिम बहुसंख्यक प्रांतों में स्वतंत्र मुस्लिम राज्य की कल्पना के जनक लार्ड मिण्टो हैं जिन्होंने १९०६ में सर आगाखाँ को बुलाकर कहा कि मुसलमान पृथक् निर्वाचन की माँग करें। पृथक् निर्वाचन-प्रणाली ने साम्प्रदायिक मनोवृत्ति को प्रोत्साहित करने का काम किया है। १९३० में मुस्लिम लीग के लखनऊ अधिवेशन के अध्यक्ष सर महम्मद इकबाल ने पाकिस्तान की कल्पना मुस्लिम जनता के सामने पेश की थी। १९३२ में गोलमेज परिषद के अवसर पर मि० रहमत अली ने परिषद् के प्रतिनिधियों में पाकिस्तान का प्रचार किया था, परन्तु पाकिस्तान शब्द को कोई महत्व प्राप्त नहीं हुआ था। जब १९४० में मुस्लिम लीग के लाहौर अधिवेशन में पाकिस्तान

की माँग की गई, तो समूचे भारत का ध्यान पाकिस्तान की ओर आकर्षित हुआ।

आज तक पाकिस्तान की कितनी ही योजनायें प्रकाशित हो चुकी हैं। कहने की आवश्यकता नहीं है कि ये सभी योजनायें हिंदुस्तान की एकता तथा रक्षा की दृष्टि से घातक तो है ही, परन्तु साथ ही अव्यवहार्य भी हैं।

इसमें कोई संदेह नहीं कि गांधी जी और कांग्रेस के नेता अखण्ड हिंदुस्थान के पक्ष में हैं, पर राष्ट्रीय सिद्धान्त के आधार पर मुस्लिम लीग की साम्प्रदायिक मांग का डंके की चोट विरोध करने के अभाव तथा पिछली कई गलतियों के कारण कांग्रेस के नेता राष्ट्रीयता के मार्ग से विचलित हो जाते हैं। जब श्री राजगोपालाचार्य पाकिस्तान का खुले तौर पर समर्थन करने लगे, तो गांधीजी राजाजी से सहमत न थे। गांधी जी ने स्पष्ट शब्दों में कहा था—"भारत के विभाजन की कल्पना पाप है। इस पाप में मैं शामिल नहीं हो सकता।" आपने २२ सितम्बर १९४० के हरिजन में यह भी लिखा था—"Vivisect me before vivisecting India." अर्थात् "भारत का विभाजन करने से पहले मेरे शरीर के टुकड़े कर दो।" इन वक्तव्यों से स्पष्टतया मालूम हो जाता है कि गाँधीजी पाकिस्तान के एकदम विरुद्ध हैं। प्रान्तों के आत्मनिर्णय के अधिकार के विरोध में १८ मई १९४० के हरिजन में आप लिखते हैं—"If every component part of the Nation claims the right of self-

determination for itself, there will be no one Nation and there is no Independence. I have already said that 'Pakistan is such an untruth that it cannot stand." गाँधीजी मानते हैं कि आत्म-निर्णय का अधिकार राष्ट्र के टुकड़े-टुकड़े कर देगा और स्वतंत्रता भी नहीं होगी। आप यह भी मानते हैं कि पाकिस्तान असत्य अर्थात् अव्यवहार्य है और वह पल भर के लिये भी टिक नहीं सकता।

क्या ही अच्छा होता, यदि गाँधीजी अपने हार्दिक विचारों पर दृढ़ बने रहते, पर गाँधीजी और कांग्रेसी नेताओं की यह विशेषता है कि वे एक साथ ही परस्पर विरोधी बातें करके एक नई उलझन पैदा करते हैं। ६ अप्रैल १६४० के हरिजन में गाँधी जी लिखते हैं—"Muslims must have the same right of self-determination that the rest of India has. We are at present a joint family. Any member may claim division." इस वक्तव्य में गाँधीजी प्रान्तों के आत्मनिर्णय के अधिकार ही नहीं, प्रत्युत मुसलमानों के आत्म-निर्णय के अधिकार का समर्थन कर रहे हैं। इसके लिये आप तर्क दे रहे हैं कि हिन्दुस्थान एक सम्मिलित परिवार है और उसका कोई भी सदस्य उससे अलग हो सकता है। आप कई लेखों में यह विचार भी प्रकट कर चुके हैं कि यदि मुसलमान हिन्दुओं के साथ मिलकर नहीं रहना चाहते हैं, तो संसार की

कोई भी शक्ति मुसलमानों को हिन्दुओं के साथ मिलाकर रहने के लिये बाध्य नहीं कर सकती। पाठक स्वयं विचार कर सकते हैं कि गांधीजी के विचारों में यह गड़बड़ क्यों है ? विचारों की गड़बड़ का परिणाम यह हुआ कि भारत के विभाजन को पाप और श्री राजगोपालाचर्य को उस पाप में शामिल समझने वाले गाँधीजी स्वयं उसी पाप में सम्मिलित हो गये।

सरकार की अपने स्वार्थ के लिये मुस्लिम लीग की साम्प्रदायिक माँग को प्रोत्साहन देने की राष्ट्र-द्रोही नीति के फलस्वरूप ३० मार्च १९४२ को क्रिप्स-योजना प्रकाशित हुई । क्रिप्स-योजना में प्रान्तों को भारतीय संघ (इण्डियन यूनियन) से पृथक् होने का आत्मनिर्णय (self-determination) का अधिकार दिया गया था और ब्रिटेन की नीति में सहायक होकर कांग्रेस ने उसको स्वीकार कर लिया। यह ठीक है कि कांग्रेस ने क्रिप्स योजना को स्वीकार नहीं किया, पर उसका कारण विभाजन का सिद्धान्त नहीं था, प्रत्युत भारतीयों को फौजी अधिकार न सौंपना था । क्रिप्स-योजना पर कांग्रेस ने १० अप्रैल १९४२ को जो प्रस्ताव प्रकाशित किया था, उसमें प्रान्तों के आत्मनिर्णय के अधिकार को स्वीकार किया गया था। प्रस्ताव यह है—"Nevertheless the Committee cannot think in terms of compelling the people in any territorial unit to remain in an Indian Union against their declared and established will." तात्पर्य यह कि कांग्रेस ने सिद्धान्त

के तौर पर स्वीकार किया कि यदि कोई प्रान्त केन्द्र से पृथक् होना चाहे, तो कांग्रेस उसे बाध्य नहीं करेगी।

१९४४ में श्री राजगोपालाचार्य ने गाँधी जी का आशीर्वाद प्राप्त करके एक पाकिस्तानी योजना मि० जिन्ना के सामने रक्खी। इस योजना में कहा गया था कि युद्ध के बाद एक कमीशन नियुक्त किया जायेगा और वह उत्तर-पश्चिम और पूर्व-भारत के ज़िलों में जनसाधारण के वोटों से इस बात का निर्णय करेगा कि बहुमत पृथक् होने के पक्ष में है या नहीं। यदि बहुमत पृथक् होने का निर्णय करेगा, तो उस निर्णय को कार्यरूप में परिणत किया जायेगा। मि० जिन्ना ने इस योजना को स्वीकार नहीं किया। फिर गाँधीजी इसी योजना के आधार पर मि० जिन्ना से मिलने की तैयारी करने लगे। राष्ट्र के विचारशील पुरुष गाँधी-जिन्ना मिलन के विरुद्ध थे। यह वह समय था, जब पाकिस्तानी प्रान्तों में मि० जिन्ना का आसन डावाँडोल था। स्थान-स्थान पर मुस्लिम लीग की प्रतिष्ठा पर आघात हो रहे थे। हिन्दू महासभा के नेता डॉ० श्यामाप्रसाद मुकर्जी गाँधीजी से मिले और कहा कि इस समय मि० जिन्ना से मिलना राजनीतिक भूल होगी। गाँधीजी ने डॉ० मुकर्जी की बात को नहीं माना और बम्बई में मि० जिन्ना से जा मिले। इक्कीस दिन लगातार मुलाकातें होती रहीं। परिणाम वही हुआ, जो होना था। गाँधीजी मि० जिन्ना का राजनीतिक महत्व बढ़ाकर और लीग को जीवन-दान देकर खाली हाथ लौट आये।

१२ सितम्बर १६४५ में पूना में काँग्रेस कार्य-कारिणी समिति की बैठक हुई। उसमें प्रान्तों को आत्मनिर्णय का अधिकार देने का प्रस्ताव स्वीकार किया गया, पर उसके बाद ही बम्बई में काँग्रेस की अखिल भारतीय समिति में पूना का वह प्रस्ताव पेश नहीं किया गया। कारण स्पष्ट है। चुनाव का समय था। इस लिये हिन्दू मतदाताओं के मत प्राप्त करने के लिये और कांग्रेस के अन्तर्गत विरोध की आशंका के कारण वह प्रस्ताव उपस्थित नहीं किया गया।

१६४० के पाकिस्तान प्रस्ताव के जन्म से लेकर गाँधी जी और काँग्रेस ने समय-समय पर जो विचार प्रकट किये हैं, उनका सूक्ष्म अध्ययन करने से यह स्पष्टतया मालूम हो जाता है कि गाँधी जी और काँग्रेस ने सिद्धान्त के तौर पर भारत-विभाजन को स्वीकार किया है।

पाकिस्तान के सम्बन्ध में ब्रिटिश सरकार की नीति उलझी हुई है। 'विभाजन और शासन' की नीति के कारण यह स्पष्ट है कि सरकार विभाजन के अनुकूल ही नीति अपनायेगी। इसी नीति के फलस्वरूप क्रिप्स-योजना में विभाजन का सिद्धान्त विद्यमान था। इस योजना से ऐसा प्रतीत होता था कि ब्रिटिश सरकार विभाजन के पक्ष में है, पर १७ फरवरी १६४४ को वायसराय लार्ड वेवल ने असेम्बली और कौन्सिल आफ स्टेट के सम्मुख जो भाषण दिया है, वह अखण्ड भारत के पक्ष में है। भाषण यह है—"भारतवर्ष की एकता के सब से बड़े

प्रश्न पर, जिस पर हिन्दू और मुसलमानों का परस्पर मत भेद है, केवल यह कहना चाहता हूँ कि तुम भूगोल को नहीं बदल सकते। देश की रक्षा और दुनिया के अन्य देशों के साथ आन्तरिक तथा बाह्य सम्बन्ध में भारत स्वाभाविक तौर पर एक है। दोनों बड़ी जमायतों, दूसरे अल्पमतों और भारतीय देशी राज्यों की, जो भारत के अन्दर हैं, सुविधा के लिये सोचना आप भारतीयों का काम है। इतिहास में बहुत से उदाहरण विद्यमान हैं, जिनसे यह प्रमाणित होता है कि दो पृथक्-पृथक् सम्प्रदाय ही नहीं, प्रत्युत दो पृथक्-पृथक् जातियाँ एक साथ मिल कर रहने का उपाय कर सकती हैं। इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड ने सदियों के पारस्परिक संघर्ष के बाद एक यूनियन बना ली। कनाडा में अंग्रेज और फ्रान्सीसियों ने एक फेडरेशन कायम कर लिया, जो कि बहुत अच्छी तरह काम कर रहा है। स्वीजरलैण्ड में फ्रान्सीसियों, इटालियनों और जर्मनों ने आपस में मिल कर एक फेडरेशन बनाया। इन सब में धार्मिक और जातीय मत भेद विद्यमान थे। संयुक्त अमरीका में विभिन्न धर्मों, सम्प्रदायों और जातियों ने मिल कर एक कौम बना ली है, जिसका ढाँचा बिल्कुल एक है। रूस की सोवियट यूनियन ने बिल्कुल ही नया ढंग निकाला है। उसे भी देखना होगा। ये उदाहरण हमारे विधान निर्माताओं के सम्मुख हैं और उन्होंने फैसला करना है कि उनकी भलाई के लिये कौन सा विधान उपयुक्त होगा। लेकिन बावजूद इन सब बातों के भूगोल में परिवर्तन नहीं किया जा सकता।

क्रिप्स-योजना और वायसराय के उपर्युक्त भाषण से साफ प्रकट होता है कि सरकार एक ओर अखण्ड हिन्दुस्थान मानते हुए भी मुस्लिम लीग को खुश करने के लिये सिद्धान्त के तौर पर विभाजन को स्वीकार करती है। इसका प्रमाण मन्त्रिमण्डल मिशन की १६ मई १९४६ को प्रकाशित विचित्र योजना है।

हिन्दू महासभा का दृष्टिकोण स्पष्ट है। क्रिप्स-योजना को अस्वीकार करते हुए १ अप्रैल १९४२ को हिन्दू महासभा की कार्य-समिति ने जो प्रस्ताव पास किया है, उससे मालूम हो जाता है कि महासभा पाकिस्तान के एकदम विरुद्ध है और वह इस प्रश्न पर किसी से किसी तरह का समझौता करना नहीं चाहती। प्रस्ताव यह है—"हिन्दू महासभा का आधारभूत मन्तव्य है कि भारत एक अखण्ड और अविभाज्य है। धार्मिक और सांस्कृतिक आधार पर हिन्दू सदा ही भारतीय अखण्डता के सिद्धान्त पर चलते रहे हैं। राजनीतिक दृष्टि से भी भारतीय अखण्डता सदा मौजूद रही है और इतिहास में उज्ज्वल अक्षरों में उसका उल्लेख पाया जाता है। यहाँ तक कि लगभग दो सौ वर्ष के शासन काल में भी भारत की अखण्डता कायम रही है, जिसको ब्रिटेन ने सदा ही अपने शासन की बड़ी भारी विशेषता के रूप में घोषित किया है। सन् १९३५ के नये शासन विधान में भी भारत की राजनीतिक अखण्डता को स्वीकार किया है। भारतीय फेडरेशन या यूनियन से प्रान्तों की पृथकता का उक्त सिद्धान्त भारतीय परम्परा के सर्वथा विपरीत तथा साम्प्रदायिक

संघर्ष को बढ़ाने वाला है। फेडरेशन में शामिल न होने वाले प्रान्तों को अपना अलग फेडरेशन बनाने की स्वतन्त्रता देना पाकिस्तान फेडरेशन कायम कर देना है। मुसलमानों के पाकिस्तान और पठानिस्तान आदि आन्दोलन को देखते हुए उनके अफगानिस्तान आदि देशों को मिल जाने का भय है। भारतीय सुख और एकता के लिये यह बड़ा भारी खतरा है और इससे देश में गृह-युद्ध आरम्भ हो जाने को सम्भावना है। हिन्दुस्थान और हिन्दुओं के लिये हिन्दू महासभा किसी भी ऐसी पार्टी या योजना से अपना सम्बन्ध नहीं रख सकती, जो कि किसी भी प्रकार भारत-विभाजन का समर्थन करती हो। हिन्दू महासभा को सर क्रिप्स महोदय की योजना पर आधारभूत आक्षेप है।"

इसके बाद वीर सावरकर के प्रयत्न से ७ और ८ अक्टूबर १९४४ को देहली में डॉ० राधाकुमुद मुकर्जी की अध्यक्षता में अखण्ड हिन्दुस्थान नेता-सम्मेलन हुआ। सम्मेलन में जो मुख्य प्रस्ताव पास हुआ वह यह है—"यह सम्मेलन घोषणा करता है कि भारत का भावी विधान उसकी अखण्डता और स्वतन्त्रता के आधार पर ही बनाया जाये। सम्मेलन यह भी घोषित करता है कि यदि भारत की अखण्डता को धार्मिक, राजनीतिक, आर्थिक और भाषा सम्बन्धी किसी भी प्रकार से नष्ट करने का कोई प्रयत्न होगा, तो प्रत्येक प्रकार का बलिदान और मूल्य देकर उसका विरोध किया जायेगा। यह सम्मेलन भारत की अखण्डता तथा एकता में पूर्ण विश्वास प्रकट करता है कि भारत के विभा-

जन से देश को महान् घातक हानि पहुंचेगी। सम्मेलन प्रत्येक देश-भक्त से प्रार्थना करता है कि भारत की अखण्डता को नष्ट करने का विरोध हर तरह से करे।"

हिन्दू महासभा ने आजतक पाकिस्तान की मांग, प्रान्तों को आत्म नर्णय का अधिकार, राजाजी की योजना, देसाई-लियाकत फार्मूला, सप्रू कमेटी की योजना, वेवल-योजना और कांग्रेस की कमजोर नीति का विरोध तथा निषेध किया है। महासभा सवर्ण हिन्दू-मुस्लिम समान प्रतिनिधित्व और पाकिस्तान दोनों के विरुद्ध है।

२६ जुलाई १६४६ को बम्बई में मुस्लिम लीग की अखिल भारतीय समिति ने स्वीकृति की हुई मिशन योजना अस्वीकृत कर दी और स्वतन्त्र तथा पूर्ण पाकिस्तान की मांग की। 'सीधी कार्र-वाई' करने की भी समिति ने घोषणा की। उस अवसर पर मि० जिन्ना ने कांग्रेस अर्थात् हिन्दुओं से कहा—"हम युद्ध नहीं चाहते, पर यदि तुम युद्ध चाहते हो तो हम इसे निस्संकोच होकर स्वीकार करते हैं।" मि० लियाकतअली ने कहा—"मुस्लिम लीग पूर्ण पाकिस्तान की प्राप्ति के लिये खुला संघर्ष करेगी।" ५ अगस्त को लीग की 'सीधीकार्रवाई' का अर्थ स्पष्ट करते हुए आपने कहा—"सीधी कार्रवाई का अर्थ है कानून के विरुद्ध कोई भी कार्रवाई। हम सभी प्रकार से कांग्रेस सरकार का चलना अस-म्भव कर देंगे।" इतना जोश होते हुए भी मुस्लिम लीग को विवश होकर अन्तःकालीन सरकार में शामिल होना पड़ा, परन्तु

शामिल होने पर भी लीगी सदस्यों ने अन्त:कालीन सरकार की प्रगति में बाधा उपस्थित करना अपना इस्लामी कर्तव्य समझा।

१६ अगस्त को 'खुला संघर्ष' दिवस के अवसर पर और उससे पहले और बाद में कितने ही लीगियों ने जो जहरीले भाषण दिये हैं, उनके सम्बन्ध में ७ सितम्बर १९४६ को प्रार्थना के पश्चात् गाँधीजी ने कहा—"मि० जिन्ना और उनके शिष्य बहुत बोल रहे हैं। पंजाब, सिन्ध और बंगाल के मुसलमान जो गालियाँ दे रहे हैं, उनके लिये मैं क्या कहूँ ? हम बहुत खामोश रहे।" लीगी नेताओं के उत्तेजक हिन्दू-द्रोही भाषणों से देश का वातावरण विषाक्त बन गया और साम्प्रदायिक उपद्रव प्रारम्भ हुए।

मुस्लिम लीग के नेताओं ने शायत यह समझ रक्खा है कि मारकाट करने की धमकियाँ देने से और कहीं कहीं बड़े पैमाने पर हिन्दुओं पर हिंसात्मक आक्रमण, जैसा कि १६ अगस्त को कलकत्ता में और बाद में पूर्व बंगाल में किया गया, करने से हिन्दू भयभीत हो जायेंगे और इसके फलस्वरूप वे लीग की पाकिस्तान की माँग मान लेंगे। हाँ, समझ उनकी यही है, परन्तु लीगी नेता इस बात को नहीं जानते कि वे जो कुछ बोल या कर रहे हैं, उससे अखण्ड हिन्दुस्तान का प्रबल समर्थन हो रहा है।

लीगी नेता कभी कांग्रेस से पाकिस्तान की भीख माँगते हैं, कभी अपनी तलवार की ताक़त से पाकिस्तान की स्थापना करने की धमकी देते हैं और कभी रूस की सहायता से पाकिस्तान

स्थापित करने की बात कहते हैं। १० एप्रिल १९४६ को मि० फिरोज खाँ नून ने हिन्दुओं को भयभीत कराने के लिये चंगेज खाँ की याद दिला कर ब्रिटिश सरकार को चेतावनी देते हुए कहा—"अगर हिन्दू हमको पाकिस्तान देंगे, तो वे हमारे अच्छे दोस्त होंगे। यदि अंग्रेज हमको पाकिस्तान देंगे, तो वे हमारे मित्र होंगे। अगर ये दोनों हमको पाकिस्तान नहीं देते हैं, तो फिर रूस हमको पाकिस्तान देगा।" ३ सितम्बर १९४६ को मि० जिन्ना ने भी अपने वक्तव्य में कहा है—"मुझे भविष्य अन्धकारमय दिखाई देता है। यदि ब्रिटेन, अमरीका और रूस के बीच तनातनी बढ़ जाय, तो कहने की आवश्यकता नहीं है कि भारत के मुसलमान किस पक्ष में रहेंगे।" मतलब यह कि भारत के मुसलमान ब्रिटेन के विरुद्ध रूस के पक्ष में मिल जायेंगे। १९४० में मुस्लिम लीग के लाहौर अधिवेशन में अध्यक्ष-पद से भाषण करते हुए मि० जिन्ना ने कहा था—Indian troops should not be sent against any Muslim country or any Muslim power." अर्थात् "हिन्दुस्थानी फौज किसी भी मुस्लिम देश या मुस्लिम राज्य के विरुद्ध लड़ने के लिये न भेजी जाय।" इसका स्पष्ट मतलब यह है कि यदि कोई मुस्लिम राष्ट्र भारत पर चढ़ाई कर दे, तो ये लीगी मुसलमान उस मुस्लिम राष्ट्र की सहायता करेंगे, विरोध नहीं। और पाकिस्तान की माँग के मूल में ऐसे देशद्रोही विचार प्रच्छन्नरूप से विद्यमान हैं।

हिन्दू महासभा जो पाकिस्तान का विरोध कर रही है, वह

साम्प्रदायिक दृष्टिकोण से नहीं, प्रत्युत अखण्ड भारत की रक्षा और आन्तरिक शान्ति की दृष्टि से ही कर रही है। पाठक समझ गये होंगे कि मुस्लिम लीग की पाकिस्तान की माँग हिन्दुस्थान के भविष्य के लिये एक स्थायी खतरा है। इस स्थायी खतरे से बचने के लिये स्थायी हिन्दू संगठन की आवश्यकता है। पाकिस्तान का समर्थन करने का अर्थ भारत की गुलामी का समर्थन करना है और साथ ही हिन्दू और मुसलमानों के अखण्ड संघर्ष को प्रोत्साहन देना है। ये दोनों बातें हिन्दू और मुसलमान दोनों के लिये समान रूप से घातक है। इसी लिये हिन्दू महासभा पाकिस्तान का विरोध करती है। मुस्लिम लीग को चाहिये कि वह परिस्थिति पर गम्भीरतापूर्वक विचार करे। संघर्ष की धमकी देने से पाकिस्तान नहीं हो सकता।

मि० जिन्ना कहते हैं कि अल्पसंख्यकों की समस्या पाकिस्तान से ही हल हो सकती है, पर सच्चाई यह है कि पाकिस्तान में अल्पसंख्यक हिन्दू और हिन्दुस्थान में अल्पसंख्यक मुस्लिम रहेंगे। इससे बात ज्यों की त्यों बनी रहेगी। अब मि० जिन्ना ने एक नई बात पेश की है। बंगाल के नरमेध की प्रतिक्रिया बिहार में हुई और बिहार में सैकड़ों मुसलमान मारे गये। इससे सही बात सोचने के बजाय मि० जिन्ना किसी और ही नतीजे पर पहुँचे। १४ नवम्बर १९४६ को मि० जिन्ना ने विदेशी पत्रकारों से कहा—"बिहार की दुःखद घटना ने विभिन्न सम्प्रदायों की जनता को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने के प्रश्न

को गम्भीरतापूर्वक विचार करने का विषय बना दिया है।" मतलब यह है कि हिन्दू बहु-संख्यक प्रान्तों के अल्प-संख्यक मुसलमान मुस्लिम बहु-संख्यक प्रान्तों में जाकर बसेंगे। इसी नीति के फलस्वरूप कुछ बिहारी मुसलमानों को बंगाल में बसाया गया है। इस नीति में यह विचार भी प्रच्छन्नरूप से विद्यमान है कि मुस्लिम बहुमत प्रान्तों से अल्पमत हिन्दुओं को निकाल दिया जायेगा। पर क्या यह योजना व्यावहारिक है? क्या दक्षिण के मुसलमान बंगाल, पंजाब, सिन्ध या सीमाप्रान्त में आकर बसेंगे? और क्या इन प्रान्तों के हिन्दू दूसरे प्रान्तों में जाकर बसेंगे? यह एक दम अव्यवहारिक योजना है। सरदार पटेल ने ठीक ही कहा है—"सैकड़ों जिन्ना भी आबादी का परिवर्तन नहीं कर सकते।" न तो भूगोल में ही परिवर्तन हो सकता है और न आबादी का ही परिवर्तन हो सकता है।

मि० जिन्ना कहते हैं कि हिन्दुस्थान सही अर्थ में एक राष्ट्र कभी नहीं रहा। साथ ही आप यह भी कहते हैं कि हिन्दुस्थान में हिन्दू और मुस्लिम दो राष्ट्र हैं और इसीलिये मुस्लिम राष्ट्र के लिये पाकिस्तान अर्थात् पूर्ण स्वतन्त्र मुस्लिम राज्य आवश्यक है।

हिन्दू महासभा ऐतिहासिक सत्य के आधार पर कहती है कि प्राचीन काल से हिन्दुस्थान सही अर्थ में एक राष्ट्र हिन्दू-राष्ट्र रहा है और अब भी है। हिन्दुस्थान में मुस्लिम राष्ट्र एक धर्माधिष्ठित कल्पना मात्र है, उसको हिन्दुस्थान में भौगोलिक आधार नहीं है—क्यों?

हिन्दू-राष्ट्र और हिन्दुत्व

"हिन्दुस्थान उन्हीं अर्थों में हिन्दू राष्ट्र था और है, जिन अर्थों में कोई भी राष्ट्र राष्ट्र कहलाता है।" —वीर सावरकर

हिन्दुस्थान के ६५ प्रतिशत मुसलमान हिन्दुओं की औलाद हैं। ५ प्रतिशत मुसलमान विजेताओं के साथ आये थे, लेकिन वे ५ प्रतिशत मुसलमान भी, जिनमें मेरा परिवार भी है, यहाँ हिल-मिल गये हैं। —मौलाना आज़ाद

हिन्दू महासभा हिन्दुस्थान को हिन्दू राष्ट्र मानती है। हिन्दुस्थान हिन्दुओं का देश है। देश, जाति, धर्म, संस्कृति तथा भाषा—इन सभी दृष्टियों से, जो राष्ट्र की कसौटी है, हिन्दुस्थान यह एक हिन्दू राष्ट्र है। आर्यों के मूल निवास-स्थान के सम्बन्ध में इतिहासज्ञों में मत भेद पाया जाता है। इस मतभेद का वर्णन करना हमें अभीष्ट नहीं। वेदों से और विशेषतया ऋग्वेद से कोई प्राचीन ग्रंथ संसार में उपलब्ध नहीं है। वेदों में जिन नदी, नदों और प्रदेशों के नाम तथा वर्णन पाये जाते हैं, उन नामों के नदी, नद तथा प्रदेश न तो उत्तर ध्रुव में पाये जाते हैं और न मध्य एशिया में। ऋग्वेद में गंगा, यमुना आदि भारतीय नदियों के नाम आये हैं। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि आर्यों का मूल निवास-स्थान भारतवर्ष ही हो सकता है। महाराष्ट्र के प्रसिद्ध इतिहासज्ञ रा० सा० नारायण भगवानराव पावगी अपने

"सप्तसिंधुचा प्रान्त अथवा आर्यावर्तातील आमची जन्म-भूमि" शीर्षक लेख में लिखते हैं—"आर्यों का मूल स्थान भारतवर्ष में ही था। पश्चात् वे दिग्विजय करते-करते उत्तर ध्रुव तक पहुंचे और वहाँ उन्होंने अपने उपनिवेश बनाये। पश्चात् हिम-युग के प्रभाव से वह स्थान निवास-योग्य न रहा, तब फिर लौट कर अपनी मातृभूमि में आ गये।" आर्य उत्तर ध्रुव या मध्य एशिया से भारतवर्ष में नहीं आये थे, प्रत्युत भारतवर्ष से ही मध्य एशिया और उत्तर ध्रुव गये थे।

आर्य (हिन्दू) कृषि-जीवी और प्रकृति के प्रेमी थे। स्वाभाविक तौर पर उनके हृदय में नदियों के लिये असीम श्रद्धा थी। इसी से उन्होंने अपने देश का नाम 'सप्तसिंधु' रक्खा। इन सात पवित्र नदियों का उल्लेख निम्न लिखित मंत्र में पाया जाता है और उनका जल हिन्दू लोग आज भी पवित्र मानते हैं।

गंगे च यमुने चैव सरस्वती गोदावरी
नर्मदे सिंधु कावेरी जलेऽस्मिन् समिधिंकुरु।

उसी समय में आर्य लोग 'सिंधु' कहलाने लगे। वीर सावरकर ने अपनी 'हिन्दुत्व'-नामक पुस्तक में हिन्दू शब्द की विस्तृत विवेचना की है। जिज्ञासुओं को उस पुस्तक का अध्ययन अवश्य करना चाहिये। आप लिखते हैं—"संस्कृत भाषा के 'स' अक्षर का प्राकृत भाषा में 'ह' के समान उच्चारण होता है। संस्कृत का शब्द केसरी हिन्दी भाषा में केहरी कहलाता है। सरस्वती को पर्शियन भाषा में हरहवती और असुर को अहुर

कहते हैं। सप्तसिंधु शब्द पर्शिया की प्राचीन पुस्तक अवस्ता में हप्तहिंदु लिखा गया है। इस प्रकार हम देखते हैं कि जिस दिन से हमारा इतिहास मिलता है, सिंधु और हिंदू नाम से प्रसिद्ध है। इन प्रमाणों से यह सत्य निर्विवाद है कि हमारे पूर्व पुरुषों ने हिन्दू नाम को आदि काल से ही अपना लिया था और संसार के अन्य राष्ट्र भी हमारे देश को सप्तसिधु व हप्तहिंदु और हमें सिंधु व हिन्दू नाम से जानते थे।"

आगे चलकर वीर सावरकर ने यह भली भांति सिद्ध किया है कि सिन्धुस्थान केवल एक भूमि भाग का नाम नहीं था, प्रत्युत राष्ट्र का था और एक ऐसे राष्ट्र का था, जिसमें आदर्श राष्ट्र के सब लक्षण विद्यमान थे। आप लिखते हैं—"सिन्धुस्थान (राष्ट्र-मार्यस्य चोत्तमम्) आर्यों का उत्कृष्ट राष्ट्र था, जो म्लेच्छ स्थान या विदेशी राज्यों से बिल्कुल भिन्न था। हमारा अभिप्राय यह है कि सिन्धुस्थान उन्हीं अर्थों में एक राष्ट्र था, जिन अर्थों में कोई भी राष्ट्र राष्ट्र कहलाता है। सिन्धुस्थान का संगठन धार्मिक नहीं था। धर्म या दर्शन से इसका कोई सम्बन्ध नहीं था। इसी तरह आर्य शब्द भी केवल राष्ट्रीय था। सिन्धुस्थान के प्रत्येक निवासी को, जो सिन्धुस्थान को अपना देश मानता था और जो इसकी संस्कृति को अपनी संस्कृति मानता था, चाहे वह वैदिक, अवैदिक, ब्राह्मण या चाण्डाल हो, आर्य कहते थे। श्रेणी या विचार-भेद से उसकी राष्ट्रीयता में कोई भेद नहीं आ सकता था। और इसी तरह म्लेच्छ प्रत्येक विदेशी को कहते थे। सिंधु तथा

म्लेच्छ की धार्मिक परिभाषा न होकर राष्ट्रीय थी।"

इससे यह स्पष्ट है कि आदि काल से ही हिन्दुस्थान यह एक हिन्दू राष्ट्र है। पाकिस्तान के समर्थकों का यह कथन कि हिन्दुस्थान न कभी एक राष्ट्र रहा है और न यह एक राष्ट्र हो ही सकता है, हिन्दुओं की पितृभूमि तथा पुण्यभूमि (धर्मभूमि) हिन्दुस्थान पर भयंकर आक्रमण है। ऐतिहासिक तथा प्रत्यक्ष प्रमाणों से यह सिद्ध होता है कि हिन्दुस्थान देश, जाति, धर्म, संस्कृति तथा भाषा की दृष्टि से एक हिन्दू राष्ट्र है। सिन्धु (नदी) और सिन्धु (समुद्र) से घिरा हुआ सिन्धुस्थान (हिन्दुस्थान) एक पृथक् देश है, जो चारों ओर से प्रकृति द्वारा सुरक्षित है। अनुलोम तथा प्रतिलोम विवाहों के द्वारा सब हिन्दुओं का रक्त एक हो चुका है। सब हिन्दू एक ही वंश के हैं। हिन्दुओं की जितनी भी भाषाएँ प्रचलित हैं, वे सब संस्कृत से उत्पन्न हुई हैं और इसलिये यह कहा जा सकता है कि सब हिन्दुओं की एक ही भाषा है। धर्म और संस्कृति की दृष्टि से हिन्दुस्थान के हिन्दू-राष्ट्र होने का प्रमाण हिन्दुस्थान की मिट्टी के कण-कण में पाया जाता है। आँखों वाले देख सकते हैं। जिन सात नदियों के कारण यह देश सिन्धुस्थान कहलाया, जिन नदियों के साथ हिन्दुओं का भौतिक ही नहीं, आध्यात्मिक सम्बन्ध भी है, वे सातों नदियाँ "सिन्धु-गंगा-यमुना-सरस्वती-गोदावरी-नर्मदा-कावेरी" हिन्दुस्थान भर में चारों दिशाओं में व्याप्त हैं। हिंदुओं के चार धाम—उत्तर में बद्रीनाथ, दक्षिण में रामेश्वर,

पूर्व में जगन्नाथ और पश्चिम में द्वारका—चार दिशाओं में विघोषित कर रहे हैं कि हिन्दुस्थान हिन्दू-राष्ट्र है। चारों धामों के बीच भूमि हिन्दुस्थान हिन्दुओं की पुण्य भूमि है। उत्तर की गंगोत्री का जल दक्षिण के रामेश्वर पर चढ़ाने का धर्म-नियम जिन्होंने बनाया था, क्या उन्होंने हिन्दुस्थान को एक राष्ट्र—हिन्दू राष्ट्र नहीं माना था? हिन्दुओं की सप्त पुरियाँ—अयोध्या, मथुरा, माया, काशी, कांची, अवन्तिका और द्वारकावती—भारत की एकता का परिचय दे रही हैं। हिन्दुओं के बारह ज्योतिर्लिङ्ग—हिमालय में केदारनाथ, सौराष्ट्र में सोमनाथ, ओंकार में परमेश्वर, श्रीशैल में मल्लिकार्जुन, उज्जयिनी में महाकाल, डाकिनी में भीमशंकर, वाराणसी में विश्वनाथ, गौतमी नदी पर त्र्यम्बक, चिताभूमि में वैद्यनाथ, दारुकावन में नागेश, सेतुबन्ध में रामेश्वर और शिवालय में धुरमेश—भारत भर में दश दिशाओं में स्थित हैं। राम, कृष्ण, शिव और शक्ति के मन्दिर हिन्दुस्थान के प्रत्येक प्रान्त में पाये जाते हैं। दिवाली जैसे त्यौहार प्रत्येक प्रान्त के हिन्दू समान रूप से मनाते हैं। रामायण, महाभारत, भागवत, वेद और गीता का प्रचार हिन्दुस्थान के प्रत्येक प्रान्त में पाया जाता है। ये प्रत्यक्ष प्रमाण डंके की चोट प्रमाणित करते हैं कि हिन्दुस्थान यह एक हिन्दू राष्ट्र है। अंग्रेजों के आने से पहले ही हिन्दुस्थान सही अर्थ में राष्ट्र था।

यह ठीक है कि हिन्दुओं में सैकड़ों जातियाँ, सैकड़ों भाषाएँ और सैकड़ों प्रथाएँ पायी जाती हैं, पर वे सब सांस्कृतिक एकता

के सूत्र में आबद्ध हैं। अनेकता में एकता स्थापित करना हिन्दू संस्कृति की विशेषता है। व्यास और वाल्मिकी, कपिल और कणाद, बुद्ध और महावीर, चन्द्रगुप्त और विक्रमादित्य, राम और कृष्ण, शिवाजी और राणा प्रताप, गुरु गोविन्दसिंह और समर्थ रामदास, शंकराचार्य और रामानुजाचार्य, कालिदास और तुलसीदास, नानक और चैतन्य, राम मोहनराय और दयानन्द, शिव और शक्ति, वेद और गीता, रामायण और महाभारत, गंगा और सिन्धु—इन सबको हिन्दू समाज आत्मीयता की दृष्टि से देखता है और इनको अपने प्राचीन इतिहास की अमूल्य सम्पत्ति समझता है। शत्रु और मित्र की भावना भी सब हिंदुओं के लिये एक ही रही है। तात्पर्य यह है कि हिन्दुस्थान को राष्ट्र की किसी भी कसौटी पर परखिये, वह एक हिन्दू राष्ट्र ही प्रमाणित होता है।

हिन्दुस्थान, हिन्दू धर्म, हिन्दू संस्कृति, हिन्दू इतिहास, हिन्दुओं की राजनीतिक स्वतंत्रता—इनके प्रति हिन्दुओं के हृदय में जो आत्मीयता का भाव विद्यमान है, उसको यदि एक शब्द में प्रकटाना हो, तो वह शब्द 'हिन्दुत्व' है। इसी लिये हिन्दू महासभा की यह घोषणा है—"स्वराज्य हमारा ध्येय है और हिंदुत्व हमारा प्राण है।" हिन्दुत्व की रक्षा के लिये स्वराज्य की आवश्यकता है। हिन्दू महासभा ने 'हिन्दू' की निम्न लिखित व्याख्या स्वीकार की है :—

आसिन्धु सिन्धुपर्यन्ता यस्य भारत भूमिका।

पितृभू पुण्यभूश्चैव स वै हिन्दुरितिस्मृतः ॥

अर्थात् जो कोई भी व्यक्ति सिन्धु (नदी) से लेकर सिन्धु (समुद्र) तक फैली हुई इस भारत भूमि को अपनी पितृ-भूमि और भूमि समझता है, वह प्रत्येक व्यक्ति हिन्दू है। यह व्याख्या बिल्कुल नपी-तुली है। पितृ-भूमि में देश और जाति का भाव विद्यमान है और पुण्य भूमि में धर्म, संस्कृति तथा भाषा का समावेश हो जाता है। जो कोई भी व्यक्ति हिन्दुस्थान को अपने पूर्वजों की भूमि मानता है अर्थात् जिसके शरीर में इस जाति के पूर्वजों का खून बहता हो, जो हिन्दुस्थान में ही स्थापित हुए किसी धर्म को मानता हो और जो हिन्दुस्थान की संस्कृति को अपनी पैतृक सम्पत्ति समझता हो, वह प्रत्येक व्यक्ति हिन्दू है। इस दृष्टि से आर्यसमाजी, देवसमाजी, सनातनी, जैन, बौद्ध ये सब हिन्दू हैं और पारसी, ईसाई, मुसलमान, एंग्लो इण्डियन और यहूदी हिन्दुओं से पृथक् हैं अर्थात् सम्प्रदाय हैं। हिन्दू ही हिन्दुस्थान के राष्ट्रीय हैं। हिन्दू हिन्दुस्थान में सम्प्रदाय नहीं है, प्रत्युत हिन्दू स्वयमेव एक राष्ट्र है और इस दृष्टि से हिन्दू महासभा यह नाम साम्प्रदायिक न हो कर राष्ट्रीय है।

जो लोग कहते हैं कि हिन्दुस्थान यह एक राष्ट्र नहीं है, वे निसन्देह भारत की उन्नति के शत्रु हैं। ग्रेट ब्रिटेन (United Kingdom) संयुक्त राज्य अमेरीका (United states of America) रूस (U. S S. R.) आदि राष्ट्रों में विभिन्न जातियाँ, विभिन्न धर्म तथा संस्कृतियां और विभिन्न भाषाएँ

विद्यमान हैं। फिर भी वे राष्ट्र कहलाते हैं। फिर पाकिस्तान के समर्थक किस आधार पर कहते हैं कि हिन्दुस्थान यह राष्ट्र नहीं है। सिवा स्वार्थ के और उनके पास और कोई तर्क नहीं है। साम्प्रदायिक बुद्धि सत्य को समझने में असमर्थ होती है। स्वार्थान्ध आँखें सत्य को नहीं देख सकतीं। थोड़ी देर के लिये हम मान लेते हैं कि हिन्दुस्थान यह राष्ट्र नहीं है, तो फिर हिन्दुस्थान में हिन्दू राष्ट्र और मुस्लिम राष्ट्र की बात क्यों? एक ओर तो हिन्दुस्थान को राष्ट्र न समझना और दूसरी ओर एक के स्थान पर दो राष्ट्र की कल्पना करना—ये परस्पर विरोधी बातें केवल इसलिये की जा रही हैं कि येन-केन प्रकारेण पाकिस्तान का समर्थन किया जा सके। मुस्लिम लीग के नेताओं की बुद्धि में पॅन इस्लामिज्म (इस्लाम के फैलाव) का पागलपन काम कर रहा है। और इस लिये कहते हैं कि मुस्लिम एक राष्ट्र है। आज हिन्दुस्थान में जो मुसलमान हैं, उनमें ९५ प्रतिशत वे मुसलमान हैं, जो पहले हिन्दू थे। मौलाना आज़ाद कहते हैं–"हिन्दुस्थान के ९५ प्रतिशत मुसलमान हिन्दुओं की औलाद हैं। ५ प्रतिशत मुसलमान विजेताओं के साथ आये थे, लेकिन वे ५ प्रतिशत मुसलमान भी जिनमें मेरा परिवार भी है, यहाँ हिल-मिल गये हैं। क्या हिन्दुओं के मुसलमान बन जाने से उनका राष्ट्र बदल गया? हिन्दुओं में मुस्लिम राष्ट्र यह एक धर्माधिष्ठित कल्पना है, उसको यहाँ भोगोलिक आधार नहीं है। और इस मजहबी कल्पना के मूल में इस्लाम के फैलाव का राष्ट्र-द्रोही भाव विद्यमान है।

हिन्दू महासभा के नेताओं ने मुस्लिम विचार-धारा का खूब अध्ययन किया है। हिन्दू महासभा पूरे ज़ोर के साथ कहती है— "हिन्दुस्थान यह एक हिन्दू राष्ट्र है। मुसलमान एक अल्प-संख्यक सम्प्रदाय है। हिन्दू राष्ट्र में मुस्लिम राष्ट्र नहीं हो सकता।"

ध्यान रहे, हिन्दू महासभा यद्यपि हिन्दुस्थान को ऐतिहासिक सत्य की दृष्टि से हिन्दू-राष्ट्र मानती है तथापि वह हिन्दुओं के लिये कोई विशेषाधिकार नहीं चाहती। वह शुद्ध राष्ट्रीयता की समर्थक है।

★

मिशन योजना में पाकिस्तान के बीज

विधान परिषद् का मुख्य कार्य सुदृढ़ केन्द्र स्थापित करना है। देश के वर्तमान साम्प्रदायिक उपद्रवों को देखते हुए केन्द्र को सुदृढ़ बनाना और भी अधिक आवश्यक हो गया है। विधान परिषद् नागरिक अधिकारों के मौलिक आधार निर्धारित करेगी, जिनकी रक्षा के लिए केन्द्र का सुदृढ़ होना आवश्यक है।

—बंबई के भूतपूर्व गृह मंत्री श्रीयुत के० एम० मुंशी

आसाम पूरी ताकत के साथ प्रान्तों की गुटबन्दी का विरोध करेगा। —आसाम के प्रधान मंत्री श्रीयुत बारदोलाई

मुस्लिम लीग हमारे पैरों में बेड़ी की तरह है।

—आचार्य कृपलानी

मंत्रि-मण्डल मिशन की १६ मई १९४६ की विचित्र योजना ब्रिटिश कूट नीतिज्ञता की परिचायक है। इस योजना में शब्द पाकिस्तान न होते हुए भी तत्व पाकिस्तान विद्यमान है और शब्द अखण्ड हिन्दुस्तान होते हुए भी सही अर्थ में अखण्ड हिंदुस्तान नहीं है। वास्तव में हिंदुस्तान को चार ऐसे भागों में विभाजित किया गया है जिनकी एकता की कोई आशा नहीं है। जब तक हिंदुस्तान एक इकाई नहीं हो जाता, तब तक उसके उत्थान की कोई आशा नहीं है। मंत्रि मण्डल मिशन और वायसराय ने 'विभाजन और शासन' की नीति से हिन्दुस्तान में सम्प्रदायवाद

को संगठित तौर पर सुदृढ़ बनाने का प्रयत्न किया है। और यह प्रयत्न इसलिए किया गया है कि हिंदुस्तान के स्वतंत्र हो जाने पर भी ब्रिटिश साम्राज्यवाद के संचालक भारतीय राजनीति में महत्व पूर्ण पार्ट अदा करते रहें। इस योजना में मजहब के आधार पर विभाजित 'अ' 'ब' 'स'–ये तीन विभाग और अपनी पृथक शान लिये हुये भारतीय रियासतों का चौथा विभाग कमजोर केन्द्रीय सरकार से जोड़ दिये गये हैं। इन चारों विभागों की संयुक्त विधान परिषद् (Constituent Assembly) भारत के भाग्य का निर्णय करेगी। विधान परिषद् के लिए 'अ' 'ब' 'स' विभागों का चुनाव साम्प्रदाय की संख्या (१० लाख का एक प्रतिनिधि) के आधार पर किया गया है। तीनों विभागों के साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व की तालिका नीचे दी जाती है। जिसके आधार पर चुनाव हुआ है।

'अ' विभाग

प्रान्त	आम	मुस्लिम	कुल संख्या
मद्रास	४५	४	४६
बम्बई	१६	२	२१
यू० पी०	४७	८	५५
बिहार	३१	५	३६
सी० पी०	१६	१	१७
ओरिसा	६	०	६
कुल	१६७	२०	१८७

उत्तर-पश्चिम 'ब' विभाग

प्रान्त	आम	मुस्लिम	सिख	कुल संख्या
पंजाब	८	१६	४	२८
सीमाप्रान्त	०	३	०	३
सिंध	१	३	०	४
कुल	६	२२	४	३५

उत्तर-पूर्व 'स' विभाग

प्रान्त	आम	मुस्लिम	कुल संख्या
बंगाल	२७	३३	६०
आसाम	७	३	१०
कुल	३४	३६	७०

देहली, अजमेर-मेरवारा और कुर्ग कौन्सिल—इनका एक एक प्रतिनिधि अर्थात् तीन प्रतिनिधि 'अ' विभाग में शामिल होंगे और ब्रिटिश बलूचिस्तान का एक प्रतिनिधि 'ब' विभाग में शामिल किया गया है। ये ४ प्रतिनिधि, ब्रिटिश भारत के २९२ और रियासती भारत के ९३ प्रतिनिधि मिलकर विधान परिषद के सदस्यों की संख्या ३८९ है।

इन पंक्तियों के लिखते समय तक रियासतों के ६३ प्रतिनिधियों का चुनाव होना बाकी है। ब्रिटिश भारत के २६६ प्रतिनिधियों के चुनावों का परिणाम यह है—२०६ कांग्रेस, ७४ मुस्लिम लीग, ७७ स्वतन्त्र (आम), २ स्वतन्त्र (मुस्लिम) और ३ अकाली सिख।

विधान परिषद् के तीनों गुटों का प्रतिनिधित्व

'अ' गुट (१६०)

प्रान्त	कांग्रेस	स्वतन्त्र (आम)	लीग
मद्रास	४५		४
बम्बई	१६		२
ओरिसा	८	१	
संयुक्तप्रान्त	४५ (१ मुस्लिम)	३	७
मध्यप्रान्त	१६		१
बिहार	२८	३	५
दिल्ली	१		
अजमेर-मेरवाड़ा	१		
कुर्ग	१		
कुल	१६४	७	१६

'ब' गुट (३६)

प्रान्त	कांग्रेस	स्वतन्त्र (आम)	सिख (अकाल)	लीग	स्वतन्त्र मुस्लिम
पंजाब	७ (१ सिख)	२	३	१५	१
सीमाप्रान्त	२ (मुस्लिम)			१	
सिन्ध	१			३	१
बलूचिस्तान					
कुल	१०	२	३	१६	२

'स' गुट (७०)

प्रान्त	कांग्रेस	स्वतन्त्र (आम)	लीग
बंगाल	२५	२	३३
आसाम	७		३
कुल	३२	२	३६

यह स्पष्ट है कि प्रांतों की गुटबंदी मुस्लिम लीग को खुश करने के लिये की गई है। 'ब' और 'स' विभाग को मि० जिन्ना खुले तौर पर पाकिस्तान कह रहे हैं। उत्तर-पश्चिम 'ब' विभाग का केन्द्र पंजाब है और उत्तर-पूर्व 'स' विभाग का केन्द्र बंगाल है, पर पंजाब और बंगाल को मुस्लिम-बहुमत प्रांत नहीं कहा जा सकता। पंजाब की जन-संख्या लगभग ३ करोड़ ४३ लाख है। इसमें ५३ प्रतिशत मुसलमान हैं, हरिजन समेत हिन्दू ३० प्रति-

शत हैं और सिख १४ प्रतिशत हैं। यदि ५३ प्रतिशत मुस्लिम जन-संख्या के विरुद्ध ४४ प्रतिशत हिन्दू-सिख जन-संख्या को अल्पमत माना जाता है और पंजाब को पाकिस्तानी प्रांत बनाया जाता है, तो फिर यही न्याय सम्पूर्ण भारत के लिये, जिसमें हिन्दू ७५ प्रतिशत और मुसलमान केवल २३ प्रतिशत हैं, क्यों नहीं लागू किया जाता ? बंगाल के सम्बन्ध में डॉ० श्यामाप्रसाद मुकर्जी कहते हैं—"बंगाल के अल्पमत हिन्दुओं की, जो बंगाल में ४४ प्रतिशत हैं और जिनकी जन-संख्या लगभग ३ करोड़ है, इच्छा की उपेक्षा करते हुए मि० जिन्ना कहते हैं कि केवल बंगाल के मुसलमान ही, जो बंगाल में ५४ प्रतिशत हैं, यह निर्णय करेंगे कि बंगाल हिन्दुस्थान में रहेगा या नहीं। यदि यह न्याय है तो ३० करोड़ हिन्दुओं को, जो भारत में ७५ प्रतिशत हैं, भारत का विभाजन होना चाहिये या नहीं, यह निर्णय करने का अधिकार क्यों न हो ?" मिशन-योजना में विभाजन की नीति प्रच्छन्न रूप में विद्यमान है।

वास्तव में सिंध, सीमाप्रांत और ब्रिटिश बलूचिस्तान—ये तीन ही भारत में मुस्लिम बहुमत प्रांत हैं और मजा यह कि ये तीनों ही केन्द्रीय सरकार की आर्थिक सहायता से पल रहे हैं। 'स' विभाग में बंगाल के साथ हिन्दू बहुमत प्रांत आसाम को, जिसमें ६३ प्रतिशत हिन्दू और ३१ प्रतिशत मुसलमान हैं, संयुक्त करना एक आश्चर्य की बात है। मिशन-योजना में कहा गया है—
"The argument for a separate State of Pakistan

was based, first, upon the right of the Muslim majority to decide their method of Government according to their wishes, and secondly upon the necessity to include snbstantial areas in which Muslims are in a minority in order to make Pakistan administratively and economically workable". तात्पर्य यह कि "पाकिस्तान बिल्कुल अव्यवहार्य है"—यह प्रबल तर्कों से प्रमाणित करनेवाले केबिनेट मिशन ने मुस्लिम लीग की इच्छानुसार, मर्यादित रूप में ही सही, पाकिस्तान को व्यवस्था तथा आर्थिक दृष्टि से व्यवहार्य (Workable) बनाने के लिये ही हिंदू बहुमत प्रान्त आसाम को बंगाल के साथ जोड़ कर आसाम के हिंदू बहुमत को अल्पमत में परिणत कर दिया है।

यह ठीक है कि मिशन ने पाकिस्तान को उस रूप में स्वीकृत नहीं किया है, जिस रूप में मुस्लिम लीग चाहती थी। यह भी ठीक है कि मिशन ने भारत की अखण्डता के लिये एक केन्द्रीय यूनियन को स्वीकार किया है, पर यूनियन के अधिकार में केवल विदेश (Foreign Affairs) रक्षा (Defence) और यातायात (Communications) विभाग ही दिये गये हैं। शेषाधिकार प्रांतीय विभागों को सौंप दिये गये हैं। ऐसी कमजोर केन्द्रीय सरकार न तो सम्पूर्ण राष्ट्र के उत्थान के लिये कोई योजना बना सकती है और न ही राष्ट्र में अनुशासन-बद्ध आन्त-

रिक शांति स्थापित कर सकती है। यदि केन्द्रीय सरकार उप-युक्त दोनों बातें नहीं कर सकती, तो हम पूछते हैं कि आखिर केन्द्रीय सरकार है किस मर्ज की दवा? १६ अगस्त १६४६ को मुस्लिम लीग के 'प्रत्यक्ष-संघर्ष' दिवस के अवसर पर कलकत्ता में जो भीषण दंगा हुआ, उसमें हज़ारों को मौत के घाट उतार दिया गया और करोड़ों की सम्पत्ति खाक में मिला दी गई। कल-कत्ता की दुर्घटना ने भली भाँति साबित कर दिया था कि आन्त-रिक शान्ति के लिये केन्द्रीय सरकार सर्वोच्च सत्ता के रूप में हो, जो ऐसी घटनाओं की रोकथाम कर सके, पर कलकत्ता की दुर्घटना के बाद २४ अगस्त को अन्तःकालीन सरकार के संगठन के सम्बन्ध में ब्राडकास्ट भाषण में वायसराय महोदय ने कहा—

"As I have already made clear. I shall implement fully His Majesty s Government's policy of giving the new Government the maximum freedom in the day-to-day administration of the country. In the field of provincial autonomy, of course, the provincial Governments have a very wide sphere of authority in which the Central Government cannot intervene. My New Governmet will not have any power, or indeed any desire, to trespass on the field of provincial administration.

अर्थात्—"जैसा कि मैं पहले ही स्पष्ट कर चुका हूँ, नई सरकार को दैनिक शासन व्यवस्था में अधिकतम स्वतंत्रता देने की सम्राट् की सरकार की नीति को मैं पूर्णतया कार्यरूप में परिणत करूँगा। निश्चय ही प्रांतीय सरकारों के अधिकार का क्षेत्र विस्तृत है। केन्द्रीय सरकार प्रांतीय शासन-व्यवस्था में हस्तक्षेप नहीं कर सकती। मेरी नयी सरकार को प्रांतीय शासन के क्षेत्र में हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार न होगा और न वह ऐसा करना ही चाहेगी।"

अन्तःकालीन सरकार के उपाध्यक्ष पंण्डित जवाहरलाल-नेहरू विदेशों से सम्बन्ध स्थापित कर सकते हैं, विदेशों में राज दूत नियुक्त कर सकते हैं और दक्षिण अफ्रीका के प्रश्न को लेकर जनरल स्मट्स के विरुद्ध आवाज बुलंद करने के लिए भारतीय प्रतिनिधि मंडल को मित्र राष्ट्र-संघ में भेज सकते हैं, परन्तु स्वदेश में किसी एक प्रान्त में चाहे जैसा कत्लेआम हो रहा हो, स्त्रियों को बेइज्जत किया जा रहा हो और जबर्दस्ती तलवार के जोर से धर्म परिवर्त्तन कराया जा रहा हो, फिर भी पण्डित जवाहरलाल नेहरू प्रान्तीय मंत्रिमंडल की इच्छा के विरुद्ध कुछ नहीं कर सकते। पंण्डित जवाहरलाल नेहरू ने कहा है कि मैं पूर्व बंगाल जाना चाहता था, पर बंगाल के लीगी मंत्रि-मंडल ने मुझे सुविधायें देने से इन्कार कर दिया। सरकार ने केवल अपने स्वार्थ के लिए ऐसी परिस्थिति निर्माण की है और वह चाहती है कि ऐसी ही परिस्थिति बनी रहे।

संसार के किसी भी स्वतन्त्र राष्ट्र में ऐसी दुर्बल केन्द्रीय सरकार की कोई मिसाल नहीं मिलती। मिशन योजना में प्रांतों का साम्प्रदायिक समुदायीकरण और केन्द्रीय सरकार के अधिकारों का अपहरण पाकिस्तान का ही दूसरा रूप है। आसाम बंगाल और पंजाब के हिन्दुओं को पाकिस्तानियों की दया पर छोड़ दिया गया है। मिशन ने सिखों को भारत की एक प्रमुख जाति स्वीकार किया है, पर उन्हें बिना किसी संरक्षण के 'पाकिस्तान की प्रजा' बना दिया गया है। यूनियन में भारतीय रियासतों के प्रतिनिधि प्रजा के द्वारा निर्वाचित होंगे, इस प्रकार कोई आश्वासन मिशन ने नहीं दिया है। भारतीय रियासतों को यह अधिकार दिया गया है कि वे अपने अधिकारों में से चाहे जितने यूनियन को सौंप दें और चाहे जितने अपने पास रक्खें। इस प्रकार हम देखते हैं कि मिशन योजना में भारतीय यूनियन को कमजोर बनाये रखने का प्रयत्न किया गया है।

हिन्दू महासभा प्रान्तों की साम्प्रदायिक गुटबन्दी का विरोध करती है और चाहती है कि सुदृढ़ केन्द्रीय सरकार की स्थापना हो, जिसको भारत के उत्थान के लिये कोई भी अखिल भारतीय योजना बनाने, प्रान्तीय शासन-विधान बनाने और प्रान्तीय सरकारों की किसी भी प्रकार की अनुचित मनमानी की रोकथाम करने का अधिकार प्राप्त हो।

कानून के पण्डितों का कथन है कि मिशन - योजना में प्रांत को किसी समुदाय विशेष में सम्मिलित होने या न होने का अधि-

कार दिया गया है। वायसराय महोदय ने १५ जून १९४६ को मौलाना आजाद को लिखे हुये पत्र में भी आश्वासन दिया था कि "The statement of May 16 does not make grouping compulsory." अर्थात् १६ मई के वक्तव्य के अनुसार प्रान्तों की गुटबन्दी अनिवार्य नहीं है।

खान अब्दुलगफ्फारखां ने गुटबन्दी के बारे में अपने अखबार 'पख्तून' में २८ जुलाई को लिखा है—'प्रान्तों की गुटबंदी का सुझाव पहले पहल लीग को राजी करने के लिये मेरी स्वीकृति से रक्खा गया था। पर मैं अब भी यह कहता हूँ कि किसी प्रान्त को किसी गुट में शामिल होने का अधिकार है।' २९ सितम्बर को पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने आसाम के प्रधान मंत्री श्रीयुत् बारडोलाई को लिखा है—'गुटबंदी की धाराओं के सम्बन्ध में मैं आसाम की जनता की भावना को समझता हूँ। मेरे विचार से आपकी भावनाओं की पूरी रक्षा हो सकेगी। १६ मई की घोषणा को स्वीकार करने के बाद हमें विधान असेम्बली के भिन्न-भिन्न विभागों में जाना अनिवार्य रूप में स्वीकार करना होगा। हमारी स्थिति बिल्कुल स्पष्ट है कि प्रान्तीय स्वायत्तता की रक्षा की जाय। एक प्रान्त को गुटबंदी तथा अपने विधान के सम्बन्ध में निर्णय करने का पूरा अधिकार है। यह सत्य है कि हमने विधान का सही अर्थ लगाने में फेडरल कोर्ट के निर्णय को मानना स्वीकार किया है और हमें उस निर्णय पर कायम रहना चाहिये। परंतु किसी भी अवस्था में हम इस बात से सहमत

नहीं हो सकते कि आसाम जैसे प्रान्त को उसकी इच्छा के विरुद्ध बाध्य किया जाय। कुछ भी हो, यदि आसाम काफी सुदृढ़ है, तो उसकी इच्छा के विरुद्ध कोई बात नहीं होगी।'

९ दिसंबर १९४६ को विधान परिषद् का कार्य प्रारम्भ करने का निश्चय किया गया। चूँकि लीग अन्तःकालीन सरकार में शामिल हुई, इसलिये यह आशा की गई थी कि वह विधान परिषद् में भी शामिल होगी। अन्तःकालीन सरकार में लीगी सदस्यों के शामिल होते समय वायसराय ने पण्डित जवाहरलाल नेहरू को पत्र में आश्वासन दिया था कि लीग १६ मई की योजना को भी स्वीकार करेगी। मि० जिन्ना ने कहा कि मैंने वायसराय को विधान परिषद् में शामिल होने का कोई आश्वासन नहीं दिया। वायसराय ने जिन्ना को पत्र लिखा कि आप १६ मई का वक्तव्य स्वीकार करने के लिये अपनी कौन्सिल बुला लें। १७ नवम्बर १९४६ को मि० जिन्ना ने वायसराय को एक लम्बा पत्र भेजा, जिस में लिखा था कि कांग्रेस ने १६ मई की योजना को पूर्णतया स्वीकार नहीं किया है। पत्र में बिहार की परिस्थिति की ओर वायसराय का ध्यान आकर्षित किया गया था कि बिहार में ३० हज़ार व्यक्ति मारे गये हैं और डेढ़ लाख गृह-हीन हो गये हैं। पत्र के अन्त में लिखा था-'मेरी राय है कि आप बिना विलम्ब किये विधान-परिषद् को अनिश्चित काल के लिये स्थगित करने की घोषणा कर दें और हम सब लोग पहले शांति की स्थापना में पूरी शक्ति लगा दें।' पर शांति के इच्छुक (?) मि०

जिन्ना ने फौरन दूसरा वक्तव्य दे दिया—'जब तक पाकिस्तान नहीं हो जाता, तब तक शांति स्थापित नहीं हो सकती।' २१ नवम्बर १६४६ को मि० जिन्ना ने एक वक्तव्य में धमकी भी दे डाली कि 'विधान-परिषद् की यह बैठक जबर्दस्ती लादी जाने के कारण स्थिति और भी बिगड़ गई है, जिसका नतीजा बड़ा भयानक होगा।'

गुटबंदी की धाराओं के सम्बन्ध में कांग्रेस के विचार से मन्त्रि-मण्डल मिशन और वायसराय महोदय भली भाँति परिचित थे। यदि कांग्रेस के विचार पर वायसराय को आपत्ति होती, तो वे कांग्रेस को अन्तःकालीन सरकार गठित करने के लिये निमन्त्रित न करते। परन्तु यह सब कुछ हो जाने के बाद मुस्लिम लीग को खुश करने के लिये ब्रिटिश सरकार ने एक नई चाल चली। सरकार ने सोचा कि यदि मुस्लिम लीग विधान परिषद् में शामिल न हुई, तो वह अन्त कालीन सरकार में भी न रह सकेगी और इससे काँग्रेस की ताकत बढ़ जायेगी और वह ब्रिटिश साम्राज्यवाद की जड़ को उखाड़ फेंकने में शीघ्र ही सफल हो जायेगी। हाँ, केवल इसी विचार से प्रेरित होकर २७ नवम्बर १६४६ को गुटबंदी की धाराओं की मुस्लिम लीग के अनुकूल व्याख्या निश्चित करने के लिये वायसराय को पण्डित जवाहरलाल नेहरू, सरदार वल्लभभाई पटेल, सरदार बलदेवसिंह मि० जिन्ना और मि० लियाकतअलीखां के साथ लंदन बुलाया गया। कांग्रेस की ओर से जवाब दिया गया कि हमें किसी भी प्रश्न पर

स्पष्टीकरण की कोई आवश्यकता नहीं है, इसलिये कांग्रेस के नेताओं का लंदन आना व्यर्थ है, प्रधान मन्त्री मि० एटली के आग्रह करने से वायसराय के साथ पण्डित जवाहरलाल नेहरू सरदार बलदेवसिंह, मि० जिन्ना और मि० लियाकतअलीखाँ लंदन गये। ५ दिसम्बर १९४६ को प्रधान मन्त्री मि० एटली, मन्त्रिमंडल मिशन के तीन सदस्य, वायसराय और भारतीय नेताओं की संयुक्त कान्फ्रैन्स हुई, परन्तु हमेशा की तरह कांग्रेस और लीग में कोई समझौता न हो सका। ब्रिटिश सरकार ने भारतीय नेताओं के साथ हुई चर्चा के सम्बन्ध में निम्न लिखित अधिकृत वक्तव्य प्रकाशित किया :—

"इस बातचीत का उद्देश्य विधान-निर्मात्री असेम्बली में सब पार्टियों का सम्मिलित होना और उनका सहयोग हासिल करना था। यह आशा नहीं की जाती कि कोई अन्तिम समझौता हो जाये, क्योंकि भारतीय प्रतिनिधियों को किसी भी अन्तिम निर्णय से पूर्व अपने सहकारियों से परामर्श करना होगा।

"मुख्य कठिनाई ब्रिटिश मंत्री-मिशन के १६ मई वाले वक्तव्य के पैराग्राफ १९ (५) और (८) की व्याख्याओं पर उत्पन्न हुई। यह पैराग्राफ विभागों [सैक्शन] की बैठकों से सम्बद्ध था, जो कि इस प्रकार है—

१९. (५)—ये विभाग [सैक्शन] प्रत्येक विभाग में शामिल किये गये प्रांतों के लिये प्रान्तीय विधानों को तय करेंगे और उन प्रान्तों के लिये कोई गुट [ग्रुप]-विधान बनाने का

भी निश्चय करेंगे; और यदि ऐसा किया गया तो गुट द्वारा विचारणीय प्रान्तीय विषयों का भी निर्णय करेंगे। प्रान्तों को गुटों से अलग होने का अधिकार निम्न उपधारा (८) के नियमानुसार होगा—

१६. (८)—नये विधान-सम्बन्धी समझौते के अमल में आते ही किसी भी प्रांत को उस गुट से अलग हो जाने का चुनाव करने की स्वतंत्रता रहेगी, जिसमें उसे रखा गया है। ऐसा निर्णय उस प्रांत की धारा-सभा द्वारा नई विधान-निर्मात्री असेम्बली के मातहत पहले आम चुनावों के बाद किया जायेगा।

"ब्रिटिश मन्त्री-मिशन का सदैव यह मन रहा है कि समझौता न होने की अवस्था में विभागों [सेक्शन] के निर्णय त्रिभागों के प्रतिनिधियों के सामान्य बहुमत से किये जायें। इस दृष्टिकोण को मुस्लिम लीग ने मान लिया है, किन्तु कांग्रेस ने अपना दृष्टिकोण अलग ही रखा है। उसका कहना है कि वक्तव्य का वास्तविक अर्थ, सारे वक्तव्य को पढ़ने के बाद, यह प्रतीत होता है कि प्रांतों को गुटबन्दी और अपने विधानों के निश्चय का अधिकार है।

"सम्राट्-सरकार ने कानूनी सलाह ली है और उससे भी यही पुष्ट होता है कि १६ मई के वक्तव्य का वही अर्थ है, जिसे ब्रिटिश मन्त्री-मिशन ने सदैव अपना अभिप्राय बताया है। इस लिये वक्तव्य का यह अंश, इस व्यवस्था के साथ, १६ मई की योजना का अनिवार्य अंग समझा जाना चाहिये, ताकि भारतीय

लोग ऐसा विधान तैयार कर सकें, जिसे सम्राट्-सरकार पार्लियामेंट के समक्ष प्रस्तुत कर सके। इसलिये इसे विधान-निर्मात्री के सब दलों द्वारा स्वीकार किया जाना चाहिये।

"तथापि, यह स्पष्ट है कि १६ मई के वक्तव्य के कुछ अंशों पर व्याख्या की जरूरत हो सकती है। सम्राट्-सरकार को आशा है कि यदि मुस्लिम लीग की कौंसिल विधान-निर्मात्री असेम्बली में भाग लेने के लिये सहमत हुई, तो उसे कांग्रेस की तरह ही यह भी स्वीकार्य होगा कि किसी भी पक्ष द्वारा पेश किये गये व्याख्या-सम्बन्धी मामलों को फेडरल कोर्ट को सौंप दिया जायेगा और वह उसका फैसला मान लेगी, ताकि यूनियन विधान-निर्मात्री असेम्बली और सैक्शनों में दोनों जगह कार्य-प्रणाली मन्त्री-मिशन की योजना के अनुकूल ही रहे।

"सम्राट्-सरकार तात्कालिक विवाद-ग्रस्त विषय के सम्बन्ध में कांग्रेस से अनुरोध करती है कि वह ब्रिटिश मन्त्री-मिशन की व्याख्या को स्वीकार कर ले, जिससे मुस्लिम लीग को अपने रवैये पर पुनर्विचार करने का अवसर मिल जाय। यदि मन्त्री-मिशन द्वारा अपने दृष्टिकोण को फिर दुहराये जाने के बावजूद, विधान-निर्मात्री असेम्बली यह चाहे कि इस सैद्धान्तिक मुद्दे को फेडरल कोर्ट के फैसले के लिये भेजा जाए, तो ऐसा संकेत किसी बहुत निकट की तिथि पर कर देना चाहिए। उस दशा में यह उपयुक्त होगा कि विधान-निर्मात्री असेम्बली के विभागों की बैठकें फेडरल कोर्ट का फैसला होने तक स्थगित कर दी जायें।

"विधान-निर्मात्री असेम्बली की सफलता के आसार तब तक नहीं हो सकते, जब तक कि वह किसी सहयोगपूर्ण प्रणाली के आधार पर न हो। यदि एक ऐसी विधान-निर्मात्री असेम्बली द्वारा विधान बनाया जाय, जिसमें भारतीय जनता के एक बड़े भाग का प्रतिनिधित्व न हुआ हो, तो सम्राट्-सरकार ऐसे विधान को देश के किन्हीं अनिच्छुक भागों पर लादने से सहमत नहीं, जैसा कि कांग्रेस भी विचार प्रकट कर चुकी है।"

उपर्युक्त वक्तव्य में प्रांतों की प्रारम्भिक गुटबंदी को अनिवार्य करके प्रांत के आत्म-निर्णय के अधिकार को कुचल दिया गया है। कांग्रेस का दृष्टिकोण यह था कि प्रांतों को गुट बनाने तथा अपने निज के विधान बनाने के सम्बन्ध में स्वयं निश्चय करने की स्वतत्रता है और इसलिये प्रांतीय गुटों के निश्चय उनके समस्त सदस्यों के बहुमत से नहीं हो सकते। 'ब' और 'स गुटों में लीग का बहुमत होने से लीग इस बात पर जोर देती रही है कि प्रांतीय गुटों के निर्णय समस्त सदस्यों के बहुमत से ही होने चाहिये। लीग 'ब' और 'स' गुटों में अपना एकाधिकार चाहती है और इसीलिये समस्त सदस्यों के बहुमत के निश्चय स्वीकार किये जाने पर वह जिद कर रही है। मि० जिन्ना को 'बहुमत' से इतना प्यार है, तो वे विधान-परिषद के समस्त सदस्यों के सामान्य बहुमत के निर्णय पर क्यों पाबंदियाँ लगाना चाहते हैं? वक्तव्य में कहा गया है कि विधान 'अनिच्छुक' भागों पर नहीं लादा जायेगा। इससे बात जहाँ की तहाँ ही रहती है। जिस

प्रकार लीग विधान-परिषद् द्वारा निर्मित विधान को मानने के लिये बाध्य नहीं है, उसी प्रकार 'स' गुट के लीगी विधान को मानने के लिये आसाम भी बाध्य नहीं है। आसाम के प्रधान मंत्री श्रीयुत् बारडोलाई ने घोषणा कर दी है कि आसाम पूरी ताक़त के साथ प्रांतीय गुटबंदी का विरोध करेगा।

इस वक्तव्य ने मुस्लिम लीग को विधान-परिषद् की प्रगति में बाधा उपस्थित करने का पूर्ण अधिकार प्रदान किया है।

यदि मुस्लिम लीग विधान-परिषद् में शामिल न हुई, तो वह विधान-परिषद् द्वारा निर्मित विधान को स्वीकार नहीं करेगी और संघर्ष बना ही रहेगा। यदि लीग शामिल हो जाय, तो यह निश्चित है कि वह केन्द्रीय सरकार को सुदृढ़ बनाने का विरोध करेगी। लीग ने केन्द्रीय सरकार को कमज़ोर बनाये रखने को भी साम्प्रदायिक प्रश्न बना लिया है। ब्रिटेन के प्रधान मंत्री मि० एटली ने १६ मार्च १९४६ को भारत के सम्बन्ध में कहा था—"We cannot allow a minority to Place a veto on the advance of a majority." अर्थात्—"हम अल्प-संख्यक दल को बहु-संख्यक की प्रगति में बाधक नहीं बनने देंगे" परन्तु मिशन-योजना में और ब्रिटिश सरकार के ६ दिसम्बर १९४६ को प्रकाशित वक्तव्य में अल्प-संख्यक दल को यह अधिकार दिया गया है कि वह बहु-संख्यक की टाँग पकड़ कर उसको आगे बढ़ने से रोकें। आचार्य कृपलानी ने १० सितम्बर १९४६ को बनारस के भाषण में ठीक ही कहा—"मुस्लिम लीग हमारे

पैर में बेड़ी की तरह है। लीगी कहते हैं कि वे भारतीय नहीं हैं, पर वे भारत से बाहर जाना भी नहीं चाहते।" वास्तव में मुस्लिम लीग महान् राष्ट्र भारत के पैर में बेड़ी का काम कर रही है। जब तक यह बेड़ी भारत के पैर में पड़ी रहेगी, तब तक भारत संसार के अन्य स्वतन्त्र राष्ट्रों की तरह अपनी सर्वाङ्गीण उन्नति नहीं कर सकता।

कांग्रेस ने गुटबन्दी की धाराओं के सम्बन्ध में फेडरल कोर्ट से निर्णय कराने का विचार त्याग दिया है और आसाम को यह छूट दे दी है कि वह समय देख कर जैसा उचित समझे, करे। लन्दन-कान्फ्रेंस विधान-परिषद् को स्थगित कराने की एक चाल थी, पर सरदार पटेल ने घोषणा की कि चाहे जो कुछ हो जाय, विधान-परिषद् नियत समय पर होकर रहेगी। ६ दिसम्बर १९४६ को मुस्लिम लीग के शामिल हुये बिना ही विधान-परिषद् का अधिवेशन डॉक्टर सच्चिदानन्द सिनहा की अस्थायी अध्यक्षता में प्रारम्भ हुआ। ११ दिसम्बर १९४६ को सर्व-सम्मति से डॉक्टर राजेन्द्रप्रसाद विधान-परिषद् के स्थायी अध्यक्ष निर्वाचित हुए। स्थायी अध्यक्ष के रूप में अपना प्रारम्भिक भाषण देते हुए डॉक्टर राजेन्द्रप्रसाद ने कहा—"मुझे पता है कि इस परिषद् पर जन्म से ही कुछ पाबन्दियाँ लगा दी गई हैं और सीमाएँ निश्चित कर दी गई हैं। हम अपनी कार्यवाही के दौरान में अपने निश्चयों पर पहुँचने में इनको न भूलें और न इनका निरादर करें, परन्तु मैं यह भी जानता हूँ कि इन सीमाओं तथा

पाबंदियों के होते हुए भी यह परिषद् स्व-शासित तथा अपने सम्बंध में सब निश्चय स्वयं करनेवाली स्वतंत्र सभा है। विधान-परिषद् की कार्यवाही में कोई बाह्य सत्ता हस्तक्षेप नहीं कर सकती, न उसके निर्णय को रद्द कर सकती है और न उसके निर्णय में परिवर्तन या संशोधन कर सकती है। वास्तव में जो पाबंदियाँ इस परिषद पर लगाई गई हैं, उनसे मुक्त हो जाना या उन्हें तोड़ डालना भी इस परिषद् के अधिकार में है और मुझे आशा है आप, जो यहाँ एक स्वाधीन भारत का विधान बनाने के लिये इकट्ठे हुए हैं, इन सीमाओं तथा पाबन्दियों से छुटकारा पा लेंगे और संसार के सामने एक ऐसा विधान पेश करने में समर्थ होंगे, जो इस देश के रहने वाले विभिन्न वर्गों, सम्प्रदायों और धर्मों के लोगों को सन्तुष्ट कर सकें।

बम्बई के भूतपूर्व गृहमन्त्री श्रीयुत के० एन० मुन्शी ने कहा—"विधान-परिषद का मुख्य कार्य सुदृढ़ केन्द्र स्थापित करना है। देश में जो साम्प्रदायिक उपद्रव हुए हैं, उनसे केन्द्र को सुदृढ़ बनाना और भी अधिक आवश्यक हो गया है। विधान-परिषद् नागरिक अधिकारों के मौलिक आधार निर्धारित करेगी, जिनकी रक्षा के लिये केन्द्र का सुदृढ़ होना आवश्यक है।"

मिशन-योजना में पाकिस्तान के बीज हैं। आगे चल कर ये बीज वृक्ष का रूप धारण कर सकते हैं। केन्द्र को सुदृढ़ बनाने और अनिवार्य प्रारम्भिक प्रान्तीय गुटबन्दी की धारा को हटाने से ही परिस्थिति में सुधार हो सकता है।

स्वतन्त्र हिन्दुस्थान राज्य-विधान की रूप-रेखा

स्वतन्त्र सार्वभौम प्रजातन्त्र

हिन्दू महासभा की विचार-प्रणाली कांग्रेस की विचार-प्रणाली से अधिक राष्ट्रीय है। राजनीतिक सिद्धान्तों की दृष्टि से महासभा राष्ट्रीय है। राष्ट्रीय शासन-विधान प्रजातन्त्रवादी होता है। प्रजातंत्र का अर्थ है बहुमत का शासन, अल्पमतों का सम्मान और विरोधियों के प्रति उचित सीमा तक सहिष्णुता। हाँ, प्रजातन्त्र की यही व्याख्या है। हिन्दुस्थान में हिन्दुओं की संख्या अधिक है, यह हिन्दुओं का अपराध नहीं है। यदि कोई महासभा की विचार-प्रणाली में राष्ट्रीयता तथा प्रजातंत्र के विरुद्ध कोई एक भी बात प्रमाणित कर दे, तो मैं विश्वास दिलाता हूँ कि हिन्दू महासभा उस बात को अपनी विचार-प्रणाली से पृथक् कर देगी। —डॉक्टर श्यामाप्रसाद मुकर्जी

परिस्थिति तथा अनुभव ने स्पष्ट कर दिया कि कांग्रेस ने हिन्दू-मुस्लिम समझौते के सम्बन्ध में जो नीति अपना रक्खी थी, वह गलत थी। कांग्रेस के नेता अपनी ग़लती को अनुभव कर रहे हैं। ग़लती को सुधारने के लिये कांग्रेस ने अपने १९४६ के मेरठ अधिवेशन में 'स्वतंत्र सर्वसत्तासम्पन्न प्रजातंत्र' की स्थापना का प्रस्ताव पास किया है। यदि कांग्रेस इससे पहले १९२९ के लाहौर-अधिवेशन में ही सम्पूर्ण स्वातंत्र्य के ध्येय के साथ ही

'स्वतंत्र सार्वभौम प्रजातंत्र' की स्थापना का ध्येय निश्चित करती और ध्येय के अनुसार ही हिन्दू-मुस्लिम समझौते की नीति दिलेरी के साथ निर्धारित करती, तो कांग्रेस, जैसा कि आचार्य कृपलानी ने माना है, आज बहुत से झगड़ों से बच सकती थी। पंडित जवाहरलाल नेहरू ने २१ नवम्बर १९४६ को कांग्रेस की विषय समिति में 'प्रजातंत्र' का प्रस्ताव उपस्थित करते हुए कहा– "इस तरह का प्रस्ताव आपके सामने अभी तक नहीं आया था। इससे पहले भारत के विधान में 'प्रजातंत्र' शब्द का उपयोग नहीं किया गया था। जब हम विधान बनायेंगे, तो प्रकट है कि वह प्रजातंत्रवादी होगा।" विधान-परिषद में भी पण्डित जी ने 'प्रजातंत्र' का प्रस्ताव उपस्थित किया है।

हिन्दू महासभा १९४४ में ही अपने बिलासपुर-अधिवेशन में 'प्रजातंत्रवाद' के ध्येय की घोषणा कर चुकी है। कांग्रेस की अपेक्षा हिन्दू महासभा राजनीति में अधिक दूरदर्शी प्रमाणित हुई है। महासभा ने प्रजातंत्र की रूप-रेखा के सम्बंध में भी अपने विचार प्रकट किये हैं।

आज भारत का राजनीतिक वातावरण साम्प्रदायिकता से ओत-प्रोत है। हमारी सरकार ने पृथक् निर्वाचन प्रणाली से राष्ट्रीयता के टुकड़े-टुकड़े कर दिये हैं। पृथक् निर्वाचन-प्रणाली राष्ट्रीयता की शत्रु है और इस शत्रु की सहायता से ही ब्रिटिश सरकार भारत पर सफलतापूर्वक शासन कर रही है। पृथक् निर्वाचन-प्रणाली से साम्प्रदायिक मत भेद बढ़ते रहते हैं। परि-

णाम यह होता है कि साम्प्रदायिक संघर्ष प्रारम्भ होता है और जनता के कल्याण का प्रश्न एक ओर रह जाता है। साम्प्रदायिक पृथक्-निर्वाचन प्रणाली के दुष्परिणामों को हम प्रत्यक्ष देख रहे हैं। साम्प्रदायिक स्वार्थ के नाम पर स्वतंत्रता की बलि दी जा रही है। ऐसी अवस्था में जनता सुख और शान्ति से नहीं रह सकती। सारी जनता की भलाई के लिये यह आवश्यक है कि राजनीति में सम्प्रदायवाद का नामोनिशान भी न रहे। पृथक् निर्वाचन-प्रणाली से शासनाधिकार कट्टर साम्प्रदायिक मनोवृत्ति के लोगों के हाथों में जाता है और इसका अनिवार्य परिणाम साम्प्रदायिक संघर्ष ही होता है। पृथक् निर्वाचन-प्रणाली ब्रिटिश कूटनीतिज्ञता की भारत को देन है। इस देन ने भारत के विभिन्न सम्प्रदायों में और विशेषतया हिन्दू-मुसलमानों में चौड़ी खाई खोदने का काम किया है। भारत स्वतंत्र होने जा रहा है। केन्द्र और ६ प्रान्तों में कांग्रेसी नेता सीमित शासनाधिकार की बागडोर सम्हाले हुए हैं। अब भी समय है। जो देश-भक्त होने का दावा करते हैं, जो भारत की भलाई चाहते हैं और जो आंखें खोल कर वास्तविकता को देख रहे हैं, उन्हें निर्भय होकर संयुक्त निर्वाचन-प्रणाली का समर्थन करना चाहिये। कांग्रेस ने तात्कालिक संघर्ष के भय से साम्प्रदायिकता के सामने नत-मस्तक होकर प्रकारान्तर से 'साम्प्रदायिक निर्णय' को स्वीकार करके भारतीय राजनीति में स्थायी संघर्ष को स्वीकार किया है। हिन्दू महासभा क्षणिक संघर्ष की परवाह न करके विभिन्न सम्प्रदायों में

स्थायी शांति को महत्व देती है। इसलिये वह संयुक्त चुनाव का समर्थन करती है। राष्ट्र के किसी भी सम्प्रदाय को उसकी संख्या की अपेक्षा अधिक अधिकार देने का अर्थ है राष्ट्र के दूसरे सम्प्रदायों के अधिकारों का अपहरण। यह अन्याय है। महासभा ऐसे पक्षपातपूर्ण प्रथक् प्रतिनिधित्व का निषेध तथा विरोध करती है। महासभा चाहती है कि 'एक मनुष्य एक मत और सबको समान नागरिक अधिकार' का सिद्धान्त प्रचलित किया जाय। इसी से स्थायी शांति स्थापित होगी। महासभा लीग ऑफ नेशन्स के निर्णय के अनुसार अल्पमत सम्प्रदायों को उचित संरक्षण देने के पक्ष में है। स्वतंत्रता, समानता तथा राष्ट्रीयता के आधार पर अल्पमतों के हितों की रक्षा का महासभा आश्वासन देती है।

१९३५ के शासन विधान में विभाजन का सिद्धान्त प्रच्छन्न रूप से विद्यमान था। उसमें भारतीय रियासतों को केन्द्र से प्रथक् रहने या सम्मिलित होने का अधिकार दिया गया था। महासभा रियासतों को भी फेडरेशन में सम्मिलित कर देना चाहती है, क्योंकि रियासतों में उत्तरदायी शासन की स्थापना के लिये और भारत की एकता तथा अखण्डता के लिये यह आवश्यक है। महासभा चाहती है कि जनता का राज्य हो, जनता के लिये राज्य हो और जनता के द्वारा ही राज्य हो। आज अधिकांश जनता को मताधिकार प्रप्त नहीं है। कुछ विशिष्ट लोगों को ही मताधिकार दिया गया है। ऐसी अवस्था में जनता के द्वारा राज्य हो ही नहीं सकता। जो राज्य जनता के द्वारा नहीं

होता, वह जनता का या जनता के लिये भी नहीं हो सकता। इसीलिये महासभा बालिगों के मताधिकार का समर्थन करती है। शासनाधिकार योग्य व्यक्तियों के हाथों में हो, इसलिये महासभा इस बात को भी मानती है कि सरकारी नौकरियाँ योग्यता के आधार पर दी जायें, संप्रदाय के आधार पर नहीं।

महासभा किसी ऐसी बात का समर्थन नहीं करती है, जो लोकतंत्रवाद के विरुद्ध हो। अखण्ड-भारत, संयुक्त चुनाव, एक मनुष्य एक मत, बालिगों को मताधिकार और योग्यता के आधार पर नौकरियाँ—ये हैं प्रजातंत्रवाद के प्रमुख राजनीतिक सिद्धान्त। इसीलिये महासभा इनका समर्थन करती है।

हिंदू महासभा ने १९४४ के बिलासपूर अधिवेशन में शासन विधान के जो मौलिक सिद्धान्त स्वीकार किये हैं, उनको यहाँ उध्दृत किया जाता है, ताकि पाठक स्पष्टतया समझ सकें कि हिंदू महासभा राष्ट्रीयता तथा लोकतंत्र का समर्थन करनेवाली राष्ट्रीय संस्था है।

विधान के मौलिक सिद्धान्त

हिंदू महासभा यह माँग करती है कि हिंदुस्थान स्वतन्त्र घोषित कर दिया जाय और हिंदुस्थान को स्वतन्त्र राज्य बना दिया जाय। स्वतंत्र हिंदुस्तान का शासन-विधान निम्नलिखित मौलिक सिद्धान्तों के आधार पर बनाया जाये।

(१) हिन्दुस्थान के लोगों का यह जन्म-सिद्ध अधिकार है कि वे उसी प्रकार स्वतंत्र रहें, जिस प्रकार संसार के स्वतंत्र राष्ट्रों के

मनुष्य रहते हैं। हिन्दुस्थान एक स्वतंत्र राज्य होगा और उसका शासन विधान 'स्वतंत्र-हिन्दुस्थान राज्य-विधान (Constitution of Hindustan free State) कहलायेगा।

(२) ऐतिहासिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक तथा आनुवंशिक दृष्टि से हिन्दुस्तान एक और अखण्ड है और रहेगा।

(३) 'हिन्दुस्थान स्वतंत्र राज्य' का विधान प्रजातंत्रवादी हो और उसकी सत्ता केन्द्र में (federal in character) हो।

(४) केन्द्रीय असेम्बली द्वि-विभागीय (bi-cameral) हो।

(५) केन्द्रीय तथा प्रान्तीय असेम्बलियों का चुनाव एक मनुष्य एक मत (One man one vote) के आधार पर बालिगों के मत-दान से हो। संयुक्त चुनाव (joint electorate) हो। अल्प संख्यकों के लिये उनकी संख्या के अनुसार कुछ स्थान सुरक्षित हों।

(६) केन्द्रीय सत्ता सर्वोपरि हो। केन्द्रीय तथा प्रान्तीय असेम्बलियों के शासन अधिकार इस प्रकार हों कि प्रान्त को उसका अधिकार सौंप दिया जाय, पर वह केन्द्र के आधीन रहे।

(७) केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकार के अधिकार दो विभागों में विभाजित हों। एक शासन-विभाग और दूसरा न्याय-विभाग। शासन विभाग असेम्बली के आधीन रहे और दोनों जनता के आधीन। न्याय-विभाग शासन-विभाग से सर्वथा स्वतंत्र हो।

(८) लड़ाकू और गैर लड़ाकू जातियों में कोई भेद भाव नहीं माना जायेगा। हिन्दुस्थान स्वतंत्र राज्य की सैनिक शक्ति समस्त

प्रान्तों से उनकी योग्यता तथा अनुशासन की दृष्टि से एकत्रित की जायेगी।

(६) हिन्दुस्थान की फेडरेशन में भारतीय रियासतें भी सम्मिलित कर दी जायेंगी और वे उसका एक अंग ही मानी जायेंगी। रियासतों में उपर्युक्त बातों के आधार पर उत्तरदायी शासन की स्थापना की जायेगी।

(१०) हिन्दुस्थान के प्रान्तों की सीमा यदि आवश्यकता हो तो भाषा के अनुसार परिवर्तित की जासकती है।

(११) सरकार का यह कर्तव्य होगा कि वह सब के, जिनमें अल्प-संख्यक भी हैं, धर्म, भाषा तथा संस्कृति की रक्षा करे।

पाठकों के सामने हिन्दू महासभा का शासन-व्यवस्था सम्बन्धी दृष्टिकोण उपस्थित है। क्या कोई कह सकता है कि उपर्युक्त विचार-प्रणाली राष्ट्रीयता और प्रजातन्त्र के विरुद्ध है?

महासभा नागरिकों के निम्नलिखित मौलिक अधिकारों का समर्थन करती है—

(१) कानून के आगे समस्त मनुष्य बराबर हैं और सभी को समान अधिकार मिलने चाहिये। किसी भी कानून में, चाहे वह दीवानी हो या फौजदारी, किसी प्रकार का भेद-भाव नहीं किया जायेगा।

(२) सब मनुष्य अपने परिश्रम की कमाई को भली प्रकार भोग सकेंगे और जीवन के लिये आवश्यक समस्त वस्तुओं के अधिकारी होंगे। और कोई मनुष्य दूसरे से लाभ न उठा सकेगा।

(३) राज्य जनता के स्वास्थ्य के लिये और उनको काम करने योग्य बनाने के लिये उचित कानून बनायेगा और प्रत्येक मजदूर के लिये उचित वेतन की व्यवस्था करेगा। बालकों और स्त्रियों की रक्षा करेगा।

(४) प्रत्येक मनुष्य को निःशुल्क प्रारम्भिक शिक्षा दी जायेगी।

(५) प्रत्येक मनुष्य आवश्यक अस्त्र रख सकेगा।

(६) कोई भी मनुष्य केवल जाति, रंग तथा धर्म के कारण किसी भी नौकरी तथा किसी प्रकार के व्यापार से वंचित नहीं किया जायेगा।

(७) कोई भी मनुष्य अपने निवास स्थान और जायदाद से बिना किसी प्रकार की कानूनी कार्यवाही किये निर्वासित नहीं किया जायेगा।

(८) कोई भी मनुष्य व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के अधिकार से बिना किसी कानून के वंचित नहीं किया जायेगा।

(९) किसी भी सम्प्रदाय के मनुष्य अपनी सम्मति स्वतन्त्रता पूर्वक दे सकेंगे और उन्हें अधिकार होगा कि वे शान्तिपूर्वक एकत्रित हों या अपनी कोई संस्था बनायें, किन्तु ऐसी संस्था जनता की शान्ति तथा सदाचार में बाधक न बन सके।

(१०) प्रत्येक मनुष्य जनता की शांति और सदाचार की दृष्टि रखते हुए कोई भी धर्म मान सकता है और उसकी भाषा और संस्कृति की भी रक्षा की जायेगी। कोई कानून ऐसा नहीं बनाया जायेगा, जो प्रकट रूप में या अप्रकट रूप में किसी धर्म

या किसी मनुष्य के किसी धर्म को मानने पर प्रतिबन्ध लगाये या उस मनुष्य की धार्मिक स्वतन्त्रता में किसी प्रकार हस्तक्षेप करे।

(११) प्रेस स्वतन्त्र होगा और बिना शान्ति तथा सदाचार की अवज्ञा किये हुए किन्हीं भी समाचार पत्रों में लिखे गये लेखों पर तथा उनकी बिक्री पर प्रतिबन्ध नहीं लगाया जायेगा।

शासन-व्यवस्था के मौलिक सिद्धान्तों तथा नागरिकों के अधिकारों के सम्बन्ध में हिन्दू महासभा की विचार-प्रणाली को पढ़कर पाठक भली भांति समझ जायेंगे कि महासभा की विचार-प्रणाली में एक भी बात ऐसी नहीं है, जो प्रजातन्त्र के विरुद्ध हो। हिन्दू राष्ट्रपति डॉ० श्यामाप्रसाद मुकर्जी डंके की चोट कहते हैं—"हिन्दू महासभा की विचार-प्रणाली कांग्रेस की विचार-प्रणाली से अधिक राष्ट्रीय है। राजनीतिक सिद्धान्तों की दृष्टि से महासभा राष्ट्रीय है। राष्ट्रीय शासन-विधान लोकतन्त्रवादी होता है। लोकतन्त्र का अर्थ है बहुमत का शासन, अल्पमतों का सम्मान और विरोधियों के प्रति उचित सीमा तक सहिष्णुता। हाँ, लोकतन्त्र की यही व्याख्या है। हिन्दुस्थान में हिन्दुओं की संख्या अधिक है, यह हिन्दुओं का अपराध नहीं है। यदि कोई महासभा की विचार-प्रणाली में राष्ट्रीयता तथा लोकतन्त्र के विरुद्ध कोई भी बात प्रमाणित कर दे, तो मैं विश्वास दिलाता हूँ कि हिन्दू महासभा उस बात को अपनी विचार-प्रणाली से पृथक् कर देगी।"

जो लोग महासभा को मुस्लिम-लीग की तरह साम्प्रदायिक

संस्था समझते हैं, वे महासभा के साथ अन्याय कर रहे हैं। उन्होंने या तो महासभा के सिद्धान्तों का अध्ययन ही नहीं किया है या राष्ट्रीयता और साम्प्रदायिकता के मौलिक भेद को समझने की बौद्धिक शक्ति उनमें नहीं है। महासभा हिन्दुओं के लिये विशेष अधिकार नहीं चाहती। वह संख्या के अनुसार सबको समान अधिकार के पक्ष में है। वह शुद्ध राष्ट्रीयता की समर्थक है। मुस्लिम लीग की साम्प्रदायिकता, सरकार की स्वार्थान्धता और कांग्रेस की शुरू से ही राष्ट्रीयता के सम्बन्ध में कमजोर नीति के कारण आज भारतीय राजनीति में सम्प्रदायवाद का बोलबाला है और हमारी सारी कठिनाइयों का प्रधान कारण है। महासभा उच्च स्वर से कह रही है कि भारत की भलाई के लिये सम्प्रदायवाद को राजनीति के मैदान से अलग कर दिया जाय और उसमें राष्ट्रीय वातावरण पैदा किया जाय। आज सम्प्रदाय-वाद ने भारत की राष्ट्रीय प्रगति का मार्ग बुरी तरह रोक रक्खा है। भारत के उत्थान के लिये सम्प्रदायवाद को राजनीतिक क्षेत्र से हटाना ही होगा। महासभा चाहती है कि राजनीतिक क्षेत्र से सम्प्रदायवाद का मुँह काला हो और राष्ट्रीयता का बोलबाला हो। राजनीतिक क्षेत्र में हिन्दू-मुस्लिम भेदभाव को मिटाने के लिये "एक मनुष्य एक मत और सबको समान नागरिक अधिकार" का सिद्धान्त स्वीकार करना ही सही मार्ग है।

यह कहा जा सकता है कि मेरठ-अधिवेशन से कांग्रेस और हिन्दू महासभा का प्रमुख ध्येय एक हो गया है। ध्येय एक हो

जाने से हिन्दू महासभा के कार्यवाह-अध्यक्ष डाक्टर मुञ्जे तथा बिहार प्रान्तीय हिन्दू महासभा के अध्यक्ष कुमार गंगानन्द सिंह ने २६ नवम्बर १९४६ को अन्तःकालीन सरकार की आन्तरिक तनातनी पर कांग्रेस से अपील करते हुए संयुक्त वक्तव्य में कहा— "मुस्लिम-लीग या वायसराय की ओर से उत्तेजना के कारण उपस्थित किये जाने पर भी कांग्रेस अन्तःकालीन सरकार से इस्तीफा न दे और दृढ़ता से गद्दी पर डटी रह कर संसार के सामने ब्रिटिश सरकार की नीयत का पर्दाफाश करती रहे। हम विश्वास दिलाते हैं कि समूचा हिन्दू जगत् तथा हिन्दू महासभा कांग्रेस के साथ मिलकर हिन्दुस्थान की स्वतन्त्रता तथा एकता के लिये अन्तिम दम तक लड़ाई लड़ेंगे। मुस्लिम लीग की हिन्दुस्थान में अपनी पृथक् सर्वोच्च सत्ता कायम करने की नापाक महत्वाकांक्षा का एकबारगी मुकाबला कर उसे सदा के लिये कुचल डालना चाहिए।"

इससे पाठक यह न समझें कि अब भारतीय राजनीति में हिन्दू महासभा की कोई आवश्यकता नहीं रही है। प्रमुख ध्येय एक होने पर भी भारतीय राजनीतिक क्षेत्र में शक्ति-सम्पन्न हिन्दू महासभा की आवश्यकता क्यों? इस प्रश्न का उत्तर आगे के प्रकरणों में विभिन्न दृष्टियों से दिया जायेगा।

★

लीग की साम्प्रदायिकता और कांग्रेस की उदारता

मैं अपने को हिन्दुस्थानी नहीं समझता। —मि० जिन्ना

भारतीय मुसलमानों में कुछ राष्ट्रीय वृत्ति के भी मुसलमान हैं, पर उनकी संख्या कम है। अधिकांश मुसलमान राष्ट्रीय भावनाओं से कोसों दूर हैं। भारतीय मुसलमानों को भारत में रहते हुए सदियाँ बीत गईं। वे यहीं पैदा होते हैं, यहाँ के अन्न-जल से ही उनका पालन-पोषण होता है और मरने के बाद यहीं की मिट्टी में वे दफनाये जाते हैं। यह सब कुछ होते हुए भी साम्प्रदायिक वृत्ति के मुसलमानों ने भारत को अपनी मातृ-भूमि की दृष्टि से देखना नहीं सीखा। खिलाफत जैसी मजहबी बात के लिये तो वे मर मिटने के लिये तैयार हो जाते हैं, पर भारत की स्वतन्त्रता के युद्ध में सम्मिलित होना उचित नहीं समझते हैं। वे समझते हैं कि हिन्दुओं के बहुमत के शासन में रहने की अपेक्षा अंग्रेजों के आधीन रहना ही अच्छा है। भारत में साम्प्रदायिक वृत्ति के मुसलमानों के नेता हैं मि० जिन्ना, जिन्होंने १ एप्रिल १६४६ को "News Chronicle" के मि० नार्मन क्लीफ से कहा—"I do not regard myself as an Indian" अर्थात् मैं अपने को हिन्दुस्थानी नहीं समझता। मातृ-भूमि की यह अवहेलना साम्प्रदायिकता की चरम सीमा है। सरदार वल्लभभाई पटेल ने ५ एप्रिल १६४६ को रूटर (Reuter) के संवाददाता से मि०

जिन्ना के सम्बन्ध में यह ठीक ही कहा—"If Mr. Jinnah is not an Indian, there can be no question of his participation in the Indian Consti tution." अर्थात् यदि मि० जिन्ना हिन्दुस्थानी नहीं हैं, तो हिन्दुस्थानी शासन-विधान में टाँग अड़ाने का मि० जिन्ना को कोई अधिकार नहीं है"। सरदार पटेल के तर्क का मि० जिन्ना कोई उत्तर नहीं दे सकते। मि० जिन्ना और उनके अनुयायी रहते भारत में हैं, पर गीत गाते हैं मक्का और मदीना के।

अखिल भारतीय मुस्लिम लीग की वर्किंग कमेटी के सदस्य चौधरी खलीकुज्जमा साहेब फरमाते हैं—"पाकिस्तान तो सिर्फ एक सीढ़ी है। वह पॅन इस्लामिज्म (इस्लाम के विस्तार) की ओर पहला क़दम है।" कई मुस्लिम नेता भारत भर में मुस्लिम राज्य स्थापित करने का स्वप्न देख रहे हैं। मौलाना हसरत मोहानी और मि० फजलुल हक़ यह बात कई बार कह चुके हैं कि यदि मुसलमान एक हो जायें, तो फिर भारत में मुसलमान ही हकूमत करेंगे। मुसलमानों के इस विचार का बीज उनकी मजहबी शिक्षा में विद्यमान है। उनके मजहबी विचार यह हैं—वह देश, जिसमें मुसलमान राजा का राज्य हो या शासन-विधान इस्लामी शरीयत के अनुसार हो, वह 'दार-उल-अमन' अर्थात् शान्ति का घर कहलाता है। जिस देश में सभी मुसलमान होते हैं, वह 'दार-उल-इस्लाम' अर्थात् इस्लाम का घर कहलाता है। और जिस देश में सभी मुसलमान न हों और

जहाँ मुसलमान राजा या इस्लामी शरीयत का राज्य नहीं है, वह 'दार-उल-हरब' अर्थात् लड़ाई का मैदान है। तो हिन्दुस्थान साम्प्रदायिक वृत्ति के मुसलमानों के लिये लड़ाई का मैदान है और वे चाहते हैं कि भारत 'दार-उल-अमन' या 'दार-उल-इस्लाम' बन जाये।

ये मुसलमान भाई कांग्रेस की कोई भी बात पसन्द नहीं करते। काँग्रेस ने मुसलमानों को खुश करने के लिये अपने झंडे में हरे रंग को स्थान दिया है। राष्ट्रीय झंडे में साम्प्रदायिक निशान तो नहीं होना चाहिये, पर विवशता या दुर्बलता के कारण कांग्रेस की राष्ट्रीयता पर मुसलमानों की साम्प्रदायिकता का रंग चढ़ा हुआ है। मुस्लिम लीग फिर भी खुश नहीं हुई और उसने माँग की कि तिरंगा झंडा बदल दिया जाय या मुस्लिम लीग लीग के झंडे को समान महत्व दिया जाय। हमारा राष्ट्रीय गीत 'वन्दे मातरम' मुसलमानों को क़तई पसन्द नहीं है। मुस्लिमलीग ने माँग की कि वन्दे मातरम् गीत बन्द कर दिया जाय, क्योंकि इस गीत से बुतपरस्ती टपकती है, जिसको इस्लाम बर्दाश्त नहीं कर सकता। इसके फलस्वरूप गाँधीजी ने आज्ञा जारी कर दी कि जहाँ एक भी विरोधक हो, वहाँ तिरंगा न फहराया जाय और न 'वन्दे मातरम्' गीत गाया जाय। पूरा गीत गाना तो बिल्कुल बन्द कर दिया गया है। काँग्रेसी सरकारों ने गाँधीजी की आज्ञा का पूर्णतया पालन किया। चूँकि मुस्लिम लीग को हिन्दी पसन्द नहीं है, इसलिये गाँधीजी ने 'हिन्दुस्थानी' प्रचलित की। मुसल-

मान भाई जानते हैं कि हिन्दुओं को गौ कितनी प्यारी है, पर वे गो-हत्या को अपना धार्मिक अधिकार मानते हैं। जो मुसलमान नहीं हैं, उनको 'काफिर' समझा जाता है। अब तो मुस्लिम लीग के नेता और अनुयायी उन मुसलमानों को भी 'काफिर' समझते हैं, जो मुस्लिम लीग में शामिल नहीं हैं। पिछले चुनाव के दिनों में लीगी मुसलमानों ने लीग के विरोधी प्रो० हुमायूँ कबीर आदि राष्ट्रीय मुस्लिम नेताओं को मार-पीट कर मुस्लिम लीगी बनाना चाहा। १६ अगस्त को मुस्लिम लीग के 'सीधी कार्रवाई' दिवस के अवसर पर दिल्ली में काजी मुहम्मद ईसा ने कहा— "जो मुसलमान मुस्लिम लीग में शामिल नहीं हैं, वे दस दिन के अन्दर मुस्लिम लीग में शामिल हो जायें। अगर वे ऐसा नहीं करते, तो इस्लाम के सिद्धान्त के अनुसार उन्हें सजा दी जायेगी।" और सचमुच ही २४ अगस्त को कांग्रेस की अस्थायी अन्तःकालीन सरकार की घोषणा होते ही अन्तःकालीन सरकार के मुस्लिम सदस्य सर शफात अहमद खाँ पर दो मुस्लिम युवकों ने घातक हमला किया। लीग फासिस्ट नीति से काम लेना चाहती है।

जब १९३५ के शासन-विधान के अनुसार सब हिन्दू बहुमत प्रांतों में और मुस्लिम बहुमत सीमाप्रांत में कांग्रेसी मंत्रिमण्डलों की स्थापना हुई, तो मुस्लिम लीग के नेताओं ने शोर मचाना शुरू कर दिया कि कांग्रेसी मंत्रिमण्डल मुसलमानों पर अत्याचार कर रहे हैं। कहने की आवश्यकता नहीं कि मुसलमानों को

हिन्दुओं के विरुद्ध भड़काने के लिये यह शोर मचाया गया था। मुस्लिम लीग ने देखा कि हिन्दुस्थान के ११ प्रांतों में से मुश्किल से दो प्रांतों में उसका शासन है। पंजाब में सर सिकन्दर का शासन था। सिंध में स्वर्गीय अल्लाबक्श का मंत्रिमंडल होगया था और सीमाप्रांत में काँग्रेसी। इस प्रकार लीग पश्चिमी पाकिस्तान से हाथ धो बैठी थी। बंगाल में मुस्लिम लीगी मन्त्रिमण्डल हो गया था और किसी कारण से हिन्दू बहुमत प्रांत आसाम में भी मुस्लिम लीगी मन्त्रिमण्डल की स्थापना हुई थी। ऐसी अवस्था में मुस्लिम लीग का निराश होना स्वाभाविक ही था। निराशा की अवस्था में मुसलमानों को हिन्दुओं के विरुद्ध भड़का कर लीडरी को बनाये रखना मुस्लिम लीग ने उचित समझा। इसके फलस्वरूप लीग ने 'पीरपुर रिपोर्ट' प्रकाशित की, जिसमें कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलों द्वारा मुसलमानों पर किये गये अत्याचार (?) का वर्णन था। मुसलमानों को खुश करने के लिये काँग्रेसी मंत्रि-मण्डलों ने हिन्दुओं के अधिकारों पर कुठाराघात करके अनुचित सीमा तक मुसलमानों से अत्यधिक उदारता का व्यवहार किया था। वास्तव में हिन्दुओं को ही कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलों के विरुद्ध आवाज़ उठानी चाहिये थी। यू० पी० की काँग्रेसी सरकार ने सप्रमाण यह दिखाने के लिये कि उसने मुसलमानों से अधिक उदारतापूर्वक व्यवहार किया है, एक "मुसलमान अकलियत हुकूमत सूबेजात मुतहद्दा" नामक उर्दू पुस्तिका केवल मुसलमानों में बँटवाने के लिये प्रकाशित की थी। यह पुस्तिका पढ़ कर

प्रत्येक विचारशील हिन्दू इस बात को स्वीकार करेगा कि कांग्रेस के हाथों में हिन्दुओं के राजनीतिक, सांस्कृतिक तथा धार्मिक अधिकार सुरक्षित नहीं हैं और कांग्रेसी सरकार के शासन में भी हिन्दू अधिकारों की रक्षा करने के लिये एक अखिल भारतीय शक्ति-सम्पन्न हिन्दू संस्था की आवश्यकता है।

पुस्तिका में 'हिन्दुओं पर लगाई गई पाबंदियाँ' बताते हुए लिखा है—'कांग्रेसी हकूमत के अहद में मुसलमानों पर किसी जगह कोई नई पाबंदी नहीं लगाई गई, बल्कि बाज मौकों पर जो पाबंदियाँ पहले से लागू थीं, वे भी हटा दी गईं। सिवा इसके कई मुकामात ऐसे जरूर मिलेंगे, जहाँ मौजूदा हकूमत ने हिंदुओं को मन्दिरों में पूजा या आरती करने या शंख बजाने से रोक दिया है। उनके जलूस पर कई किस्म की पाबंदी लगा दी है। मसलन (१) बाराबंकी में मोहर्रम के दौरान में हुक्काम ने कई जगह शंख बजाना और कथा पढ़ना और होली में खुद हिंदुओं पर रंग डालना ममनूअ करार दे दिया (२) जहाँगीराबाद में एक मंदिर कई रोज के लिए बंद करा दिया गया। (३) बांदा में मोहर्रम के दौरान में हिंदुओं की शादी के जलूस निकालने की इजाजत नहीं दी गई (४) सीतापुर में मोहर्रम के दौरान में हिंदुओं के जलसे रोक दिये गये और उन्हें शंख या घड़ियाल या बाजा नहीं बजाने दिया गया। (५) अलीगंज जिला एटा में हिन्दुओं को ७ मोहर्रम से १० मोहर्रम तक किसी किस्म का जलूस निकालने से रोक दिया गया। (६) आंवला जिला बरेली में हिन्दुओं

पर कई पाबंदियाँ आयद की गईं, जिनमें एक यह थी कि हिन्दू औरतों को शादी के मौके पर ढोलकी बजाने से रोक दिया गया। इन अहकाम की ४५ हिन्दुओं ने खिलाफवर्जी की, मगर हकूमत ने बगैर किसी पशोपेश के उनको गिरफ्तार करके सजाएँ दीं। (७) सारन में सिखों को जलूस निकालने की इजाजत नहीं दी गई और फर्रुखाबाद में ताजियों की खातिर बिजली के तार कटवा दिये गये।'

यू० पी० एक हिन्दू बहुमत प्रान्त है। वहाँ हिंदू ८५ प्रतिशत और मुसलमान १४ प्रतिशत हैं। हिन्दुओं की इतनी अधिक संख्या होते हुए भी काँग्रेसी सरकार ने मुसलमानों को खुश करने के लिए यू० पी० को पाकिस्तान ही बना दिया। ऐसी अवस्था में मुसलमान क्यों न साम्प्रदायिकता का प्रदर्शन करें!

और देखिये! पुस्तिका में लिखा है—"अगरचे मुसलमानों की आबादी इस सूबा में सिर्फ १४ फी सदी है और हिन्दुओं की ८५ फी सदी, मगर कांग्रेसी हकूमत ने अपने अहद में जितनी नौकरियाँ दीं, उन सब में मुसलमानों को उनके आबादी के तनासिब से कुछ ही ज्यादा नहीं, बल्कि कहीं ज्यादा नुमाइन्दगी दी है। बाज जगहों पर तो मुसलमान ५० फी सदी से भी ज्यादा जगहों पर रक्खे गये हैं।"

१४ प्रतिशत मुसलमानों को इतनी अधिक जो सरकारी नौकरियाँ दी गई हैं, उसके मूल में मुसलमानों को खुश करने का साम्प्रदायिक दृष्टिकोण ही था। महासभा कांग्रेस के इस दृष्टि-

कोण का विरोध करती है। महासभा चाहती है कि सरकारी नौकरियाँ योग्यता के आधार पर दी जायें, सांप्रदायिक आधार पर नहीं। यदि किसी कारण से ऐसा नहीं होता, तो किसी भी सम्प्रदाय को उसकी संख्या के अनुसार ही सरकारी नौकरियाँ दी जायें।

यू० पी० की कांग्रेसी सरकार ने इस बात को भी स्वीकार किया है कि उसने साम्प्रदायिक द्वेष फैलानेवाले मुस्लिम व्याख्याता और अखबारों के विरुद्ध कोई कारवाई नहीं की, परन्तु इसके विरुद्ध "हिन्दुओं के दो पैम्फलेट और हिन्दू अखबार की एक इशाअत को जेर दफा ९९ जाब्ता फौजदारी इस जुर्म में जब्तशुदा करार दिया कि उनके मजामीन से मुसलमानों की दिल आजारी होती थी" और "एक हिन्दू कारकून बाबू केदारनाथ पर जिन्हों ने गोरखपुर में मुसलमानों के खिलाफ एक तकरीर की थी, हकूमत की हस्ब हिदायत जेर दफा १५३ (अलिफ) मुकद्दमा चलाया गया और उन्हें एक साल की सजा दी गई।" इसका स्पष्ट मतलब यह है कि कांग्रेसी सरकार ने मुसलमानों के सौ गुनाह माफ कर दिये और मुसलमानों को खुश रखने के लिये ही हिन्दुओं को सजा दी। ऐसी अवस्था में कांग्रेसी सरकार से हिन्दू-हित की रक्षा की आशा नहीं की जा सकती। बिहार की कांग्रेस सरकार की रिपोर्ट भी यू० पी० के कांग्रेसी सरकार की रिपोर्ट से मिलती जुलती है। ब्रिटिश सरकार ने मुसलमानों को अपने पक्ष में बनाये रखने के

लिये जो नीति अपनाई है, उसी नीति को कांग्रेसी सरकारों ने भी अपनाया। दोनों नीतियों का परिणाम हिन्दू समाज के लिये घातक प्रमाणित हो रहा है।

कांग्रेसी मन्त्रि-मंडलों ने मुसलमानों के साथ इतना उदारता-पूर्वक व्यवहार किया। फिर भी जब कांग्रेस के आदेशानुसार कांग्रेसी मन्त्रि-मण्डलों ने त्यागपत्र दिये, तो मि० जिन्ना ने मुसलमानों को आदेश दिया कि वे कांग्रेसी शासन से मुक्त होने की खुशी में मुक्ति-दिवस (Day of Deliverance) मनायें। कांग्रेस की कमजोर नीति से मि० जिन्ना को यह विश्वास हो गया कि मुस्लिम लीग के जोर देने से कांग्रेस चाहे जितनी झुक सकती है।

कबाइली क्षेत्रों का दौरा करने के लिये पण्डित जवाहरलाल नेहरू जब पेशावर पहुँचे, तो मुस्लिम-लीगियों ने उनके विरुद्ध इतने घृणित प्रदर्शन किये कि प्रधान मन्त्री डॉक्टर खान साहिब ने कहा—"मेरी जगह दूसरा प्रधान मन्त्री होता, तो गोली चलवा देता।"

मुस्लिम लीग ने १६ अगस्त को जो 'एक्शन डे प्रोग्राम' मुसलमानों में गुप्तरूप से बाँटने के लिये तैयार किया था, उसे एक मुस्लिम लीगी ने ही पुलिस को देकर लीग का पर्दा फाश किया है। उसमें हिन्दुओं की संख्या घटाने, मुस्लिम संख्या बढ़ाने और हिन्दू संस्कृति तथा व्यापार को नष्ट-भ्रष्ट करने के उपायों को कार्य रूप में परिणत करने का आदेश दिया गया

है। कलकत्ता और पूर्व बंगाल में जो कुछ हुआ, वह 'एक्शन डे प्रोग्राम' के अनुसार ही हुआ है। हिन्दू-मुस्लिम भेद-भाव को बढ़ाने और दोनों को एक-दूसरे का दुष्मन बनाने से ही पाकिस्तान की स्थापना होगी—इस बात पर लीग का पूर्ण विश्वास है। हिन्दुस्थान में लीग के रूप में फासिस्टवाद पनप रहा है।

कांग्रेस की कमजोरी और लीग की जबर्दस्ती से वातावरण इतना खराब हो गया है कि हिन्दुओं की या हिन्दू अधिकारों की रक्षा के लिये कुछ बोलना कांग्रेस के क्षेत्र में साम्प्रदायिकता का परिचायक समझा जाता है। कोई कुछ भी समझे, लीग की हिन्दू जाति के विरुद्ध की गई प्रत्येक बात का क्रियात्मक जवाब देने के लिये हिन्दू महासभा को मजबूत बनाने की आवश्यकता है।

★

आसाम को मुस्लिम बहुसंख्यक प्रान्त बनाने का षड़यंत्र

आसाम में १९३७ के निर्वाचन के बाद किसी कारण से सर मुहम्मद सादुला, को जो एक कट्टर लीगी हैं, मन्त्रि-मण्डल बनाने का अवसर प्राप्त हुआ और उनका मंत्रि मण्डल असेम्ब्ली के अधिवेशन तक बना रहा। चौथे अधिवेशन में उनके मंत्रि-मण्डल पर अविश्वास का प्रस्ताव स्वीकृत हो गया और सितम्बर, १९३८ में कांग्रेसी मंत्रि-मण्डल बना, जिसके प्रधान मंत्री श्री गोपीनाथ बारडोलाई थे। सन् १९३९ में कांग्रेस मंत्रि-मण्डल के त्याग पत्र दे देने से फिर सर सादुल्ला को लीगी मंत्रि-मण्डल बनाने का अवसर प्राप्त हुआ। १९४१ के अंत तक लीगी मंत्रि-मण्डल काफी बदनाम होगया, क्योंकि प्रान्त में घूसखोरी और अव्यवस्था इतनी फैल गई थी, जितनी यहाँ कभी देखी नहीं गई। अविश्वास का प्रस्ताव स्वीकृत हो जाने के भय से सर सादुल्ला के मंत्रि मण्डल को फिर त्याग-पत्र देना पड़ा और गवर्नर ने धारा ९३ के अन्तर्गत शासन व्यवस्था अपने हाथ में ले ली। ८ महिने के बाद ही गवर्नर-शासन का अन्त हुआ। यह अगस्त १९४२ के बाद की घटना है, जब कि ब्रिटेन की चर्चिल-पार्टी ने काँग्रेस को कमजोर बनाने की दृष्टि से भारत के सम्बन्ध में ऐसी नीति बना ली कि जहाँ भी सम्भव हो सके मुस्लिम लीग को आगे

बढ़ाया जाय और लीगी मंत्रि-मण्डल बनवाया जाय। काँग्रेसी सदस्यों की अनुपस्थिति में अल्पमत होते हुए भी सर सादुल्ला को लीगी मंत्रि-मण्डल बनाने का अधिकार दिया गया। सर सादुल्ला ६ साल से अधिक समय तक आसाम के प्रधान मंत्री रहे। सादुल्ला के मंत्रि-मण्डल ने प्रान्त की उन्नति और जनता की सुख-सुविधाओं से अपना कोई सम्बन्ध नहीं रक्खा, क्योंकि लीगी मंत्रि-मण्डल के लिये सब से अधिक महत्वपूर्ण कार्य—लीग की स्थिति को मजबूत बनाना होता है।

पाठक जानते हैं कि आसाम एक हिन्दू बहुमत प्रान्त है, पर जैसा कि पिछले प्रकरण में हम लिख चुके हैं, पाकिस्तान को आर्थिक तथा व्यवस्था की दृष्टि से व्यवहार्य बनाने के लिए मुस्लिम लीग आसाम को पाकिस्तान में सम्मिलित करना चाहती है। ब्रिटिश मंत्रि-मंडल मिशन की १६ मई की योजना में आसाम और बंगाल का पृथक् (स) विभाग बना कर आसाम के हिन्दू बहुमत को अल्प मत में परिणत कर दिया गया है। आसाम के लीगी मंत्रि-मंडल ने यह सोचा कि हिंदू बहुमत आसाम को पाकिस्तान में सम्मिलित करने का विरोध केवल आसाम के हिंदू ही नहीं, प्रत्युत भारत भर के हिंदू अवश्य ही करेंगे और उनका विरोध सिद्धान्त की दृष्टि से भी उचित ही माना जायेगा। इसलिये हिंदू बहुमत आसाम को पाकिस्तान में सम्मिलित करने के लिये यह आवश्यक है कि प्रत्येक संभव उपाय से शीघ्रातिशीघ्र हिंदू बहुमत आसाम को मुस्लिम बहुमत आसाम बनाया जाय।

आसाम को मुस्लिम बहुमत प्रांत बनाने के दो ही तरीके हो सकते थे — मुस्लिम जन-संख्या को येन केन प्रकारेण बढाया जाय और हिंदू जन-संख्या को येन केन प्रकारेण घटाया जाय। और सादुल्ला मंत्रि-मण्डल ने आसाम में मुस्लिम जन-संख्या को बढ़ाने का और हिंदू जन-संख्या को घटाने का हिंदू-विरोधी कार्य किसी सीमा तक सफलता पूर्वक किया है।

सन् १९३१ में आसाम की जन संख्या ९३ लाख के लगभग थी। १९४१ की जन गणना के अनुसार आसाम की लोक संख्या लगभग १ करोड़ ९ लाख हो गई है अर्थात् लगभग १६ लाख बढ़ गई है। सन् १९३१ में अस्पृश्य समेत हिंदू ५२०४६५० थे अर्थात् प्रान्त की कुल संख्या के हिसाब से ५७ प्रति-शत थे, पर १९४१ की जन-गणना के अनुसार अस्पृश्य समेत हिंदू ४५४०-९५० है अर्थात् प्रान्त की लोक संख्या के अनुसार ४१ प्रति-शत है। तात्पर्य यह है कि अस्पृश्य समेत हिंदुओं की संख्या ७ लाख घटा कर दिखाई गई है। दूसरी तरफ देखिये, आसाम में आदि वासियों को १९४१ की जन-गणना तक हिंदुओं में ही सम्मिलित किया जाता था, पर १९४१ की जन-गणना में उनको जंगली जातियाँ मान कर हिंदुओं से पृथक् कर दिया गया है। सन् १९३१ में आदिवासियों अर्थात् जंगली जातियों की संख्या लगभग १० लाख थी, पर १९४१ में आदिवासियों की संख्या २८ लाख से अधिक दिखाई गई है। तात्पर्य यह कि १९३१ की जन-गणना के अनुसार १९४१ में अस्पृश्य समेत हिंदुओं की संख्या ७ लाख

घट गई और आदिवासियों की संख्या २८ लाख हो गई। इस प्रकार हिंदुओं की संख्या में ३५ लाख की कमी हो गई है। १ करोड़ ६ लाख की आबादी वाले प्रान्त में हिन्दुओं की संख्या में ३५ लाख की कमी कोई साधारण बात नहीं है। आदिवासी हिन्दुओं को जाति के आधार पर न गिन कर 'आदिबासी' गिने जाने का कारण केवल हिन्दुओं की संख्या को कम करना है। आसाम असेम्बली में इसके सम्बन्ध में कई बार प्रश्न किये जा चुके हैं। मुस्लिम मंत्रियों ने बताया कि जन-गणना का प्रश्न केन्द्रीय सरकार के हाथ में है, इसमें प्रान्तीय सरकार कुछ नहीं कर सकती। हम मानते हैं कि जन गणना का प्रश्न केन्द्रीय सरकार के हाथ में है और केन्द्रीय सरकार ने भारत भर की जंगली जातियों को हिंदू जाति से पृथक् कर दिया है। तब आसाम में आदिवासियों को हिन्दू जाति से पृथक् करने का दोष सर सादुल्ला के लीगी मंत्रि-मण्डल पर क्यों? प्रश्न ठीक है। उत्तर भी स्पष्ट है।

ब्रिटेन की भूतपूर्व चर्चिल-सरकार की भारत-विरोधी नीति मशहूर है। ध्यान रहे, भारत-विरोधी नीति का अर्थ प्रकारान्तर से हिन्दू विरोधी नीति रहा है, क्योंकि चर्चिल-सरकार भारत में ब्रिटिश साम्राज्यवाद की रक्षा के लिये मुस्लिम लीग को संख्या आदि प्रत्येक प्रकार से शक्ति-सम्पन्न बना कर कांग्रेस को अर्थात् स्वतन्त्रता की प्राप्ति के लिये आन्दोलन करनेवाली हिन्दू जाति को प्रत्येक प्रकार से दुर्बल बनाना चाहती थी। जिन्ना-चर्चिल

गठबन्धन की बात को सभी जानते हैं। आज मि० चर्चिल पदारूढ़ नहीं हैं, फिर भी लीग की प्रत्येक बात का समर्थन और कांग्रेस की प्रत्येक बात का विरोध करना चर्चिल अपना कर्तव्य समझते हैं। मि० चर्चिल एक कट्टर साम्राज्यवादी हैं। वे चाहते हैं कि भारत में ब्रिटिश साम्राज्यवाद बना रहे। चूँकि मि० जिन्ना और उनकी लीग भारत में ब्रिटिश साम्राज्यवाद के रक्षक हैं, इसलिये मि० चर्चिल को मि० जिन्ना और उनकी लीग से विशेष प्रेम है। १२ दिसम्बर १९४६ को ब्रिटिश लोक-सभा में मि० चर्चिल ने जो भाषण दिया है, उससे जिन्ना-चर्चिल गठबन्धन की बात स्पष्टतया मालूम हो जाती है। मि० चर्चिल ने कहा—"मजदूर-दली सरकार ने कांग्रेस को अन्तःकालीन सरकार के निर्माण के लिये आमन्त्रित करके भारत में ऐसे भयानक क़त्लेआम का सिलसिला जारी कर दिया है, जैसे कि सन् १८५७ के गदर के बाद से कभी नहीं हुए थे। अन्तःकालीन सरकार के पदारूढ़ होने के बाद ४ मास में भारत में इतने व्यक्ति मरे हैं, जितने गत ९० सालों में कभी नहीं मरे। यह कांग्रेस की अन्तःकालीन सरकार का पहला नमूना मात्र है। यह तो बूँदाबाँदी है, भारी तूफान आनेवाला है। बिहार की हिन्दू कांग्रेसी सरकार ने मुस्लिम अल्प-संख्यकों का खात्मा करनेवाले हिन्दुओं पर पुलिस को गोली तक नहीं चलाने दी और गोली तब चली, जब स्वयं पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने इसका आदेश दिया। मैं यह बता दूँ कि भारत में हिन्दूराज बिना गृह-युद्ध के

कभी स्थापित नहीं हो सकता। भारत की अखण्डता तो वर्षों के ब्रिटिश शासन के द्वारा थोपी गई है। ब्रिटिश पथ-प्रदर्शन के हटते ही अखण्डता का अन्त हो जायेगा। हमें भारत के मुसलमानों व दलितों के प्रति भी अपना कर्तव्य निभाना है।"

मि० चर्चिल हिन्दू-राज के विरोधक और पाकिस्तान के समर्थक हैं। मि० चर्चिल को विश्वास है कि लीग की पाकिस्तान की माँग भारत में ब्रिटिश साम्राज्यवाद की रक्षा करेगी।

अब घटना-क्रम को ध्यानपूर्वक देखिए, सन् १६४० में लीग ने पाकिस्तान की माँग की, जिसमें हिन्दू बहुमत प्रान्त आसाम को भी पाकिस्तान में शामिल किया गया था। सन् १६४१ में जन-गणना हुई और १६४२ में क्रिप्स महोदय विभाजन की योजना लेकर भारत आये। इन घटनाओं का क्रमपूर्वक अध्ययन करने से यह भेद खुल जाता है कि लीग और सरकार के संयुक्त हिन्दू-विरोधी दृष्टिकोण के फलस्वरूप आसाम में लीग की स्थिति मजबूत करने के लिये और भारत-भर में हिन्दुओं की संख्या कम करने के लिये जंगली जातियों को हिन्दुओं से अलग कर दिया गया है। इस पक्षपातपूर्ण वर्गीकरण में आसाम की समस्या ने महत्वपूर्ण पार्ट अदा किया है। सन् १६०६ में जो मुस्लिम-डेपुटेशन लार्ड मिण्टो से मिला था, उसने संख्या से अधिक पृथक् प्रतिनिधित्व की माँग करते हुए यह भी कहा था कि चूँकि दलित और जंगली जातियों का समावेश हिन्दुओं में किया जाता है, इसलिये हिन्दुओं की संख्या की अपेक्षा मुस्लिम

संख्या कम मालूम होती है। सन् १६०६ से लेकर दलित और आदिवासी लीग की नजर में खटक रहे थे। लीगियों के प्रयत्न और सरकार के हिन्दू-विरोधी नीति के फलस्वरूप आदिवासियों को हिन्दुओं से पृथक् कर दिया गया है। और यह भी सोचने की बात है कि आसाम में हरिजन समेत हिन्दुओं की संख्या तो ७ लाख घटाई गई है और जंगली जातियों की संख्या १० लाख से एक दम २८ लाख बढ़ा कर दिखाई गई है। यह आँकड़े साबित करते हैं कि आसाम की जन-गणना में सर सादुल्ला के लीगी मन्त्रि-मण्डल ने अनुचित तथा पक्षपातपूर्ण हस्तक्षेप किया है। यही कारण है कि इस विचित्र वर्गीकरण में हमने लीगी मन्त्रि-मण्डल को निर्दोष नहीं समझा।

ध्यान रहे, आसाम के आदिवासी, जिनमें नागा अहम, गारो, खसी, मिकिर, मणिपुरी, लसाई आदि प्रमुख हैं, प्रायः क्षत्रिय हैं और वे सभ्य आर्यों की सन्तान हैं। आसाम का प्राचीन नाम प्राग्ज्योतिष तथा कामरूप है और इसका उल्लेख रामायण और महाभारत में आता है। उपर्युक्त आदिवासी जातियों की वंश-परम्परा महाभारत काल के पाण्डवों, यादवों तथा तत्कालीन क्षत्रियों के रक्त से सम्बन्धित है। इनके आचार तथा विचार बिल्कुल हिन्दू जैसे हैं। फिर भी स्वार्थी लोग अपना मतलब सिद्ध करने के लिये सभ्य आर्यों की संतान को असभ्य तथा जंगली कह कर अपमानित कर रहे हैं। आसाम में हिन्दुओं की संख्या ३५ लाख कम करने का प्रयत्न किया गया है।

आसाम के लीगी मन्त्रि-मण्डल ने आसाम में मुस्लिम जन-संख्या बढ़ाने के लिये पूर्व बंगाल के ग़रीब मुसलमान किसानों और मज़दूरों को आसाम में बसाना शुरू किया। इन बंगाली मुसलमानों को 'अधिक अन्न उपजाओ' आन्दोलन की आड़ में मुफ्त ज़मीनें दी गईं। इस प्रकार लीगी मन्त्रि-मण्डल ने मुस्लिम-संख्या बढ़ाने का प्रयत्न किया, ताकि आसाम एक मुस्लिम बहुमत प्रांत बन जाय। हिन्दू महासभा ने १९४४ में बिलासपूर-अधिवेशन में इसके सम्बन्ध में जो प्रस्ताव पास किया है, उसको हम यहाँ उद्धृत करते हैं, जिससे सारी परिस्थिति को समझने में सहायता मिलेगी। प्रस्ताव यह है—"गाँधी-जिन्ना पत्र-व्यवहार से यह बात स्पष्ट हो गई है कि मि० जिन्ना समस्त आसाम को हिन्दू बहुमत प्रान्त होते हुए भी अपने पूर्वी पाकिस्तान का एक भाग बनाना चाहते हैं। इस नीति के कारण आसाम के लीगी मन्त्रि-मण्डल की सदा यह मनोवृत्ति रही है कि वे पूर्वी बगाल की मुस्लिम जनता को आसाम में बसा दें, ताकि आसाम एक मुस्लिम बहुमत प्रांत बन जाय। आसाम के गवर्नमेन्ट अधिकारियों की रिपोर्ट से मालूम होता है कि यह बसाये गये मुसलमान अपनी आदतों में बहुत ही कट्टर हैं और वहाँ के निवासियों पर तरह-तरह के अत्याचार करके उनको बलपूर्वक अपने घरबार से बाहर निकलने पर विवश करते हैं। इन बसे हुए बंगाली मुसलमानों के व्यवहार को देखकर 'लाइन-सिस्टम' (Line system) की योजना की है, ताकि ये मुसलमान एक निश्चित सीमा के अन्दर

ही रहें और खुले आम आसाम की जनता पर अत्याचार न कर सकें। ऐसा प्रतीत होता है कि आसाम को पाकिस्तानी प्रांत बनाने की नीति के कारण वर्तमान मुस्लिम लीगी मन्त्रि-मण्डल 'लाइन-सिस्टम' को तोड़ देने की कोशिश कर रहा है और लाखों मुसलमानों को बंगाल से अधिक अनाज उपजाने के आन्दोलन में भाग लेने के बहाने असाम में लाया जा रहा है। यह नीति आसाम के आदि निवासियों के लिये भय का कारण बन गई है और उनकी सुरक्षितता और आर्थिक स्थिति पर कुठाराघात कर रही है। यह महासभा का अधिवेशन आसाम के मुस्लिम लीगी मन्त्रि-मण्डल की नीति का घोर विरोध करता है और आसाम के निवासियों से प्रार्थना करता है कि वे 'लाइन-सिस्टम' को तोड़ने का और अवांछित मनुष्यों को अपने प्रान्त में बसाने का घोर विरोध करें।"

मार्च १९४५ में अपने मन्त्रि-मण्डल को बनाये रखने के लिये सर सादुल्ला ने सभी दलों का सहयोग प्राप्त किया। श्री बारडोलाई ने सर सादुल्ला से कह दिया था कि मन्त्रि-मण्डल में कांग्रेसी सदस्य नहीं रहेंगे, पर हम मन्त्रि-मण्डल के साथ रहेंगे। जमीन के बन्दोबस्त सम्बन्धी नीति के बारे में सभी दलों में समझौता हुआ था, जिसके अनुसार सभी रक्षित चारागाहों से, जो क्षेत्र में १ लाख से अधिक एकड़ जमीन थी, बंगाल के मुस्लिम प्रवासियों को हट जाना चाहिये था। मुस्लिम प्रवासियों ने सभी रक्षित चारागाहों पर जबर्दस्ती अधिकार कर लिया था।

समझौते की शर्त के अनुसार बंगाली मुसलमानों को वहां से हटाया न गया। सर सादुल्ला ने लीग हाई-कमाण्ड के आदेश से समझौते की शर्त का पालन नहीं किया।

बंगाल के मुस्लिम प्रवासी आसाम में आकर खाली जमीनों पर अब भी कब्जा कर रहे हैं। आसाम के प्रधान-मन्त्री श्री बारडोलाई जमीनों पर जबर्दस्ती अधिकार करने वाले मुसलमानों को बेदखल कर प्रान्त से निकाल देना चाहते हैं। प्रान्तीय मुस्लिम लीग इस कार्य का विरोध कर रही है। ८ नवम्बर १९४६ को आसाम प्रांतीय मुस्लिम लीग के मंत्री मि० महमूदअली ने कहा—"मुसलमान इस विनाशक कार्रवाई का बहादुरी से सामना करेंगे।" आपने इस कार्य के लिये हिन्दुस्थान भर के मुसलमानों से सहायता की अपील की है।

बंगाल के प्रधान मंत्री मि० सुहरावर्दी ने श्री बारडोलाई से प्रार्थना की थी कि वे चारागाहों पर अनधिकार कब्जा करनेवाले लोगों को उन चारागाहों से निकालने की नीति पर तब तक अमल न करें, जब तक कि दोनों प्रधान मंत्री इस प्रश्न पर सलाह-मशविरा न कर लें। मि० सुहरावर्दी ने इस मुलाकात के लिये आसाम आने की इच्छा भी की थी। १६ नवम्बर १९४६ को श्री बारडोलाई ने मि० सुहरावर्दी को तार में जवाब भेजा—"आसाम-सरकार ने फिलहाल निश्चय किया है कि वह सन १९४५ में मुस्लिम लीगी सरकार तथा अन्य दलों में हुए समझौते के अनुसार पिछली तथा वर्तमान सरकारों ने जो

जमीनें खाली कराली थीं, उनकी धान की फसल को कटवा कर अपने कब्जे में कर लेगी। अन्य जमीनों से उन पर अनधिकार कब्जा करनेवालों का वास्तविक निष्कासन बाद में होगा। इस बीच सरकार ने विरोधी दल के नेता श्री सादुल्ला से कहा है कि यदि वे इन अनधिकारी आगन्तुकों को शान्तिपूर्वक उक्त जमीनें खाली करने के लिये प्रेरित कर सकें और सरकार को अपनी नीति पर अमल करने दें, तो हम अन्य जमीनों के खाली कराने के प्रश्न पर परस्पर विचार करना स्वीकार कर लेंगे।

"इधर हाल ही में बंगाल से मुसलमान भारी संख्या में नौकाओं और ट्रकों पर सवार होकर आसाम में आ रहे हैं और जहाँ तहाँ खाली जमीनों पर जबर्दस्ती कब्जा कर रहे हैं। पशु चरानेवाले चरवाहों तथा उनके पशुओं पर रात के समय अनेक बार कायरता पूर्ण हमले भी किये गये हैं। सरकार धमकियों या भय-प्रदर्शन से दबेगी नहीं। मैं केवल ऊपर दी गई शर्त्त पर ही आपसे चर्चा कर सकता हूं और श्री सादुल्ला का विचार जानकर इस चर्चा के लिये समय व स्थान की सूचना आपको दूँगा। पिछली बार आपके मंगलदाई आने की खबर से ही उत्तेजना फैल गई थी। इसलिये मैं आपकी यहाँ उपस्थिति उचित नहीं समझता।"

आसाम में जो कुछ हुआ और हो रहा है, उससे पाठक समझ जायेंगे कि मुसलमान आसाम को पाकिस्तानी प्रान्त बनाने के लिये कितने अधिक प्रयत्नशील हैं। हिन्दू जाति को दुर्बल

बनाने के लिये कैसे षडयन्त्र रचे जा रहे हैं। मुसलमान आक्रमणात्मक नीति से काम ले रहे हैं और हिन्दू केवल रक्षात्मक नीति पर ही चल रहे हैं। आसाम भारत की उत्तर-पूर्व सीमा है। उत्तर-पश्चिम सीमा की तरह उत्तर-पूर्व सीमा पर भी मुसलमान अपना प्रभुत्व चाहते हैं। हिन्दू समाज परिस्थिति पर गम्भीरतापूर्वक विचार करे।

सिंध के लीगी मन्त्रि-मण्डल की हिन्दू-विरोधी मुस्लिम-पोषक नीति

१९३५ के शासन-विधान के अनुसार सिन्ध को बम्बई प्रान्त से पृथक् किया गया है। मुसलमानों ने हिन्दुओं को मुसलमान बनाकर मुस्लिम लोक-संख्या बढ़ाने का प्रयत्न तो किया ही है, पर उन्होंने मुस्लिम बहुमत प्रांतों की संख्या बढ़ाने का भी प्रयत्न किया है और कर रहे हैं। मुस्लिम लीग ने सिन्ध को बम्बई से पृथक् करने और सीमाप्रांत में और प्रांतों की तरह प्रातिनिधिक शासन-व्यवस्था प्रचलित करने की माँग साम्प्रदायिक दृष्टि से अर्थात् मुस्लिम बहुमत प्रांतों की संख्या बढ़ाने की दृष्टि से की थी। सिंध के पृथक्करण की माँग के सम्बन्ध में सायमन कमीशन की रिपोर्ट में लिखा है—

"This demand has gathered strength not so much in the homes of the people or among the Mohammedan cultivators of Sind as among leaders of Mohammedan thought all over India to whom the idea of a Moslem province, contiguous to predominently Moslem area of Baluchistan, the N. W. F. Province and the Punjab naturally appeals as offering a stronghold against the fear of Hindu domination."

अर्थात् "सिन्ध के सर्वसाधारण लोगों के घरों में या मुस्लिम किसानों के मन में सिंध के पृथक्करण की माँग ने कोई जोर पकड़ा न था। भारत भर में फैले हुए साम्प्रदायिक विचारों के मुस्लिम नेताओं ने इस माँग पर जोर दिया। उन्हों ने स्वाभाविक तौर पर इस बात को पसन्द किया कि बलूचिस्तान, सीमाप्रांत और पंजाब इन मुस्लिम बहुमत प्रांतों के समीप ही सिंध भी मुस्लिम बहुमत प्रांत हो। हिन्दू सत्ता के भय के विरुद्ध एक सुदृढ़ संगठनात्मक आधार की दृष्टि से उनको सिन्ध के पृथक्करण की कल्पना महत्वपूर्ण प्रतीत हुई।"

कांग्रेस के नेता इस बात को भली भांति जानते थे कि मुसलमान सिंध के पृथक्करण पर क्यों जोर दे रहे हैं। नेहरू रिपोर्ट में इस बात को स्पष्ट कर दिया गया था कि सिंध के पृथक् किये जाने की मांग साम्प्रदायिक भाव से पेश की जा रही है। फिर भी कांग्रेस मुसलमानों को खुश करने के लिये सिंध के पृथक्करण की बात पर सरकार और लीग से सहमत हो गई। कांग्रेस की तरह हिन्दू महासभा भी भाषा के अनुसार प्रांतों की सीमा निर्धारित करने के सिद्धान्त को मानती है, पर भाषा के साथ ही इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि पृथक् किये जाने वाला प्रान्त आर्थिक दृष्टि से अपने पाँव पर खड़ा हो सकता है या नहीं? इस दृष्टि से बम्बई से सिंध के अलग होने का विरोध किया जा सकता था, क्योंकि सिंध आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बी नहीं है। केन्द्रीय सरकार सिंध की प्रान्तीय

सरकार को एक करोड़ रुपये से अधिक आर्थिक सहायता प्रतिवर्ष देती है। यह स्पष्ट है कि केन्द्रीय सरकार के खजाने में अधिक पैसा हिन्दुओं की जेब से जाता है। तो प्रकारान्तर से यह कहा जा सकता है कि हिन्दुओं के पैसे की सहायता से सिन्ध की प्रांतीय शासन-व्यवस्था की गाड़ी चल रही है। इस दृष्टि से सिंध के मुस्लिम लीगी मंत्रिमण्डल को हिन्दुओं के प्रति कृतज्ञ होना चाहिये, पर वह साम्प्रदायिकता के नशे में मस्त होकर हिन्दुओं से अन्याय और अत्याचार का व्यवहार करना अपना इस्लामी कर्त्तव्य समझता है।

सिंध का लीगी मन्त्रि-मण्डल साम्प्रदायिकता के रंग में कितना अधिक रंगा हुआ है, यह उसने जो २६ अक्टूबर १९४६ को आर्यसमाज के सत्यार्थ-प्रकाश पर प्रतिबन्ध लगाया है, उससे साफ मालूम हो जाता है। मि० जिन्ना बार-बार कहते हैं कि पाकिस्तान में अल्प-संख्यकों के धर्म, भाषा और संस्कृति की रक्षा करने का लीग आश्वासन देती है। सीमित अधिकारों से उन्मत्त होकर यदि लीगी मन्त्रि-मण्डल सत्यार्थ-प्रकाश पर भारत रक्षा-विधान के आधीन प्रतिबन्ध लगा सकता है, तो पाकिस्तान में पूर्णाधिकार प्राप्त हो जाने पर वह अल्प-संख्यकों के धर्म, संस्कृति और भाषा पर कैसे घातक प्रहार करेगा, इसकी कल्पना कोई भी विचारशील मनुष्य कर सकता है। सत्यार्थ-प्रकाश ७० वर्ष से जनता के सामने है और उसका भारत की प्रायः सभी भाषाओं में खूब प्रकाशन हो चुका है। हम मानते

हैं कि सत्यार्थ-प्रकाश के १४वें समुल्लास में इस्लाम-विरोधी बातें हैं, पर यदि इसी आधार पर सत्यार्थ-प्रकाश पर प्रतिबन्ध लगाया जा सकता है, तो कुरान पर भी प्रतिबन्ध लगाया जा सकता है, क्योंकि कुरान में गैर-मुस्लिमों के विरुद्ध घृणा और द्वेष का प्रचार किया गया है। आज जो लीगी मुसलमान 'पाकिस्तान' का शोर मचा रहे हैं, क्या वह हिन्दुस्थान-विरोधी नहीं है ? पाकिस्तान का अर्थ पवित्र स्थान है। पाकिस्तान में उन सब देशों को, जहाँ मुस्लिम सत्ता नहीं है, अपवित्र स्थान मानने का भाव प्रच्छन्नरुप में विद्यमान है। क्या अपवित्र स्थान समझ कर हिन्दुस्थान को अपमानित करनेवाले 'पाकिस्तान' शब्द को हिन्दुस्थान में गैर-कानूनी करार नहीं दिया जा सकता ? सच तो यह है कि सत्यार्थ-प्रकाश पर प्रतिबन्ध लगा कर सिंध के लीगी मन्त्रि-मण्डल ने सारे हिन्दू समाज को खुली चुनौती दी है।

२२ अप्रैल १९४६ को आर्य-प्रतिनिधि-सभा पंजाब की हीरक-जयन्ती के अवसर पर सत्यार्थ-प्रकाश पर प्रतिबन्ध के सम्बन्ध में एक प्रस्ताव में कहा गया है—"पंजाब और अन्य प्रान्तों के आर्यों का यह सम्मेलन सिंध प्रांत की लीगी सरकार द्वारा आर्य-समाज के पुनीत ग्रंथ सत्यार्थ-प्रकाश पर लगाये गये प्रतिबन्ध का घोर विरोध करता है। इस पाबन्दी के लगाने में सिंध सरकार ने भारत-रक्षा-विधान का अनुचित प्रयोग किया है और इसके द्वारा अल्प-संख्यक आर्यों के धार्मिक अधिकारों को कुचलने का दुस्साहस किया है। इसका यह भी स्पष्ट अर्थ है कि भविष्य में

मुस्लिम बहुमत प्रान्तों में अल्प-संख्यकों के अधिकार इस प्रकार सुरक्षित न रहेंगे। देश के व्यापक हितों को ध्यान में रखते हुए आर्य-समाज ने अभी तक सिंध सरकार की इस अनुचित पाबंदी के विरुद्ध कोई सक्रिय कदम नहीं उठाया है, परन्तु यदि अब भी जब कि इंग्लैण्ड का मन्त्रि-मण्डल मिशन हमारे देश की समस्या को सुलझाने आया है, सत्यार्थ-प्रकाश पर लगा हुआ प्रतिबन्ध नहीं हटा दिया गया तो आर्य-समाज अपनी सारी शक्ति से इस अनुचित प्रतिबन्ध को हटाने के लिये अग्रसर होगा और यदि आवश्यक जान पड़ा तो सत्याग्रह द्वारा भी अपनी उचित माँग पूरी कराने का प्रयत्न करेगा।"

सत्यार्थ प्रकाश रक्षा-समिति के अध्यक्ष श्रीयुत् माननीय घनश्यामसिंह गुप्ता ने अपने एक वक्तव्य में कहा है—"सिंध के गवर्नर महोदय से मुझे विदित हुआ है कि वे सत्यार्थ-प्रकाश के प्रतिबन्ध के विषय में अपने मन्त्रि-मण्डल की कौन्सिल के परामर्श के अनुसार ही कार्य करते हैं। अतः यह स्पष्ट है और हमें सच्चाई को आँखों से ओझल भी नहीं करना चाहिये कि हमारी शिकायत प्रत्येक अवस्था में मुस्लिम मन्त्रि-मण्डल के विरुद्ध ही होनी चाहिये। जहाँ तक हो सके, मैं संघर्ष को टालने के लिये उत्सुक हूँ, परन्तु मुझे स्वीकार करना चाहिये कि अब मुझे अधिक आशा नहीं दीख पड़ती। अपने धार्मिक अधिकारों की रक्षा के लिये आर्य समाज को पुनः कष्ट और बलिदान की परीक्षा में से होकर जाना पड़ेगा।"

१६ अगस्त को लीग के 'प्रत्यक्ष संघर्ष' दिवस के अवसर पर पंजाब के लीगी नेता मि० ईनायतुल्ला शाह ने कराची में मुसलमानों की सभा में कहा—"सत्यार्थ-प्रकाश पर सिंध मन्त्रि-मण्डल द्वारा लगाये गये प्रतिबन्ध को जारी रखने के लिये पंजाब के मुसलमान इस बात की जी-जान से कोशिश करेंगे कि प्रतिबन्ध बना रहे। आर्य समाजियों ने इस सम्बन्ध में सत्याग्रह करने की जो धमकी दी है, उसका पंजाब के मुसलमान सक्रिय विरोध करेंगे। पंजाब के मुसलमान आर्य-समाज के सत्याग्रही जत्थे को कराची नहीं जाने देंगे। अभी तो सत्यार्थ-प्रकाश के १४ वें समुल्लास पर ही प्रतिबन्ध लगाया गया है। मुसलमान इस बात की चेष्टा में अन्तिम दम तक लड़ेंगे कि सत्यार्थ-प्रकाश पर पूर्ण रूप से प्रतिबन्ध लगा दिया जाय। मैं सिन्ध मन्त्रि-मण्डल को आश्वासन देता हूँ कि सत्यार्थ-प्रकाश के प्रतिबन्ध के प्रश्न पर पंजाब के मुसलमान सिंध के लीगी मन्त्रि-मण्डल की संकटों से रक्षा करेंगे।"

सत्यार्थ-प्रकाश के १४ वें समुल्लास पर लागू हुआ प्रतिबन्ध ३० सितम्बर १६४६ को भारत-रक्षा-कानून के साथ समाप्त हो गया था, परन्तु आर्य समाज के जोश की कुछ भी परवाह न करके लीगी मन्त्रि-मण्डल ने १० अक्टूबर १६४६ से सत्यार्थ-प्रकाश के १४ वें समुल्लास पर फिर पाबन्दी लगा दी है।

गाँधीजी ने २६ अक्टूबर १६४६ को इस रोक पर अपना मत प्रकट करते हुए लिखा—"ऐसा सोचा गया था कि सत्यार्थ-

प्रकाश पर लगाये गये प्रतिबन्ध का अन्त हो जाने पर वह दुबारा नहीं लगाया जायेगा। पर वह आशा व्यर्थ सिद्ध हुई। नया प्रतिबन्ध पुराने प्रतिबन्ध की अपेक्षा भी कड़ा है। पुराने प्रतिबन्ध के अनुसार सत्यार्थ प्रकाश के १४ वें समुल्लास सहित पुस्तक का मुद्रण और प्रकाशन अपराध था, नये प्रतिबन्ध के अनुसार ऐसी पुस्तक को रखना भी अपराध है। मुझे यह कहना पड़ेगा कि यह प्रतिबन्ध विवेकपूर्ण नहीं है और इसके द्वारा संसार भर के आर्य-समाजियों की भावनाओं को ठेस पहुंचेगी। ५० लाख आर्य-समाजियों के लिये सत्यार्थ-प्रकाश भी उतने ही आदर की वस्तु है, जितने आदर की वस्तु कुरान मुसलमानों के लिये और बायबिल ईसाइयों के लिये हैं। सामयिक विवाद-ग्रस्त साहित्य पर प्रतिबन्ध लगाना समझा जा सकता है, हालाँकि आजकल लोकप्रिय सरकारें इस दिशा में भी अपने अधिकारों का उपयोग करने में संकोच करती हैं। पर एक धार्मिक पुस्तक पर प्रतिबन्ध लगाना शरारत से भरा काम है। इसलिये मैं सिन्ध की सरकार को प्रतिबन्ध हटाने की सलाह दूँगा। सत्यार्थ-प्रकाश का सिंधी संस्करण एक नया प्रकाशन नहीं है। क्या यह समझा जाय कि जिस पुस्तक के अनेक संस्करण हो चुके हैं, उसमें अब जाकर ऐसे अंशों का पता चला है, जिनके द्वारा सम्राट् की प्रजा के विभिन्न वर्गों में शत्रुता और घृणा के भाव उद्दीप्त होते हैं? धार्मिक धारणाओं में विभिन्नता हमेशा रहेगी और सहिष्णुता ही एक ऐसी चीज़ है, जिसके द्वारा विभिन्न धर्मों के अनुयायी

पड़ोसियों और मित्रों की तरह रह सकेंगे। अनुकूल या प्रतिकूल आलोचना से धर्म का कुछ नहीं बनता-बिगड़ता है, उसे तो उसके अनुयायियों की ढिलाई या उदासीनता से ही क्षति पहुंच सकती है।"

सत्यार्थ-प्रकाश का प्रश्न एक गंभीर प्रश्न है। काँग्रेसी सदस्यों ने असेम्बली में इस प्रश्न पर तटस्थता की नीति ग्रहण की। कहने की आवश्यकता नहीं है कि इस प्रश्न पर हिन्दू महासभा आर्य-समाजके साथ है।

सिन्ध में हिंदू २७ प्रतिशत हैं। केवल १२ लाख हिंदू हैं। सिंध के हिंदुओं की अवस्था दांतों के बीच में जीभ की तरह है। मंजिलगाह के प्रश्न को लेकर सक्खर के दंगे में मुसलमानों ने जिस निर्दयता का प्रदर्शन किया है, सिंध के हिंदू उसे भूल नहीं सकते। सिंध के हिंदू नेता श्यामदास गिडवानी ने १९४५ में एक व्यक्तव्य में कहा था—'१४२ हिंदुओं का खून किया गया। १० हिंदू जलाये गये। १६४ हिदुओं के घर जला दिये गये। ४६७ हिंदू घरों को लूटा गया। ६ हिंदू स्त्रियों पर बलात्कार किया गया। आज भी छोटे छोटे देहातों में रहने वाले हिंदुओं का जीवन खतरे में है। ५४०० हिंदू कुटम्ब मुसलमानों के भय से अपने देहातों की जमीन जायदाद छोड़ कर शहर में रहने के लिए आये हैं। १ घर की कीमत १००० रुपया लगाई जाय, तो भी ५४०००००-लाख रुपया होती है। हिंदुओं की ८६०० एकड़ जमीन छीन ली गई है, जिसकी कीमत लगभग २ लाख ७२ हजार होती है।

सिंधु नदी की पिछली बाढ में हिंदुओं को १७ हजार घरों से हाथ धोना पड़ा, जिनकी कीमत लगभग १ करोड़ रुपया होती है। सिंध सरकार ने बाढ पीड़ितों की सहायता के लिये केवल आठ हजार रुपये दिये थे! यह है सिंध के हिंदुओं का जीवन!

१६४५ के चुनाव के अनुसार सिंध में जो मंत्रि-मंडल बना है, सब जानते हैं कि वह गवर्नर सर मूडी, ३ यूरोपियन सदस्य और लीगी सदस्यों के गठ-बंधन से बना था। यदि गवर्नर महोदय पक्ष-पात से काम न लेते, तो वहाँ कॉंग्रेस और सैयद पार्टी के संयुक्त दल का ही मंत्रि-मण्डल पदारूढ़ होता। गवर्नर महोदय ने कानून की परवाह न करके बार बार लीगी मंत्रि-मण्डल की रक्षा की। अन्त में लीग का बहुमत बनाये रखने के लिए लीगी स्पीकर को पदत्याग करना पड़ा। स्पीकर की नीति के अनुसार विरोधी दल के डेप्युटी स्पीकर ने भी त्यागपत्र दिया, मंत्रियों ने भी त्याग-पत्र दिये। ऐसी अवस्था में विरोधी दल के नेता से बिना परामर्श किये ही १२ सितम्बर १६४६ को गवर्नर महोदय ने सिंध असेम्बली को भंग कर दिया और नये चुनाव तक वर्तमान मंत्रि-मंडल को ही कायम रक्खा। १३ सितम्बर १६४६ को विरोधी दल के नेता जी० एम० सैयद ने गवर्नर के कार्य की निन्दा करते हुए एक वक्तव्य में कहा—'गवर्नर का यह कार्य गवर्नमेण्ट इण्डिया एक्ट के विरुद्ध है। उन्होंने विरोधी दल को मौका दिये बिना ही असेम्बली भंग कर दी। यह कार्य करने से पहले उन्होंने विरोधी दल के नेता से इस विषय में मन्त्रणा भी नहीं की, जब कि विरोधी

दल ने यह घोषणा कर दी थी कि वे मंत्रि-मण्डल बना सकते हैं और असेम्ब्ली के अध्यक्ष की नियुक्ति के लिए सदस्य भी दे सकते हैं। गवर्नर चाहते हैं कि प्रान्त में या तो लीगी मंत्रि-मंडल रहे या फिर कोई मंत्रि-मण्डल ही न रहे।'

इस लड़खड़ाते लीगी मंत्रि-मण्डल ने अल्प शासन-काल में हिंदू विरोधी नीति के द्वारा अपनी साम्प्रदायिकता का पूर्ण परिचय दिया है। सिंध असेम्ब्ली के काँग्रेस दल द्वारा २४ जून १९४६ को प्रकाशित वक्तव्य में कहा गया है—'सिंध में हिंदुओं की जन संख्या २७ प्रति-शत हैं, जिस से प्रान्त की सरकार को ५० प्रति-शत की आय होती है। इतना होते हुये भी प्रायः प्रांतीय सरकार के तमाम विभागों के मुख्याधिकारी और सभी अफसर मुसलमान हैं। अल्पमतों में सब से बड़ा दल होने पर भी हिंदुओं को कोई पद प्राप्त नहीं है। एक भी कलेक्टर या जिला मैजिस्ट्रेट हिंदू नहीं है। केवल एक पुलिस सुपरिंटेण्डेण्ट हिंदू है, जो शीघ्र ही नौकरी से अलग होनेवाले हैं। कोई जिला जज हिंदू नहीं है। प्रान्त में २० हाकिम परगनाओं में से केवल एक हिंदू है। चिकित्सा, स्वास्थ्य, शिक्षा, आबकारी, सहयोग-समिति, जेल, ग्राम-सुधार विभाग के प्रधान मुसलमान हैं। किसी भी विभाग में कोई हिंदू प्रान्तीय सेक्रेटरी नहीं है।

"कई हिंदू किसानों तथा भूमि-पतियों को ऐसी जमीनों से वंचित कर दिया गया है, जो उनके पास कानून की दृष्टि से खरीदी हुई होने के कारण बीस या पच्चीस वर्ष से थी। मुसल-

मान जमींदारों ने मुसलमान अधिकारियों की सहायता से हिंदुओं की जमीन को जबर्दस्ती छीन लिया। कुछ हिंदू जमींदारों पर मुकदमा चला कर उन्हें जेलों में बंद कर दिया गया है।

"माल-मंत्री ने कुछ मुस्लिम व्यवस्थापकों के साथ प्रान्त का दौरा किया और उत्तेजनात्मक व्याख्यान देकर साम्प्रदायिक मत भेद उत्पन्न कर दिया है। हिन्दुओं के अधिकार छीन कर उनके साथ जबर्दस्ती की जाती है।

"हिन्दू बहुमत रखनेवाली म्युनिसिपल कमेटियों को भंग करके उनको हिन्दुओं के अधिकार से निकाल कर मुसलमानों के अधिकार में सौंपा जा रहा है। इनमें सबसे अंतिम उदाहरण हैदराबाद म्युनिसिपैलिटी का है, जो प्रान्त में दूसरा सब से बड़ा नगर है। उस पर इस बहाने से अधिकार किया जा रहा है कि उसका प्रबन्ध ठीक नहीं है, परन्तु मुस्लिम बहुमतवाले किसी जिला बोर्ड को प्रबन्ध खराब होते हुये भी भंग नहीं किया गया है।

"भारत-रक्षा-विधान का भारत सरकार के आदेशों के विरुद्ध बड़ा दुरुपयोग किया जा रहा है। जो हिन्दू पीढ़ियों से अन्न व वस्त्र का व्यापार करते आये हैं और जिन्हें एक लम्बे समय से लाइसेन्स मिले हैं, उनके लाइसेन्स छीने जा रहे हैं और उन मुसलमानों को दिये जा रहे हैं, जिनका इन व्यापारों से कोई सम्बन्ध नहीं रहा है। लीगी सरकार ने आदेश दिया है कि नये लाइसेन्स जारी करके ५० प्रतिशत मुसलमानों को दिये जायें। मुसलमान अफसर मुसलमानों को ५० प्रतिशत कोटा देते हैं।

इस प्रकार कोटा प्राप्त करनेवाले मुसलमान अधिक मुनाफा लेकर अपना माल दूसरों को बेच देते हैं। इस प्रकार हिन्दू अपने पेशे से वंचित किये जा रहे हैं।"

यह कांग्रेस दल का वक्तव्य है। तात्पर्य यह है कि सिंध में हिन्दुओं को सरकारी नौकरियों में उचित भाग नहीं मिलता है, उनकी जमीन छीनी जा रही है और उनको व्यापार से भी बंचित किया जा रहा है। हिन्दुओं को अपने जीवन - निर्वाह के लिये कोई भी पेशा करना असम्भव हो रहा है।

जब मुस्लिम लीग ने ब्रिटिश मंत्रि-मण्डल मिशन की दीर्घ-कालीन तथा अन्तःकालीन योजना को अस्वीकृत कर दिया और पूर्ण स्वतन्त्र पाकिस्तान की घोषणा की, तो सिंध का लीगी मंत्रि-मण्डल साम्प्रदायिक जोश में बेहोश होकर मुसलमानों को हिंदुओं के विरुद्ध भड़काने के निन्दनीय काम में जुट गया। वह भूल गया कि प्रांत की शांति तथा व्यवस्था का उत्तरदायित्व उस पर ही है। बात यहाँ तक बढ़ गई कि सिंध के राष्ट्रीय मुस्लिम नेता हाजी मौलाबख्श को लीगी मंत्रि-मण्डल के विरुद्ध आवाज बुलंद करनी पड़ी। हाजी मौलाबख्श ने ४ अगस्त १९४६ को प्रकाशित वक्तव्य में कहा है—"सिंध के लीगी मंत्रि-मण्डल के मंत्रियों ने न्याय की अवहेलना और हिंसा कराने के लिये उकसाने का प्रारम्भिक कार्य पूरा कर दिया है। लीग के निश्चय पर पीर गुलामअली ने कहा था कि लीग ने मुस्लिम राष्ट्र के शत्रुओं अर्थात् कांग्रेस और अंग्रेजों के विरुद्ध जिहाद बोल दी है। उद्देश्य

की पूर्ति में बाधक बननेवाले का नाश कर दिया जायेगा। मालमन्त्री पीर इलाहीबख्श ने कहा कि लगभग सौ वर्ष पहले हिन्दुओं की मदद से अंग्रेजों ने मुसलमानों से शक्ति छीन ली। हम उसका बदला लेकर पाकिस्तान की स्थापना करेंगे। मैं काँग्रेस को चेतावनी देता हूँ कि अगर उसने कुछ मुसलमानों की सहायता से हम पर शासन करने की चेष्टा की तो उसका जर्मनों का-सा हाल हो जायेगा।

"अलवहीद पत्र ने अपने सम्पादकीय में लिखा था—सिन्धी मुसलमानो, तुम हिन्दुओं के गुलाम और उनके दलवाले दगाबाज मुसलमानों को लीग में शामिल होने के लिये मजबूर कर दो। तुम ऐसी स्थिति पैदा कर दो, जिससे हिन्दुओं के गुलाम लीग को छोड़ कर और कहीं न जा सकें।

सिंध वैसे ही उपद्रवों के चक्र में है। सरकारी अधिकारियों द्वारा ऐसी भड़कानेवाली बातों से जनता के मस्तिष्क पर कैसा बुरा प्रभाव पड़ेगा, इसके बारे में तो केवल सोचा ही जा सकता है। यदि किसी राजनीतिक दल को यह अधिकार है कि वह अपने उद्देश्य को कानून की अवहेलना करके पूरा करे, तो जनता को भी यह माँग करने का अधिकार है कि उक्त दल न्याय और शान्ति का अधिकारी न रहे। लीग मन्त्रि-मण्डल को सहयोग देनेवाले यूरोपियन दल को भी अब अपने उत्तरदायित्व को सोचना चाहिये। इसी प्रकार सिंध गवर्नर का भी यह कर्तव्य है कि लीग की नीति से असहमत अल्प-संख्यक

तथा मुसलमानों की रक्षा के लिये वे लीगी मन्त्रि-मण्डल को तोड़ दें।"

यह एक राष्ट्रीय मुस्लिम नेता का वक्तव्य है। सारांश यह है कि सिन्ध में अल्प-संख्यक हिन्दुओं का जीवन खतरे में है।

२४ अगस्त १६४६ को सिन्ध प्रान्तीय लीग के अध्यक्ष श्री गजदर ने कहा है कि कांग्रेस द्वारा केन्द्र में अन्तःकालीन सरकार बनाये जाने के बाद तुरन्त ही सिंध को स्वतंत्र घोषित कर दिया जावेगा।

श्री गजदर के स्थान पर श्री युसूफ अब्दुल्ला हारून को सिंध प्रान्तीय लीग का अध्यक्ष बनाया गया है। श्री युसूफ हारून ने फरमाया है—"यदि मुसलमानों के सब वर्ग मिल जायें और मुस्लिम लीग के पीछे संगठित हो जायें तो हम अपने शत्रुओं के हमले का मुकाबला आसानी से कर सकेंगे और जिन्ना के नेतृत्व में केन्द्रीय सरकार की आज्ञाओं का उल्लंघन करके सिंध और उससे मिले हुए प्रान्तों को स्वतंत्र घोषित कर सकते हैं और उनको यह विदेशी सत्ता से मुक्त भी कर सकते हैं।"

मि० जिन्ना की आबादियों के अदल-बदल की योजना को क्रियान्वित करने के लिये सिंध के प्रधान-मंत्री हिदायतुल्ला ने संयुक्तप्रान्त के मुसलमानों को मुफ्त जमीनें देने का प्रस्ताव किया है। १६ दिसम्बर १६४६ को शिक्षा-मन्त्री पीर इलाहीबक्श ने कहा—"बिहार के मुस्लिम शरणार्थियों को सिंध में आबाद करने की बात चल रही है। मैं कह नहीं सकता कि कितने बिहारी

मुसलमान सिंध में आयेंगे। हमने उन्हें मदद देना स्वीकार किया है। सिन्ध सरकार उन्हें जमीनें और दूसरी सब सुविधायें देगी।"

दिसम्बर १९४६ में जो चुनाव हुआ, उसमें लीग को पैंतीस सीटें प्राप्त हुई हैं। लीग का स्पष्ट बहुमत है। लीग की सफलता के कारणों पर सिंध मुस्लिम जमीयत के अध्यक्ष शेख अब्दुल-मजीद ने भली भांति प्रकाश डाला है। आपने १३ दिसंबर १९४६ को प्रकाशित वक्तव्य में कहा है—"सिंध के चुनावों में लीग ने अनुचित तरीके, दमन, बेजा दबाव तथा सरकारी आतंकवाद की नीति को अपनाया है, जिसके फलस्वरूप सिंध का चुनाव केवल प्रहसन होगया है।" वक्तव्य में लीग के विभिन्न गन्दे हथकण्डों का भण्डाफोड़ करने के पश्चात् आपने सरकार को चुनौती दी है—"मैं सरकार तथा उनके अफसरों पर जो आरोप लगा रहा हूँ, उसकी सच्चाई की जांच के लिये सरकार निष्पक्ष न्यायालय नियुक्त करे। प्रान्त तथा देश को यह निर्णय करना है कि क्या हमारे देश में भी फासिस्टवाद के जन्म को प्रोत्साहन दिया जायेगा?"

★

बंगाल के लीगी मन्त्रि-मण्डल का 'खुला-संघर्ष'

पूर्व बंगाल की करुण कहानी

"नोआखाली और त्रिपुरा जिले के हिन्दुओं पर आक्रमण की पहले से तैयारी की गई थी। यह लीग के प्रचार का परिणाम था। स्थानीय प्रमाणों से स्पष्ट होता है कि गाँवों के प्रमुख लीगी नेताओं का उसमें हाथ था।" —आचार्य कृपलानी

"नोआखाली की घटनायें तैमूरलंग और नादिरशाह के मध्य-कालीन हत्याकाण्डों और लूट-मार की याद दिलाती हैं। निर्दयता तथा पशुता में उनकी तुलना वर्तमान काल की भयंकर से भयंकर घटनाओं से भी नहीं की जा सकती। नाजी जर्मनी के यहूदियों पर किये जाने वाले अत्याचार भी उसके सामने फीके हैं।"

—अमृत बाजार पत्रिका

बंगाल का पहला सर निजामुद्दीन का और दूसरा सर हसन शहीद सुहरावर्दी का—दोनों लीगी मंत्रि-मण्डल अपनी अयोग्यता और साम्प्रदायिकता के कारण सारे संसार में बदनाम हो गये हैं। 'बन्देमातरम्' की राष्ट्रीय ध्वनि से सारे भारत को गुञ्जायमान करनेवाली शस्य-श्यामला बंगभूमि दो लीगी मन्त्रि-मण्डलों की अनुत्तरदायित्वपूर्ण नीति से जिस प्रकार त्राहि-त्राहि कर दो बार चिल्ला उठी, उससे लीगी मंत्रि-मण्डलों की अयोग्यता तथा हिन्दू विरोधी नीति स्पष्टतया प्रमाणित हो जाती है। प्रथम लीगी

मन्त्रि-मंडल के शासन-काल में अकाल से ३५ लाख स्त्री-पुरुष और बच्चे-बूढ़े भूख से तड़प-तड़प कर मर गये। फिर भी ऐसे अयोग्य लीगी मंत्रिमण्डल का समर्थन करनेवाली मुस्लिम जनता में साम्प्रदायिक मनोवृत्ति कितनी अधिक होगी, इसके बारे में कुछ सोचना ही बेकार है।

२८ जुलाई १९४६ को अखिल भारतीय मुस्लिम लीग कौंसिल ने "खुला संघर्ष" का प्रस्ताव पास किया और ११ अगस्त १९४६ को प्रधान-मन्त्री मि० सुहरावर्दी ने लीगी मंत्रिमण्डल की नीति घोषित करते हुए कहा—"केन्द्र में काँग्रेस की अन्तःकालीन सरकार की स्थापना होते ही बंगाल केन्द्र से पृथक् होकर अपनी स्वतन्त्रता की घोषणा कर देगा। बंगाल में समानान्तर सरकार की स्थापना की जायेगी। इस बात की कोशिश की जायेगी कि बंगाल से केन्द्रीय सरकार को एक पाई भी कर न मिलने पाये।" और १६ अगस्त १९४६ को कलकत्ता में और बाद में पूर्व बंगाल में जो कुछ हुआ, वह मि० सुहरावर्दी की घोषित नीति का क्रियात्मक परिचय तथा परिणाम है।

३१ अगस्त को कांग्रेस कार्य-समिति ने कलकत्ता के दंगे के सम्बन्ध में जो प्रस्ताव पास किया है, उसमें जनता का विश्वास प्राप्त निष्पक्ष ट्रिब्युनल द्वारा दुर्घटना की पूरी जांच करने की मांग करते हुये कहा है—'काँग्रेस कार्य-समिति ने मुस्लिम लीग के 'प्रत्यक्ष संघर्ष दिवस' तथा उसके बाद में होनेवाली कलकत्ते की घटनाओं को गहरे दुःख के साथ पढ़ा है। समिति भीषण

जन तथा धन की क्षति और आहत व्यक्तियों, विशेषतया स्त्रियों तथा बच्चों के प्रति की गई निर्दयता की निन्दा करते हैं।

२८ जुलाई को मुस्लिम लीग-कौन्सिल ने प्रत्यक्ष संघर्ष का प्रस्ताव पास किया, जिसके समर्थन में तथा बाद में जिम्मेवार मुस्लिम लीगी नेताओं द्वारा अत्यन्त उत्तेजनात्मक भाषण दिये गये और वक्तव्य तथा पत्रिकायें प्रकाशित की गयीं। कुछ लीगी समाचार पत्रों के लेखों ने भी मुस्लिम जनता को काफी भड़काया, बंगाल मंत्रि-मण्डल ने विरोध के बावजूद १६ अगस्त को सार्वजनिक छुट्टी की घोषणा की, जिसका प्रभाव यह पड़ा कि इसको मनाने में शामिल न होनेवालों को सरकारी संरक्षण नहीं मिलेगा।

यह मालूम हुआ है कि जलूस में शामिल होनेवाले व्यक्ति लंबी बांस की लाठियाँ, तलवारें भाले, खंजर और कुल्हाड़ियां लिये हुये थे और प्रातःकाल से ही दुकानें बंद करने में जरा झिझकनेवालों पर निर्दयता पूर्वक आक्रमण कर रहे थे। छुरेबाजी और लूट सुबह से ही आरम्भ हो गई थी तथा दंगाइयों ने कई स्थानों पर बन्दूकों का भी प्रयोग किया। इसके बाद विशाल पैमाने पर अत्यन्त निदयता पूर्वक हत्या, लूट तथा घरों को जलाना प्रारंभ किया गया। यह तीन या चार दिन तक जारी रहा, जिसके फलस्वरूप कई हज़ार व्यक्ति मारे गये और कई करोड़ रुपये की सम्पत्ति जला दी गयी या लूट ली गयी।

वास्तव में कहा जाय तो १६ अगस्त को बाज़ार में कोई पुलिस न थी। यातायात पुलिस भी न थी। जलूस के साथ पैदल या

घुड़सवार पुलिस भेजने का प्रबन्ध नहीं किया गया, जैसा कि मुहर्रम या अन्य जलूसों के समय प्रायः हुआ करता है। पुलिस-चौकियों के अफसरों ने सहायता के लिये की गई प्रार्थनाओं पर कोई ध्यान नहीं दिया। प्रथम दो रात्रियों में कर्फ्यू आर्डर को घोषणा के बाद भी लागू नहीं किया गया। यद्यपि जनता के लिये यातायात का कोई साधन प्राप्त नहीं था, परन्तु गुण्डे खुले आम मोटर लारियों का प्रयोग कर रहे थे। घरों, सामान तथा अन्य वस्तुओं को आग लगाने के लिये पेट्रोल का खुला प्रयोग किया गया था। सड़कों पर सर्वत्र लाशें पड़ी हुई थीं। अनेक मृत तथा घायल व्यक्तियों को भूगर्भस्थ गंदे नालों में या गंगा नदी में डाल दिया गया।

दंगा प्रारंभ होने के काफी समय बाद तक पुलिस को नहीं बुलाया गया। कुछ स्थानों पर पुलिस ने भी लूट में भाग लिया। लीगियों द्वारा हत्याओं लूट तथा अग्नि-काण्ड का बाज़ार गरम कर दिया जाने पर हिन्दुओं तथा अन्य लोगों ने जहाँ संभव हुआ बदला लिया, जिसके परिणाम स्वरूप बहुत से मुसलमान मारे गये।

अन्य स्थानों पर भी साम्प्रदायिक तनातनी बढ़ गई है तथा हत्यायें हुई हैं। यदि इसको रोका नहीं गया, तो संघर्ष काफी बढ़ सकता है। इसको रोकना नागरिकों का प्रथम कर्तव्य है। प्रत्येक सरकार को शांति की रक्षा करनी चाहिये तथा शान्त नागरिकों को रक्षा का आश्वासन देना चाहिये।

ऐसे दंगे देश के किसी भी भाग में कभी नहीं हुए।"

२० सितम्बर १९४६ को बंगाल मंत्रि-मण्डल के विरुद्ध अविश्वास के प्रस्ताव पर बोलते हुए काँग्रेस दल के नेता श्री किरण-शंकर राय ने कहा—'कलकत्ता में जो नर-संहार हुआ, उसकी सारी जिम्मेदारी प्रधान-मंत्री और उनके साथियों पर है। उन्होंने प्रत्यक्ष संघर्ष दिवस का आयोजन करके कानून और व्यवस्था को भंग कर दिया। जब चार दिन में पांच हज़ार व्यक्ति मारे गये और २५ हज़ार घायल हुये हैं, तब यह स्वयं सिद्ध है कि नगर में कानून और व्यवस्था नहीं थी। प्रत्यक्ष संघर्ष के लिए पहले से ही गुप्त तैयारी की गयी थी, परन्तु सरकार की ओर से रक्षा के लिये कोई व्यवस्था पहले से नहीं की गई थी। चौरंगी में लूट हो जाने के बाद भी पुलिस का पता नहीं था। यह एक भारी षड़यन्त्र था, जिसमें बंगाल के अल्प-संख्यकों को कुचल डालने की योजना बनाई गई थी। जब तक यह लीगी मंत्रि-मण्डल कायम रहता है तब तक न तो जनता में विश्वास उत्पन्न हो सकता है, न साम्प्रदायिक एकता हो सकती है और न अच्छी और ईमानदार सरकार ही बन सकती है।'

मौलाना आजाद, पं० जवाहरलाल नेहरू, मास्टर तारासिंह और हिन्दू महासभा के नेताओं ने एक स्वर से कहा है कि कलकत्ता का दंगा लीगियों के पूर्व संगठित प्रयास का परिणाम था। केन्द्रीय असेम्बली के राष्ट्रीय दल के भूतपूर्व नेता डॉ० बनर्जी ने २५ अगस्त को अपने वक्तव्य कहा—'सब जानते हैं कि मुस्लिम

लीग ने, जिसके मि० सुहरावर्दी एक मान्य नेता हैं, कलकत्ता का उपद्रव प्रारम्भ किया। जब तक बंगाल में लीग का साम्प्रदायिक मंत्रि-मण्डल कायम है, तब तक जनता का अविश्वास तथा भय दूर नहीं हो सकता। प्रान्त का शासन भार संभालना और साथ ही प्रत्यक्ष संघर्ष-आन्दोलन का नेतृत्व करना ये दोनों बातें किसी प्रकार मेल नहीं खातीं। वर्तमान मंत्रि-मंडल को तुरन्त ही हटा देना चाहिये। प्रांत के गवर्नर भी अपने उत्तर दायित्व को पूरा नहीं कर सके, अतः उनको भी छुट्टी देनी चाहिये।'

२३ सितम्बर १९४६ को अखिल भारतीय हिन्दू महासभा की कार्य समिति ने एक प्रस्ताव में कांग्रेस की अन्तःकालीन सरकार को स्मरण दिलाया है कि लाखों हिंदुओं के त्याग और तपस्या से ही कांग्रेस ने अन्तःकालीन सरकार का निर्माण करके स्वतंत्रता की ओर प्रगति की है। अन्तःकालीन सरकार को चाहिये कि वह हिन्दुओं के प्रति अपने कर्तव्य का पालन करे। मुस्लिम लीग हिन्दुओं के दमन के लिये नये उपायों से काम ले रही है क्योंकि कुछ प्रान्तों में सरकारी यन्त्र उसके हाथ में है।'

यह एक आश्चर्य की बात है कि इतना कत्लेआम हो जाने के पश्चात् भी न तो लीगी मन्त्रि-मण्डल को हटाया गया और न मुस्लिम लीग को ग़ैरकानूनी करार दिया गया। कलकत्ता के दंगे पर विभिन्न वक्तव्य उद्धृत करने का उद्देश्य यह है कि प्रतिष्ठित नेताओं की ओर से लीगी मन्त्रि-मण्डल की इतनी तीव्र आलोचना किये जाने के बाद भी लीगी मंत्रि-मण्डल ने

अपनी नीति में कोई परिवर्तन नहीं किया। इसके फलस्वरूप पूर्व बंगाल में आम मुस्लिम जनता ने संगठित रूप में पूर्व निश्चित योजना के अनुसार अल्प-संख्यक हिन्दू जाति पर सशस्त्र आक्रमण किया।

यहाँ यह बात ध्यान रखने योग्य है कि पूर्व बंगाल की बिगड़ी हुई परिस्थिति की ओर हिन्दू नेताओं ने प्रधान-मन्त्री सर सुहरावर्दी का ध्यान पहले ही आकर्षित किया था। ८ सितम्बर १९४६ को श्री निहारेन्दुदत्त मजूमदार ने मि० सुहरावर्दी को खुले पत्र में लिखा था—"पूर्व बंगाल से अल्पसंख्यक हिन्दुओं के ऊपर किये गए शर्मनाक अत्याचारों की रिपोर्टें नित्य-प्रति आ रही हैं। आपको अनुभव करना चाहिये कि समस्त हिन्दू जनता के दिमाग में अरक्षित होने का भाव भर गया है और साथ ही साथ शांतिपूर्वक रहनेवाले मुसलमानों के दिमाग में भी। यह आतंक बंगाल के लिये ठीक नहीं। इस सम्बन्ध में आपकी स्पष्ट नीति घोषित हो जानी चाहिये।" इसी प्रकार अखिल भारतीय हिन्दू महासभा के प्रधान-मंत्री श्री आशुतोष लाहिरी ने भी पूर्व बंगाल की परिस्थिति की ओर जनता तथा लीगी मन्त्रि-मण्डल का ध्यान आकृष्ट किया था, पर मि० सुहरावर्दी के कान पर जूं तक न रेंगी। जब १० अक्टूबर से बड़े पैमाने पर हत्याकांड, अग्निकाण्ड, जबदस्ती धर्म परिवर्तन, स्त्रियों का अपहरण, बलात्कार, जबर्दस्ती विवाह, लूट आदि कार्य शुरू हुए, तो उसके पाँच या छः दिन बाद सारे भारत का ध्यान पूर्व बंगाल की ओर आकर्षित

हुआ। तब तक वहाँ के अभागे असहाय हिन्दुओं की सुध किसी ने भी नहीं ली।

१६ अक्टूबर १६४६ को अमृतबाजार पत्रिका ने लिखा—"बंगाल की समाचार पत्र-सलाहकार समिति ने जो रिपोर्ट प्रकाशित कराई है, उसमें दंगे की अराजकता का वर्णन किया गया है। नोआखाली की घटनाओं से तैमूरलंग और नादिरशाह के मध्यकालीन हत्याकाण्डों और लूटमार का स्मरण हो आता है। निर्दयता और पशुता में उनकी तुलना वर्तमानकाल की भयंकर से भयंकर घटनाओं से भी नहीं की जा सकती। नाजी जर्मनी के यहूदियों पर किये जानेवाले अत्याचार भी उनके सामने फीके हैं। नोआखाली के २०० वर्गमील क्षेत्र पर कई दिनों तक क्रोध से उन्मत्त भीड़ों का राज्य रहा है। उसके बाद ही सरकार और जनता को उसका पता चला। आश्चर्य तो यह है कि जिस प्रान्त में अभी कुछ समय पहले कलकत्ता के कत्लेआम जैसी घटनायें हो चुकी हैं, उसी में यह सब कुछ हो रहा है। यह प्रकट है कि इन सब उत्पातों के लिये पहले तैयारी की गई थी। ऐसा विद्रोह अपने आप नहीं हो सकता। मि० सुहरावर्दी का मंत्रि-मण्डल सरकार के प्रारम्भिक कार्यों को पूरा करने में भी असमर्थ रहा।"

१७ अक्टूबर १६४६ को बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष श्री सुरेन्द्रमोहन घोष ने बताया "नोआखाली और त्रिपुरा में फैली हुई अराजकता के फलस्वरूप १० अक्टूबर से लेकर अब तक अर्थात् १६ अक्टूबर तक ५००० हिन्दू कत्ल कर दिये

गए और लीगियों ने जिन लोगों का जबर्दस्ती धर्म परिवर्तन या विवाह कर दिया है या जिनको वे ले भागे हैं, उनकी संख्या ५० हजार से कम नहीं है।" यह केवल एक सप्ताह का हिसाब है।

१६ अक्टूबर १६४६ को 'स्टेट्समैन' के संवाददाता ने चांदपुर से टेलीफोन पर सूचना दी—पूर्व बंगाल में भीड़ की हिंसात्मक कार्रवाइयों का लगभग ४०० ग्रामों और डेढ़ लाख व्यक्तियों पर प्रभाव पड़ा है। इस गड़बड़ी का मुख्य उद्देश्य जबर्दस्ती धर्म-परिवर्तन तथा स्त्रियों का-विशेषतया लड़कियों का अपहरण है। दङ्गाइयों द्वारा घिरे कई क्षेत्रों का सम्बन्ध सर्वथा विछिन्न होगया है और नदियों का तमाम यातायात भङ्ग होगया है।" कई गाँवों के हिन्दुओं ने जान बचाने के लिये मुसलमान बन जाना स्वीकार किया।

२३ अक्टूबर १६४६ को श्री शरदचन्द्र बोस ने पूर्वी बंगाल में हताहत हुए व्यक्तियों के सम्बन्ध में बंगाल सरकार द्वारा पार्लियामेन्ट को भेजी गई रिपोर्ट का खण्डन करते हुए बताया—"इस रिपोर्ट में स्थिति की गम्भीरता को बहुत कम दिखाने का प्रयत्न किया गया है। नोआखाली जिले के ५०० वर्गमील से अधिक और त्रिपुरा जिले के ४०० वर्गमील क्षेत्र में हत्याकांड, जबर्दस्ती धर्म परिवर्तन, बलात्कार, अपहरण, लूट आदि घटनायें हो रही हैं। १६ और २० अक्टूबर को हवाई दौरे में मैंने १५ से २० तक गांवों को जलते हुए देखा।"

२१ अक्टूबर को यूनाइटेड प्रेस ऑफ इण्डिया के विशेष संवाददाता ने बताया—"नोआखाली और त्रिपुरा के कई शरणार्थियों ने मेरे सामने जो बयान दिये हैं, इनसे यही सिद्ध होता है कि इन तमाम उपद्रवों का प्रधान लक्ष्य यह है कि अल्पसंख्यक हिन्दुओं का धर्म परिवर्तन करके उन्हें बहु-संख्यक मुस्लिम-समाज में मिला लिया जाय। गृहदाह, लूटमार तथा हत्याएं करने का कारण उस योजना को, जिसका प्रधान उद्देश्य जबर्दस्ती धर्म-परिवर्तन है, सहायता पहुँचाना है। स्त्रियों को व्यापक पैमाने पर भगा ले जाना तथा उनके साथ जबर्दस्ती विवाह कर लेने का कारण यही है कि वे फिर अपना धर्म बदल न सकें। यह सारी योजना गुण्डों के सरदारों की बनाई हुई है और इसमें उन्हें आम मुस्लिम जनता का सहयोग प्राप्त है।"

कांग्रेस के अध्यक्ष आचार्य कृपलानी ने उपद्रव-ग्रस्त इलाकों का दौरा करने के बाद नोआखाली और त्रिपुरा जिलों की घटनाओं के बारे में २६ अक्टूबर को कहा है कि चाँदपुर और नोआखाली के भीतरी हिस्से का दौरा करने के बाद मैं नीचे लिखे नतीजे पर पहुंचा हूँ, जो किसी भी निष्पक्ष न्यायालय के सामने स्थानीय गवाही के जरिये सिद्ध किये जा सकते हैं, बशर्ते गवाहों को सुरक्षितता का आश्वासन दे दिया जाय।

(१) नोआखली और त्रिपुरा ज़िले के हिन्दुओं पर आक्रमण की पहले से व्यवस्था और तैयारी की गई थी। यह लीग के

प्रचार का प्रत्यक्ष परिणाम था। स्थानीय प्रमाणों से स्पष्ट होता है कि गाँवों के प्रमुख लीग नेताओं का उसमें हाथ था।

(२) होनेवाली घटनाओं की अधिकारियों को चेतावनी मिल चुकी थी। सम्बन्धित इलाकों के हिन्दुओं ने पहले जबानी और बाद में लिखित चेतावनियाँ दी थीं।

(३) कुछ मुस्लिम कर्मचारियों ने आक्रमण की तैयारियों की ओर से आँखें बन्द रक्खीं। मुसलमान अफसरों को ख्याल था कि यदि हिन्दुओं के खिलाफ कुछ किया गया तो सरकार कोई कार्य-वाही नहीं करेगी।

(४) मुसलमान सैकड़ों की और कुछ स्थानों से हजारों की संख्या में इकट्ठे होते और हिन्दू गाँवों या मिली-जुली आबादी के गाँवों में हिन्दू घरों पर जा धमकते। ये पहले मुस्लिम लीग के दंगों के पीड़ितों के लिये चन्दा माँगते। यह जबर्दस्ती के चन्दे काफी होते और उनकी संख्या कभी-कभी १०,००० रु० या इससे भी अधिक पहुंच जाती। चन्दा वसूल कर लेने के बाद भी हिन्दू सुरक्षित न थे। वही या एक और भीड़ बाद में घटनास्थल पर पहुंचती और मकानों को लूट लेती। लूटे हुए घर ज्यादातर जला दिए जाते। सिर्फ नकद, जेवरों और अन्य कीमती चीजों को ही नहीं लूटा जाता, बल्कि गृहस्थों के काम की हर चीज जसे अनाज, बर्तन, कपड़े वगैरा भी लूटे गये। कई जगह लुटेरे मवे-शियों को खुद ले गये! कभी-कभी घर को लूटने के पहले घर-वालों को इस्लाम कबूल करने को कहा जाता, परन्तु धर्म-परि-

वर्तन पर भी लूट और आग से बचने की गारण्टी न थी।

हमलावर मुस्लिम भीड़ के नारे मुस्लिम लीग के नारे थे, जैसे—'मुस्लिम लीग जिन्दाबाद', 'पाकिस्तान जिन्दाबाद', 'लड़ के लेंगे पाकिस्तान', 'मार के लेंगे पाकिस्तान'।

(५) हिन्दुओं को यह भी कहा गया कि हत्या, लूट और अग्नि-काण्ड जो हो रहा है, वह कलकत्ते के दंगे में मारे गये मुसलमानों का बदला है। जिन्होंने मुकावला किया, वे सब कत्ल कर दिये गए। लोगों को गोली से भी मारा गया, क्योंकि दंगाइयों के पास बन्दूकें थीं। ये बन्दूकें या तो मुस्लिम जमींदारों की थीं या हिन्दुओं से चुराई या छीनी गईं।

एक अधिकारी ने मुझे निश्चित रूप से कहा कि सिर्फ १०० आदमी मारे गये हैं। एक अन्य बड़े अफसर ने कहा है कि मारे गये लोगों की संख्या ५०० के आस-पास है।

मुझे ऐसी घटनाओं के बयान मिले हैं, जिनमें एक परिवार के १० से लगा कर २० तक आदमी मारे गये हैं और कुछ परिवारों के सब पुरुष मारे डाले गये।

(६) लूट, अग्निदाह, हत्या और धर्म-परिवर्तन आदि कार्यों में हिस्सा लेनेवाले पड़ोस के मुस्लिम गाँवों के रहनेवाले हैं। मिली-जुली आबादी के मुसलमानों ने भी इन में हिस्सा लिया। अत्याचार-पीड़ित उनमें से बहुतों को पहचान सकते हैं। उन्होंने नामों की लम्बी सूची दी है। बाहर के तो बहुत थोड़े लोग थे।

(७) लूट, हत्या और अग्नि-काण्ड के बाद भी हिन्दू उस

वक्त तक सुरक्षित न थे, जब तक कि वे इस्लाम कबूल नहीं कर लेते। हिन्दुओं को अपनी रक्षा करने के लिए एक साथ इस्लाम स्वीकार करना पड़ा। धर्म-परिवर्तन की निशानी के तौर पर उन्हें सफेद टोपियाँ दी गईं, जो बस्ती के मुसलमान पहनते हैं। अक्सर ये टोपियाँ नई थीं और उन पर पाकिस्तान का नकशा था और ये शब्द लिखे थे, 'पाकिस्तान जिन्दाबाद' और 'लड़ के लेंगे पाकिस्तान!'

(८) हिन्दुओं को जुम्मा की नमाज में शामिल किया गया और उनसे कलमा और नमाज पढ़ाये गये। औरतों का धर्म-परिवर्तन किया गया, उनकी चूड़ियाँ तोड़ दी गईं और उनके माथे की सिन्दूर मिटा दी गई। धर्म-परिवर्तन की निशानी के तौर पर उन्हें पीर द्वारा पवित्र किये हुए कपड़े को छूने के लिये कहा गया और उन्हें कलमा भी पढ़ना पड़ा।

हिन्दू मकानों में देवताओं की मूर्तियाँ नष्ट कर दी गईं और उपद्रव-ग्रस्त इलाकों के सब हिन्दू-मन्दिर लूट लिए गये।

जबर्दस्ती शादियाँ करवाने की घटनाएँ भी हुई हैं। इस समय ऐसी शादियों की संख्या मालूम कर सकना असम्भव है।

औरतों के भगाये जाने की भी घटनाएँ हुई हैं, किन्तु मैं थोड़े से समय में उनकी निश्चित संख्या ज्ञात न कर सका।

(९) मैं बलात्कार की घटनाओं की जाँच नहीं कर सका, जिसका कारण स्पष्ट है। किन्तु औरतों ने श्रीमती कृपलानी से बुरे बर्ताव की शिकायत की। उनके सुहाग की निशानी चूड़ियाँ

तोड़ डाली गईं और सिन्दूर की बिन्दियाँ मिटा दी गईं। एक जगह आतताइयों ने औरतों को जमीन पर गिरा दिया और अपने पाँवों की एड़ियों से सिन्दूर की बिन्दियों को मिटाया।

(१०) इन इलाकों में हिन्दू चाहे उन्होंने धर्म-परिवर्तन किया हो अथवा नहीं, निरन्तर खतरे में रह रहे हैं।

(११) उपद्रव-ग्रस्त गाँवों के रास्तों पर गश्ती दस्ते कड़ा पहरा देते हैं। कुछ उदाहरणों में नये धर्म-परिवर्तन किये लोगों को गाँवों से बाहर जाने और लौटने के आज्ञापत्र भी दिये गये हैं। मैंने ये आज्ञापत्र देखे हैं।

(१२) उपद्रवों के समय जो उपद्रव-ग्रस्त इलाकों से बाहर थे, अपने गाँवों को नहीं जा पाये हैं। इसलिये उन्हें उन गाँवों के अपने रिश्तेदारों की कोई खबर नहीं है।

(१३) बहुत से परिवारों के मर्द और बच्चे गायब हैं। उनके खोजने के कोई साधन नहीं हैं। देहाती डाकखाने बन्द पड़े हैं।

(१४) दंगों में पुलिस ने कुछ नहीं किया। पुलिस के आदमियों का कहना है कि उन्हें इस बात की हिदायत थी कि आत्म-रक्षा के अवसर के अलावा गोली न चलायें। उनकी आत्म-रक्षा का सवाल कभी पैदा ही नहीं हुआ, क्योंकि उन्होंने दंगा करने-वालों के काम में हस्तक्षेप ही नहीं किया।

मैं कह सकता हूं कि २० तारीख तक अग्नि-काण्ड होते रहे। मैंने चाँदपुर और नोआखली-इलाकों में हवाई जहाज से १६ और २० तारीख को मकानों को जलते देखा। इन अग्नि-काण्डों

को चीफ मिनिस्टर ने भी २० तारीख को देखा, जो चटगाँव से हमारे साथ वायुयान में उड़े थे। जिन इलाकों में मैं गया, वे बर्बाद किये जा रहे थे और मैंने सिर्फ जले हुए घरों और निस्सहाय हिंदू देहातियों को देखा। सब कुछ नष्ट हो जाने के कारण उनको न आश्रय है और न अन्न और न कपड़ा!

मैंने खुद अधिकारियों से सुना कि नोआखाली-इलाकों में २५ अक्टूबर तक सिर्फ ५० गिरफ्तारियाँ की गई हैं।

अभी भी बहुत सी ऐसी हिन्दू बस्तियाँ हैं, जिन पर मुसलमानों का पहरा है। ये लोग वहाँ से बाहर आने के लिये पुलिस या फौज की मदद चाहते हैं।

पूर्वी बंगाल की घटनाओं के पीछे आर्थिक कारण न थे। एक भी धनिक मुसलमान का घर नहीं लूटा गया। मुझे तो यह सब युद्ध साम्प्रदायिक और एकतर्फा प्रतीत होता है।

नोआखाली और त्रिपुरा के शरणार्थियों की संख्या ४०-५० हजार के बीच है। उनकी हालत दयनीय है। अन्न, कपड़े और दवा का अभाव है।

आचार्य कृपलानी के साथ पूर्वी बंगाल के दौरे में यू० पी० असेम्बली के स्पीकर माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन भी गये थे। आपने लिखा है—"कलकत्ते के हत्याकाण्ड के बाद अभी लोगों के आँसू सूखे नहीं थे कि अभागे बंगाल को नोआखाली के नरमेध ने आक्रान्त कर दिया। नोआखाली और उसके आस पास के स्थानों में जो कुछ हुआ है, उसकी तुलना हीनतम नाजियों की

क्रूरताओं के साथ ही हो सकती है। मुझ में न तो इतनी योग्यता है और न शक्ति कि मैं ठीक शब्दों में उस बर्बरता का वर्णन कर सकूं; जिसका प्रदर्शन हत्यारों के झुण्डों ने नोआखाली और कहाँ-कहाँ किया है। फिर भी चूंकि मैं उन लोगों में से हूँ, जिन्होंने गरीबों के घरों की जलती हुई लपेटों को देखा है, इसलिए एक कोशिश करूँगा कि पूर्व बंगाल की घटनाओं का उल्लेख करूँ।

जहाँ गुण्डों के गिरोहों ने लोगों की जान और माल की होली जलाई है, उन स्थानों का पर्यावलोकन करते समय मुझको राष्ट्रपति आचार्य कृपलानी, श्रीमती सुचेता कृपलानी और श्रीयुत शरत बोस के साथ रहने का सौभाग्य प्राप्त था। जब हम हवाई जहाज से कलकत्ता पहुँचे, तो नर-नारियों का समुदाय कुसुम-मालायें लेकर राष्ट्रपति का स्वागत करने के लिए एकत्रित था। पर इस स्वागत की पृष्ठभूमि में करुणा के आँसू थे। लोग जानते थे कि वे राष्ट्रपति का स्वागत उस समय कर रहे हैं, जब वह बंग देश के रोमांचकारी उत्पीड़न का अवलोकन करने के लिये आये हुए हैं।

ज्यों ही राष्ट्रपति कृपलानी शरत बाबू के घर पहुँचे, उनको लोगों ने घेर लिया और भयावह कथानकों को सुनाने का ताँता लग गया। राष्ट्रपति ने सब धैर्य के साथ सुना और कहा—"प्रिय भाइयो, मैं यहाँ आया ही इसलिए हूँ कि सब बातें सुनूं और स्वयं वास्तविकता का निरीक्षण करूँ। आप विश्वास न खोइए और इस समय यथाशक्ति लोगों की मदद कीजिए।"

जब हम दमदम के हवाई अड्डे से गये, तो हमारी मोटरकार

में बंगाल की महिला एम० एल० ए० श्रीमती वीणादास भी थीं, जिन्होंने कई वर्ष हुए गवर्नर पर गोली चलाई थी और जो हाल ही में जेल से छूटी थीं। बातचीत के बीच उन्होंने कहा—"बंगाल समय पर आने के लिये राष्ट्रपति का कृतज्ञ है। नेताओं को चाहिये कि वे बंगाल आयें और हमको यह महसूस न होने दें कि हम इस प्रान्त में बिना माँ-बाप के बच्चे हैं। बङ्गाल अपने नेताओं को पुकार रहा है।"

जब हम कलकत्ता शहर पहुँचे तो हमने उसे सूना-सा पाया। घातक चोटों के घाव अभी वहाँ मौजूद हैं। जब तक कि आवश्यकता से लाचार न हों, लोग अपने घरों से बाहर नहीं निकलते। जब वे सड़कों पर चलते हैं तो ऐसा भान होता है कि मृत्यु कहीं निकट पार्श्व में ही है। कलकत्ता की घटनाओं ने हजारों लोगों की जान तो ली ही, पर इससे भी अधिक उसका हानिकारक परिणाम यह हुआ कि मानव की आत्मा घायल हो गई। कलकत्ते के लोग जीवित हैं, पर उन्हें हमेशा मौत का डर लगा रहता है। वे स्वतन्त्रता से साँस नहीं ले पाते। उनका अमन का भाव बिल्कुल खो गया है। मौत उनको हमेशा अपनी याद दिलाती रहती है।

१६ अक्तूबर को हम हवाई जहाज के अड्डे पर गये और गवर्नर से मिलने के लिए फेनी जाना चाहा, पर हमसे कहा गया कि फेनी में हवाई जहाज के उतरने के स्थल पर पानी भरा हुआ है और कोई वहाँ उतर नहीं सकता। हमने इस पर भी अपनी

किस्मत अजमानी चाही पर हमारे ऐसा करने पर करीब-करीब पाबन्दी जैसी लगा दी गई। अतः हमको कोमिल्ला जाना पड़ा।

हम जब अपने दौरे पर जाने लगे, तो खतरा और इसी तरह की कई बातें हमारे कानों में डाली गईं और घुमा फिराकर ऐसी कोशिश की गई कि राष्ट्रपति अपना इरादा उन स्थानों में जाने का छोड़ दें, जहाँ गड़बड़ हो रही थी। पर इन सबका कुछ असर न हुआ।

अपने हवाई जहाज से हमने देखा कि लाल-लाल लपटें आसमान को उड़ रही हैं, मकान भस्म हो रहे हैं और लोग इधर-उधर भाग रहे हैं। हमको बड़ा खेद हुआ और हमने चाहा कि वहाँ उतरा जाय, जहाँ गांव धुँए से घिरा हुआ था पर यान संचालक ने कहा कि ऐसा करना असम्भव है।

शाम को हम कोमिल्ला पहुँचे। कई लोगों ने हमको घेर लिया और पूछा कि कांग्रेस उनके लिये क्या करने जा रही है? वेदना, असहायता और निराशा की उन मूर्तियों ने चाहा कि उनको किसी तरह का आश्वासन दिया जाय कि उनका कुछ न बिगाड़ा जायेगा। एक व्यक्ति बोला, "हम में से कोई यह नहीं जानता कि कल सुबह सो कर कौन जीवित उठेगा, क्या आप हमको नहीं बचा सकते?"

हम शरणार्थियों के कैम्पों में गये। करीब तीन हजार नर-नारी और बच्चे वहाँ मोजूद थे। कई लोगों से हमने लोमहर्षक वारदातें सुनीं। मुझसे कहा गया कि नोआखाली में एक आदमी

अपनी जान बचाने के लिये पेड़ पर चढ़ गया और जब तक उसमें शक्ति रही, भूखा-प्यासा लटका रहा। आखिर वह थक कर गिर पड़ा। करीब-करीब वह बेहोश होकर पड़ा हुआ था कि उस को गिरता देखकर कुछ हत्यारे वहाँ पहुँचे, ताकि उसको जीवन बचाने के अपराध की सजा दे सकें। उनके हथियारों ने उस व्यक्ति के टुकड़े टुकड़े कर दिये और इस प्रकार बेहोश होने के कारण वह उस पीड़ा से बच गया, जो उसे होश में आने पर उठानी पड़ती।

दूसरी घटना एक गर्भवती स्त्री के बारे में सुनी। उसके बड़े लड़के को बदमाशों ने काट कर टुकड़े टुकड़े कर दिया था और वह उसकी एक बाँह हाथ में लेकर भाग रही थी। कुछ कदम जाने पर अपने मरे हुए लड़के की बांह को अपने हाथ में देख कर उसको ऐसा धक्का लगा कि जमीन पर गिर पड़ी और मर गई।

राष्ट्रपति कृपलानी, उनकी पत्नी और श्रीयुत शरत बोस भागे हुए लोगों के पास गये। इन त्रस्त लोगों के लिए सुचेता देवी एक दयामयी बहन के समान थीं, बंगाल की कन्या होने के कारण उनकी वेदना को समझ सकती थीं और उनको उन्हीं की भाषा में सान्त्वना देती थी। इस महान् परीक्षा के समय लोगों को उन्होंने धैर्य और विश्वास न खोने की राय दी।

सैंकड़ों मनुष्य जंगल में भाग गये थे। एक भागे हुए व्यक्ति ने बताया कि अजीब-अजीब तरह के हथियार लोगों को मारने के लिये काम में लाये गये। उसने कहा, 'अधिकारियों को वक्त पर

मदद के लिये कहा गया था, पर वे आये ही नहीं। हम लोग रक्षा के लिये चिल्लाते थे, पर पुलिस की जगह पर लुटेरों के झुंड आये, जिन्होंने आदमियों का संहार किया, बहिनों के साथ भाइयों के सामने बलात्कार किया, माताओं को लड़कों के सामने नंगा किया और एक दूसरे के मुँह में पेशाब करने के लिये बाध्य किया। उनको जमीन पर चित करके लिटा दिया जाता था और हलाल किया जाता था। फिर हाथों को खून में रंग कर नारियों के मुँह पर पोता जाता था और उसके बाद उनके साथ फिर बलात्कार किया जाता था।

इस हत्याकाण्ड में एक योजना थी। लीग के नाम पर हज़ारों आदमियों की सभा होती थी। भाषणों में अत्याचार की योजना वर्णन की जाती थी और सभा विसर्जन होने पर लोग भेड़ियों की तरह जाकर चारों ओर टूट पड़ते थे।

एक भूतपूर्व एम० एल० ए० गुलाम बाबर निरन्तर लोगों में उत्तेजना फैलाता रहा। अफसरों ने जान बूझ कर भी उसको मुद्दत तक नहीं पकड़ा।

पर इतना सब होने पर भी गवर्नर दार्जिलिंग में चैन से बैठा रहा। उसको अपनी आवाज़ सुनाने के लिये हमें उसकी बड़ी तलाश करनी पड़ी। अफसर लोग हमको ठीक नहीं बताते थे कि गवर्नर से कहाँ मुलाकात होगी। अखिर २० तारीख हम उससे चटगाँव में मिल पाये। हमारी हर बात पर वह "ठीक है," कहता था और उसका उत्तर था—"सब ठीक हो जायेगा।" उसने

और सुहरावर्दी ने परिस्थिति पर काबू पाने के लिये तो कुछ न किया। हाँ, जो कुछ ज्यादतियाँ हुईं, उनको छोटा दिखलाने की कोशिश अवश्य की।

सुहरावर्दी एक पत्थर दिल आदमी है। उसने मुझसे कहा कि केवल सौ आदमी मारे गये। उस समय "आनन्दबाजार पत्रिका" के सम्पादक श्री भट्टाचार्य ने उस से कहा—"क्या आप जानते हैं कि आप किस बारे में बोल रहे हैं?" सुहरावर्दी ने उत्तर दिया—"मेरे मित्र, तुम हर बात को बढ़ा कर कहते हो। मैं तुमसे एकान्त में बात करूँगा।"

सम्पादक जी ने फौरन जवाब दिया—"हजरत मुझसे न चलो। मैं आपको खूब पहचानता हूं।"

सुहरावर्दी से कहा गया कि गुण्डों को पकड़ कर फिर जमानत पर छोड़ दिया गया है। वह बोला—"मुझे अफसाने मत सुनाओ, यह नामुमकिन है।" हमने उससे कहा कि हमें चकमा देने की कोशिश मत कीजिए और इस बात के लिए ललकारा कि वह उसी वक्त कोमिल्ला के मजिस्ट्रेट को फोन करके पूछे कि हम झूठ कह रहे हैं या सच। "ठीक है, ठीक है, मैं इस मामले में जाँच करूँगा"—कह कर बंगाल का प्रधान मन्त्री अपने गले का गजरा सुहलाने लगा जिसे चटगाँव में गवर्नर की बीवी के नाम पर स्थापित अस्पताल में पहनाया गया था। उन की अस्पताल में माला पहिनने और इसी तरह की दूसरी खुराफातों के लिये वक्त था, पर नोआखाली को फौजी मदद पहुँचाने की फुरसत न थी।

नोआखाली में हिन्दुओं को मुसलमान बनाने के बाद टोपी पहिनाई जाती थी, जिनमें पाकिस्तान और लीग का झण्डा होता था। मैंने वह टोपी कोमिल्ला में देखी थी। सुहरावर्दी को मैंने यह किस्सा सुनाया, तो बोला—"अरे यह भी कोई बात है! कहीं टोपी पहिनने से किसी का धर्म बदलता है।" मैंने कहा—"पर इससे लोगों की मन्शा का पता लगता है, आप समझना नहीं चाहते कि इसकी जड़ में क्या है।" पर उस पर इसका कोई असर न हुआ।

मुझे एक मजिस्ट्रेट मिला जो बहुत घबराया हुआ था कि उसकी जान खतरे में है और उसने बताया कि उसकी अपनी रक्षा करने लायक तक पुलिस की संख्या नहीं है और बाकी पुलिस या फौजी मदद सरकार माँगने पर भी नहीं भेजती।

जब हम चटगाँव से वापस आये, तो सुहरावर्दी हमारे हवाई जहाज में था। रामगंज, फरीदपुर, चाँदपुर आदि जगहों में हमने मकान जलते हुये देखे और सुहरावर्दी का ध्यान आकर्षित किया। वह बोला—"हाँ कुछ मकान जल रहे हैं पर वहाँ आदमी नहीं हैं।" अगर आदमी हों भी तो दीखते कैसे?

बंगाल इस समय एक दुर्दशा से गुजर रहा है, पर मुझे अंदेशा है कि सामने एक भयंकर खतरा है जो बंगाल को खून का समुद्र बना दे।

वहाँ के नौजवानों को नोआखाली के हत्याकाण्ड से बड़ा भारी धक्का पहुँचा है। सैकड़ों युवक इस समय नोआखाली

जाने की इजाजत चाहते हैं, ताकि हत्यारों के सामने उदाहरण पेश करें। कांग्रेस उनको शान्ति और अहिंसा के महान अस्त्रों से रोके हुए है। पर मैंने उनके चेहरों पर भयंकर अशान्ति और चिन्ता के चिन्ह देखे हैं। वे राष्ट्रपति के पास सलाह माँगने आये और अपने दबे हुये हृदय के उद्गार को उनके सामने उभाड़ा। राष्ट्रपति ने उनको धीरज रखने और शान्त रहने की राय दी। पर मुझे अन्देशा है कि उनके धैर्य पर बड़ा भारी बोझ पड़ रहा है और वह खातमे के करीब पहुँच गया है। उनकी ससहायता उनको बेचैन कर रही है और वे दुखी हैं। अगर उनको और भड़काया जायेगा, तो वे शायद अहिंसा और शान्ति का पाठ भूल जायँ और उन कसाइयों पर भयंकर धावा बोल दें; जिन्होंने 'वंदेमातरम' के देश को बूचड़खाना बना दिया है। यह खतरे का झण्डा है, यह दीवार पर भयंकर लेख है, यह बड़ी आगाही ! हर तबके के नेता इस आगाही को सुनें और दीवार की लिखावट पढ़ें। अगर वे यह चाहते हैं कि बंगाल रक्त का समुद्र न बने, हर एक को चाहिये कि बंगाल को बचाने के लिये जी तोड़ कोशिश करे। बंगाल बड़े खतरे में है।"

२४ अक्टूबर १९४६ को कांग्रेस-कार्यसमिति ने पूर्व बंगाल की दुर्घटनाओं के सम्बन्ध में एक प्रस्ताव में कहा—"बंगाल में मध्ययुग-जैसे जो अत्याचार हो रहे हैं, उनसे प्रत्येक सभ्य व्यक्ति को लज्जा, घृणा तथा क्रोध उत्पन्न हो जाता है। यह बर्बरता मुस्लिम लीग की घृणा तथा गृहयुद्ध को प्रोत्साहन देनेवाली नीति

का परिणाम है। लीगी मन्त्रि-मण्डल, गवर्नर तथा वायसराय इन दुर्घटनाओं के लिये जिम्मेवार हैं, क्योंकि इन्होंने अपने अधिकारों का शान्ति स्थापित करने के लिये उपयोग नहीं किया।

लीगी मन्त्रि-मण्डल ने वास्तविक घटनाओं को छिपाने के लिये साम्प्रदायिक उपद्रवों के सम्बन्ध में समाचार पत्रों के प्रकाशन पर प्रतिबन्ध लगाया, पर लीगी पत्रों को खुली छूट दे दी कि वे चाहे जो कुछ लिखें। २ नवम्बर १९४६ को बंगाल प्रेस सलाहकार समिति ने यह प्रस्ताव पास किया—"समिति की राय है कि सरकार ने तथाकथित छूट के दुरुपयोग का जो आरोप लगाया है, वह निराधार तथा गुस्ताखी से भरा हुआ है। इसके अतिरिक्त अकाट्य प्रमाणों से यह साबित होता है कि सरकार ने मन्त्रि-मण्डल के पक्षपाती समाचार-पत्रों को यह स्वतन्त्रता दे रखी है कि वे अतिरञ्जित, गलत, पक्षपातपूर्ण तथा आपत्तिजनक विवरण और समाचार प्रकाशित कर अशान्ति तथा अव्यवस्था को बढ़ावें।

समिति की यह राय है कि चूँकि सरकार स्थिति पर नियन्त्रण करने में असफल रही है, अतएव समाचार पत्रों का गला घोंट कर वह अपनी नीति के उन भयंकर परिणामों को जनता से छिपाना चाहती है, जो कि सारे प्रांत में उपद्रवों के रूप में प्रकट हुए हैं।"

लन्दन में गान्धीजी का सत्कार करनेवाली कुमारी म्युरियल लिस्टर ने पूर्व बंगाल का दौरा करने के पश्चात् ७ नवम्बर १९४६

को प्रकाशित अपने वक्तव्य में कहा—"वहाँ हिन्दू स्त्रियों की हालत सब से अधिक खराब है! उन्होंने अपनी आँखों से अपने पतियों की हत्या होती हुई देखी है और फिर धर्म परिवर्तन के बाद हत्यारों में से किसी न किसी से विवाह करने के लिये बाध्य होना पड़ा है। उनकी निराशा ने सर्वथा शून्यता का रूप धारण कर लिया है। उनमें किसी प्रकार की चेतनता या भावना नहीं रह गयी है। उनमें से अनेक घायल हो गयी हैं। उन्होंने अपने कुटुम्बियों के प्राणों की रक्षा के लिये यत्न किया है, परन्तु सब निष्फल!

जिन स्त्रियों को मुस्लिम घरों में पत्नियाँ बना कर रख लिया गया है, उनको बाहर निकालना कार्यकर्ताओं तथा अफसरों के लिये अत्यन्त दुष्कर हो गया है। इन स्त्रियों को धमकी दी गयी है कि यदि उन्होंने अफसरों को यह आश्वासन नहीं दिया कि वे अपने नये घरों को अधिक पसन्द करती हैं, तो उनके तमाम परिवार की हत्या कर दी जायेगी।

हजारों व्यक्तियों को गो-मांस खिला कर तथा इस्लाम कबूल करने की कसम लेकर प्राणदान दिया गया। इस हिंसा तथा अग्निकांड के सम्बन्ध में केवल यही कहा जा सकता है कि यह केवल ग्रामीणों की करतूत नहीं थी। बंगाल में चाहे अनेक गुण्डे हों, परन्तु वे स्वयं इस प्रकार का आन्दोलन प्रारम्भ नहीं कर सकते। घरों को पेट्रोल छिड़क कर जला दिया गया। यह राशन में आई हुई वस्तु उनको कहाँ से मिली? देहाती क्षेत्र में पम्प

कहाँ से आये ? शस्त्र देने की व्यवस्था किसने की ?"

डॉक्टर श्यामाप्रसाद मुकर्जी ने १४ नवम्बर को देहली में भाषण करते हुए कहा—'आज कल समस्त देश में जो उपद्रव मचा हुआ है, वह कोई भारतीय राजनीति की क्षणिक लहर नहीं है, प्रत्युत इस देश में हिन्दुओं की स्थिति के मूल पर ही आक्रमण है। आज की समस्या केवल बंगाल के हिन्दुओं को बचाना ही नहीं है, किन्तु भारत के समस्त हिन्दुओं की रक्षा करना है। मुस्लिम लीग ने यह योजना बना ली है कि जहाँ तक हो सके अधिक से अधिक हिंदुओं को मुसलमान बनाया जाय और जो इसके लिये राजी न हों, उनकी हत्या कर डाली जाय। नोआखाली में भी इनकी योजना वहाँ के हिंदुओं को मुसलमान बनाने की थी, किन्तु जब हिंदुओं ने इसका विरोध किया, तब उनकी हत्या कर डाली गई। आज बिहार-सरकार जितनी सहायता मुसलमानों की कर रही है, बंगाल-सरकार उसका एक अंश भी हिंदुओं के लिये नहीं कर रही है। हिंदू-मुस्लिम समस्या तभी हल हो सकती है, जब समस्त हिंदू अपना दृढ़ संगठन करेंगे।'

लगभग तीन सप्ताह तक नोआखाली में हिन्दू-मुसलमान-एकता का साहस पूर्ण कार्य करने के बाद भी गाँधी जी ने २६-नवंबर १६४६ को एक पत्र में लिखा—'बंगाल की स्थिति घोर अन्धकारमय है। मैं नहीं समझता, मुझे क्या करना चाहिये।'

श्रीमती सुचेता कृपलानी १ दिसम्बर १६४६ को प्रकाशित अपने वक्तव्य में लिखती हैं—

"मैंने अनिच्छा से नोआखाली छोड़ा था। यद्यपि मैं इन दिनों बंगाल से दूर रही हूं तथापि मैं पूर्वी बंगाल के स्त्री-पुरुषों के सम्बन्ध में ही सोचती रही हूं। उन्हें निर्दयतापूर्ण दमन का सामना करना पड़ा है और अब भी उन्हें कठिनाइयों तथा कष्टों को बर्दाश्त करना पड़ रहा है। मैं गांधी जी के निर्देश से २ दिसंबर को नोआखाली के लिये फिर रवाना हो रही हूं और जब तक नोआखाली और उसके पड़ोस के स्थानों की परिस्थिति सुधर नहीं जायेगी, तब तक मैं वहाँ रहूंगी।

मैंने बंगाल के अपने प्रवासकाल में एक महीने तक नोआखाली तथा टिपेरा के उपद्रव पीड़ित क्षेत्रों का दौरा किया था। जब तक मैं वहाँ रही, तब तक वहाँ की स्थिति में सुधार नहीं हुआ था।

लगभग ४०० ग्रामों में उपद्रव हुए हैं। यद्यपि बड़े पैमाने पर लूटने, हत्या करने तथा आग लगाने की हरकतें अब बन्द हो गयी हैं, फिर भी हिंदू अभी अपने को सुरक्षित नहीं समझ रहे हैं। अनेक ग्रामों के समस्त हिंदू जबरन मुसलमान बना दिये गये हैं। कुछ हिंदुओं को अपनी लड़कियों का विवाह मुसलमों के साथ करने को बाध्य किया गया है। वे ग्रामों में मुसलमान बन कर ही रह सकते हैं। उन्हें प्रति शुक्रवार को मसजिदों में जाकर नमाज पढ़ने को बाध्य किया जाता है। गायों का वध करने एवं हिंदुओं को गोमांस खिलाने की भी घटनाएँ हुई हैं। हिन्दुओं को बन्दियों के रूप में जीवन व्यतीत करने को बाध्य होना पड़ा है। वे स्वतन्त्रता-पूर्वक इधर-उधर घूम नहीं सकते। पढ़े लिखे और

अच्छी स्थिति वाले हिन्दुओं के ही साथ ऐसा व्यवहार किया जाता है। गुण्डों को विश्वास है कि ये बाहर जाकर उनकी हरकतों की सूचना अन्य लोगों को दे देंगे।

अवसर पाकर अभी गुण्डे हत्याएँ करते हैं तथा स्त्रियों का सतीत्व लूटते हैं। सैनिकों तथा पुलिस के उपस्थित रहने के बावजूद भी हिन्दुओं को पर्याप्त संरक्षण नहीं प्राप्त हुआ है। गुण्डे अभी हिन्दुओं को परेशान कर रहे हैं। कभी-कभी पुलिस से शिकायत करनेवाले हिन्दुओं से गुण्डे भीषण बदला लेते हैं। पुलिस गिरफ्तारियाँ करने में बहुत शिथिलता से काम लेती है। इसलिए प्रमुख गुण्डे निर्भय हो कर घूमते हैं। इससे हिन्दू अपने स्थानों को छोड़ कर भाग रहे हैं। सहायता-कार्य करनेवालों का कहना है कि जब तक हिन्दू स्वयंसेवक हिन्दुओं के साथ जाकर कुछ समय तक ग्रामों में नहीं रहेंगे, तब तक आतंक दूर नहीं होगा। किन्तु यह सम्भव नहीं है। मुसलमान तथा अधिकारी उपद्रव-पीड़ित क्षेत्र में हिन्दू स्वयंसेवकों को नहीं देखना चाहते हैं। स्वयंसेवकों को किसी न किसी बहाने ग्रामों से भगा दिया जाता है। कुछ स्वयंसेवकों की हत्याएँ भी की गई हैं। लाशें मिलने पर जाँच नहीं की गई।

बेइज्जत की गई या अपहृत की गई स्त्रियों की संख्या ठीक-ठीक बताना कठिन है। किन्तु जाँच करने से मुझे पता चला है कि ऐसी स्त्रियों की संख्या अधिक है। दूरवर्ती ग्रामों में अभी ऐसी घटनाएँ हो रही हैं। कुछ पत्रों ने प्रकाशित किया है कि

मैंने अपहृत की गई अनेक लड़कियों का उद्धार किया है। किन्तु इस प्रकार की केवल एक लड़की का उद्धार किया जा सका है। विश्वास किया जाता है कि अनेक अपहृत लड़कियाँ दूरवर्ती स्थानों को भेज दी गई हैं।

जब तक अधिकारियों का पूर्ण सहयोग नहीं प्राप्त होगा, तब तक अधिकांश: अपहृत लड़कियों का उद्धार नहीं किया जा सकेगा। अभी तक ऐसा सहयोग नहीं प्राप्त हुआ है।

छुरे भोंकने, हत्यायें करने, लूट एवं आग लगाने की हरकतों के अतिरिक्त अनेक स्थानों पर हिन्दुओं का आर्थिक बहिष्कार भी किया जा रहा है। हिन्दू किसान अपने खेतों की उपज को नहीं बेच सकते। उनका अनाज कोई नहीं खरीदता। हिन्दुओं की अधिकांश दूकानें नष्ट कर दी गई हैं तथा जो बाकी बची हैं, उनसे कोई सामान नहीं खरीदता। हिन्दुओं को बाध्य होकर मुसलमानों की दूकानों से सामान खरीदना पड़ता है, या तो उन्हें सामान देने से इन्कार कर दिया जाता है या चोर बाजार का मूल्य लिया जाता है। उन्हें माचिस की डब्बी ६ आने में खरीदनी पड़ती है।

यदि पूर्वी बंगाल की परिस्थिति में सुधार करना है तो अधिकारियों को अपने रुख को बदलना होगा। तीन सप्ताह के प्रवास के बाद गाँधीजी को भी परिस्थिति में सुधार होने का कोई लक्षण नहीं दिखाई देता। जब तक अधिकारियों का सहयोग नहीं प्राप्त होगा, पूर्वी बंगाल की हालत घाव के समान बनी रहेगी।

पूर्वी बंगाल में १० अक्टूबर से बड़े पैमाने पर हत्याओं तथा धर्म-परिवर्तन का सिलसिला प्रारम्भ हुआ, परन्तु १ दिसम्बर तक भी, जैसा कि गाँधीजी और श्रीमती सुचेता कृपलानी के वक्तव्यों से मालूम होता है, वहाँ पूर्णतया शान्ति स्थापित नहीं हो पाई है। बिहार के काँग्रेसी मन्त्रि-मण्डल ने वहाँ के हत्याकाण्ड को एक सप्ताह में ही बन्द कर दिया और परिस्थिति को सम्भाल लिया। क्या बात है कि पूर्वी बंगाल में १ दिसम्बर तक भी छोटी-बड़ी दुर्घटनायें हो रही हैं? कारण स्पष्ट है। बंगाल के लीगी मन्त्रि-मण्डल ने बिहार के सोलह हज़ार बिहारी मुसलमानों को पश्चिमी बंगाल में बसाया है और बसाने का काम जारी है। मि० जिन्ना के आबादी परिवर्तन की योजना को सिंध और बंगाल के लीगी मन्त्रि-मण्डल कार्य-रूप में परिणत कर रहे हैं। इसका स्पष्ट मतलब यह है कि ये मंत्रि-मण्डल चाहते हैं कि उनके प्रान्तों में हिन्दू न रहें और यदि रहना चाहते हैं, तो मुसलमान बन कर रहें। बंगाल के लीगी मंत्रि-मण्डल में यह ताक़त नहीं है कि वह हिन्दुओं को निकल जाने का आदेश दे, परन्तु वह पूर्व बंगाल में इस नीति से काम ले रहा है कि हिन्दू वहाँ अपने को अरक्षित समझ कर किसी हिन्दू बहुमत प्रांत में चले जायें। और इधर वह पश्चिम-बंगाल में बिहारी तथा अन्य हिन्दू बहुसंख्यक प्रान्तों के मुसलमानों को बसा कर पूर्व बंगाल जैसी ही मुसलमानों की स्थिति को सुदृढ़ बनाना चाहता है। यदि लीग की पाकिस्तान की माँग को हिन्दुओं ने स्वीकार न किया,

तो सिंध और बंगाल के लीगी मन्त्रि-मण्डल इसी नीति से पाकिस्तान की स्थापना करना चाहते हैं। यही कारण है कि हिन्दू-मुस्लिम एकता के नाम पर पूर्व-बंगाल में अपने जीवन की बाजी लगानेवाले गाँधीजी को नवम्बर महीने के अन्त में भी वहाँ परिस्थिति अन्धकारमय नजर आ रही है। हमने पूर्व-बंगाल के सम्बन्ध में जो अनुमान लगाया है, वह राजनीतिक तथ्यों के आधार पर है, काल्पनिक नहीं। पहले भी पूर्व-बंगाल में हिंदुओं का जीवन सुरक्षित न था। हिन्दू स्त्रियों के अपहरण की घटनाएँ तो वहाँ नित्य प्रति होती रहती थीं। चार साल पहले नारायण-गंज परगना में मुसलमानों ने हिंदुओं पर अमानुषिक अत्याचार किये थे। ८० गाँवों को जला कर खाक कर दिया गया था। तीस हज़ार हिंदुओं को अपनी जान बचाने के लिये गाँव-घर छोड़ कर भाग जाना पड़ा था। हिंदुओं को इस्लाम कबूल करने के लिये प्रेरित किया गया था। बात केवल यह है कि हम हिंदुओं का यह स्वभाव-सा हो गया है कि जब तक कोई हमारे मर्म-स्थान पर बुरी तरह चोट नहीं पहुंचाता, तब तक हम ऐसी बातों पर दूरदर्शिता से विचार ही नहीं करते। कांग्रेस की तथाकथित राष्ट्रीयता के वातावरण में हिन्दू-दृष्टिकोण से किसी बात पर विचार करना भी हम भूल गये। हम अपनी ग़लतियों का परिणाम भुगत रहे हैं। अस्तु,

अखिल भारतीय हिन्दू महासभा के प्रधान मंत्री श्रीयुत् आशुतोष लाहिरी के एक वक्तव्य से मालूम होता है कि अब

और वस्त्र के अभाव से शरणार्थियों की अवस्था बहुत ही दयनीय है। लीगी सरकार ने परिस्थिति में समुचित सुधार किये बिना ही शरणार्थियों को कह दिया कि वे अपने घरों को वापिस लौट जायें, सरकार अब सहायता नहीं देगी। कई क्षेत्रों में अकाल की भी आशंका प्रकट की जा रही है।

यह लिखने की कोई आवश्यकता नहीं है कि बंगाल के लीगी मन्त्रि-मण्डल को जनता की सुख-सुविधाओं का कोई खयाल हो ही नहीं सकता, क्योंकि उसके सामने केवल लीग को मजबूत बनाने का कार्य है, जनता की भलाई का नहीं। बंगाल प्रान्तीय असेम्बली के कांग्रेस दल ने प्रान्त की खाद्य-स्थिति की जाँच के लिये जो उपसमिति बनाई थी, उसने १७ जुलाई १९४६ को प्रकाशित रिपोर्ट में लिखा है—"यदि तुरन्त कार्रवाई न की गई, तो स्थिति बेकाबू हो जायेगी। हमारे पास इस बात के प्रमाण हैं कि सरकार प्रान्त में फैली हुई रिश्वतखोरी और बुराइयों को नष्ट करना नहीं चाहती और न लोगों को ही उसमें विश्वास है। प्राप्त खबरों के आधार पर यह कहने में हमें कोई संकोच नहीं है कि अकाल के निवारण के लिये खड़ी की गई मशीनरी अकाल-निवारण के लिये नहीं, प्रत्युत बंगाल में मुस्लिम लीग की स्थिति मजबूत करने के लिये खड़ी की गई है। सरकारी मशीनरी का उपयोग सब धर्मों के लोगों के प्राणों की उपेक्षा करके बंगाल में लीग की स्थिति मजबूत करने के लिये किया जा रहा है। यदि यह स्थिति जारी रही, तो संकट अवश्य उपस्थित होगा। प्रान्तों में अन्न की कमी

सरकारी अनुमान से भी अधिक है।" यह रिपोर्ट प्रान्त के कांग्रेसी सदस्यों द्वारा अपने निर्वाचन क्षेत्र से लाई गई रिपोर्टों के आधार पर तैयार की गई है। लीग की स्थिति मजबूत करने में ही लीगी मन्त्रि-मण्डल की हिन्दू विरोधी नीति प्रच्छन्नरूप से विद्यमान है। पिछले लीगी मन्त्रि-मण्डल के शासनकाल में अकाल से पैंतीस लाख मनुष्य काल के गाल में समा गये। यह लीगी मन्त्रि-मण्डल की लापरवाही का ही परिणाम था। वर्तमान लीगी मन्त्रि-मण्डल को कम से कम इस प्रश्न पर तो सतर्क और सचेत रहना चाहिये था। पर लीगी मन्त्रि-मण्डल को तो पहले लीग की स्थिति मजबूत करनी है। उसके लिये यही कार्य सर्वोपरि है। ध्यान रहे, परिस्थिति ऐसी है कि लीग की स्थिति मजबूत करने का अर्थ ही प्रकारांतर से हिन्दुओं के साथ अन्याय तथा अत्याचार का व्यवहार करना हो गया है। साम्प्रदायिक द्वेष से प्रेरित होकर सिन्ध का लीगी मन्त्रि-मण्डल जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में और प्रत्येक सरकारी विभाग में हिन्दुओं के साथ जो अन्याय कर रहा है, वही बंगाल का मन्त्रि-मण्डल भी कर रहा है।

★

बिहार हत्याकाण्ड का कारण

"बिहार का हत्याकाण्ड बंगाल के मुस्लिम लीगी मन्त्रिमण्डल की अदूरदर्शिता का परिणाम है।" —मौलाना महंमद अकरमखाँ
भूतपूर्व अध्यक्ष बंगाल प्रांतीय मुस्लिम लीग

मि० जिन्ना और लीग के अन्य नेताओं ने पूर्व बंगाल की दुर्घटनाओं के सम्बन्ध में चुप्पी साध रखी थी, परन्तु जब पूर्व बंगाल की प्रतिक्रिया बिहार में प्रारम्भ हुई, तो मि० जिन्ना और लीग के अन्य नेताओं ने अपना मौन भंग किया। मि० जिन्ना ने कहा—"हिन्दू बहुसंख्यक प्रान्तों में अल्प-संख्यक मुसलमानों पर घोर अत्याचार हो रहे हैं, परन्तु बिहार में जो कत्लेआम हुआ, उसकी कोई मिसाल नहीं मिलती। मुझे विश्वस्त समाचारों से मालूम हुआ कि बिहार में ३०,००० मुसलमान मारे गये और डेढ़ लाख गृह-हीन हो गये हैं। देश के राजनीतिज्ञों को और केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकारों को आबादी के परिवर्तन के विषय पर गम्भीरतापूर्वक विचार करना चाहिये, क्योंकि अल्प-संख्यकों की सुरक्षा का यही सही मार्ग है।"

हम पिछले प्रकरण में लिख चुके हैं कि मि० जिन्ना ने १७ नवम्बर १९४६ को एक पत्र में वायसराय का ध्यान बिहार के हत्याकाण्ड की ओर आकर्षित किया था और सलाह दी थी कि विधान परिषद् को स्थगित कर दिया जाय। मि० जिन्ना के कथन पर

सोलह आना विश्वास करके उनके दोस्त मि० चर्चिल ने १२ दिसम्बर १९४६ को ब्रिटिश लोक सभा में बिहार के हिन्दू कांग्रेसी मन्त्रि-मण्डल पर यह आक्षेप किया कि उस ने अल्प-संख्यक मुसलमानों का खात्मा करनेवाली हिन्दुओं की भीड़ों पर गोली चलाने की इजाजत नहीं दी। मि० जिन्ना अब यह प्रचार कर रहे हैं—"बिहार के हत्याकाण्ड से प्रमाणित हो गया है कि दोनों जातियाँ एक साथ मिल कर नहीं रह सकतीं। पाकिस्तान और आबादी के परिवर्तन से ही दोनों जातियों की जीवन-रक्षा हो सकेगी।"

मि० जिन्ना बिहार के हत्याकाण्ड के कारण को भली भांति जानते हैं, पर उनको यह विश्वास है कि सही विचार प्रकट करने से पाकिस्तान नहीं मिल सकता। इसलिये सब कुछ जानते हुए भी वे सत्य को स्वीकार नहीं करते। मि० जिन्ना भले ही सत्य को स्वीकार न करें, पर कुछ मुस्लिम भाइयों ने सत्य को स्वीकार किया है।

नोआखाली की लोमहर्षक घटनाओं की आलोचना करते हुए बम्बई प्रान्तीय मुस्लिम मजलिस के जनरल सेक्रेटरी मि० आदम आदिल ने २२ अक्टूबर १९४६ को प्रकाशित अपने वक्तव्य में कहा था—"एक मुसलमान के रूप में मैं नोआखाली में मुसलानों द्वारा किये गये कारनामों के लिये बड़ा लज्जित हूं; क्योंकि समाचारों से अब यह निस्सन्देह साबित हो गया है कि मुसलमान ही वहाँ हिसापूर्ण कार्यों के लिये जिम्मेवार हैं।"

नोआखाली की घटनाओं के प्रति मि० जिन्ना तथा अन्य मुस्लिम नेताओं की चुप्पी की आलोचना करते हुए मि० आदम आदिल ने कहा था—"इस चुप्पी से लोगों में यह सन्देह पैदा हो गया है कि क्या वे इन घटनाओं को पाकिस्तान की स्थापना के लिये उठाया गया कदम समझते हैं ? यदि यही बात है, तो क्या वे यह जानते हैं कि हिन्दू बहुसंख्यक प्रान्तों में अल्प-संख्यक मुसलमानों का क्या भाग्य होगा ? इसलिये नोआखाली में जो कुछ हो रहा है, वह पाकिस्तान के दृष्टिकोण से भी अत्यन्त अविवेकपूर्ण है। सामाजिक, राजनीतिक तथा धार्मिक दृष्टिकोण से इसकी तीव्र निन्दा होनी चाहिये।"

यदि मुस्लिम बहु-संख्यक प्रांतों के मुसलमान संगठित होकर अल्प-संख्यक हिंदू जाति पर लोमहर्षक अत्याचार, जैसे कि नोआखाली में किये गये हैं, करते हैं, तो उसकी भीषण प्रतिक्रिया हिन्दू बहुसंख्यक प्रांतों में हो सकती है—इस बात को समझने के लिए मनोविज्ञान का पण्डित होने की आवश्यकता नहीं है। साधारण मनुष्य भी इस बात को सोच सकता है। परन्तु बंगाल के लीगी मंत्रि-मण्डल ने और पूर्व बंगाल के बहु-संख्यक मुस्लिम जनता ने इस बात को बिल्कुल भुला दिया कि हम जो कुछ कर रहे हैं, उसकी प्रतिक्रिया हिंदू बहु-संख्यक प्रांतों में हो सकती है और हमारे मुस्लिम भाइयों का जीवन खतरे में पड़ सकता है।

बंगाल प्रांतीय मुस्लिम लीग के भूतपूर्व अध्यक्ष मौलाना-

अकरम खां ने, जिन्होंने शायद कलकत्ता के कत्लेआम के बाद ही अध्यक्षता से त्याग पत्र दे दिया है, अपने एक वक्तव्य में कहा है—'बिहार के हत्याकांड के लिये बंगाल का लीगी मन्त्रि-मण्डल, जो मि० सुहरावर्दी का निजी तमाशा है, जिम्मेवार है। जब नोआखाली में दुर्घटनायें हुईं, तो मि० सुहरावर्दी और उन की सरकार ने कुछ वक्तव्य दिये, जिन से प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में उन पार्टियों को प्रोत्साहन मिला, जो मुसीबत पैदा करने पर तुली थीं। इतना ही नहीं, बंगाल के प्रधान मंत्री का एक चमत्कार यह भी था कि उन्होंने समाचार पत्रों के एक दल पर तो रोक लगा दी और दूसरी ओर दूसरे दल को स्वतंत्रता दे दी कि वे चाहे जो कुछ लिखें। सरकार की मंजूरी से लीगी पत्र बहुत उत्तेजनात्मक वक्तव्य प्रकाशित करते रहे और यह एक महीने तक होता रहा। बिहार का हत्याकांड उस गलत प्रचार का परिणाम है, जो मि० सुहरावर्दी की नाक के नीचे हो रहा है। बिहार का संकट बंगाल के लीगी मंत्रि-मण्डल की अदूर-दर्शिता का परिणाम है।'

१४ नबम्बर १९४६ को केन्द्रीय असेम्ब्ली में एक प्रश्न के उत्तर में पंडित जवाहरलाल नेहरू ने कहा—'आप लोगों को स्मरण होगा कि अन्तःकालीन सरकार ने कलकत्ता हत्याकांड के बाद कार्यभार संभाला था। यह हत्याकांड १६ अगस्त को प्रारंभ हुआ। हमारे समस्त कार्यों पर इन दुर्घटनाओं की छाप रहती है। वर्तमान विधान के अनुसार प्रांतीय शासन में केन्द्रीय सरकार हस्त-

क्षेप नहीं कर सकती, परन्तु वायसराय महोदय कर सकते हैं। कलकत्ते की दुर्घटना के बाद नोआखाली पूर्व बंगाल और फिर बिहार में दुर्घटनाएँ घटीं। अब और जगह यह हत्याकाण्डों की प्रतियोगिता फैल रही है। यह क्रम न रोका गया, तो देश का भविष्य अन्धकारपूर्ण है। यह निश्चित है कि घृणा और हिंसा के बल पर समस्याएँ नही सुलझाई जा सकतीं।

मैंने बिहार में देखा कि किस प्रकार एक साधारण ग्रामीण जोश में भयंकर हो जाता है। कलकत्ते में अनेक बिहारी थे। कई मारे गये और कुछ बिहार लौट आये। नोआखाली और पूर्व-बंगाल की घटनाओं ने उन्हें और हिला दिया। कुछ दिन तक वे केन्द्रीय सरकार की ओर देखते रहे, परन्तु जब कुछ होते न देखा, तो उन्होंने केन्द्रीय सरकार की आलोचना की। फिर उसके बाद छपरा भागलपुर, पटना, मुंगेर और गया जिलों में हत्या तथा अग्निकांड की दुर्घटनायें हुईं।"

२६ नवम्बर १९४६ को डा० डॉक्टर राजेन्द्रप्रसाद ने एक पत्र-प्रतिनिधि से कहा—"आजकल जो साम्प्रदायिक दंगे हो रहे हैं, उनका मुख्य कारण विगत कई सालों से मुस्लिम लीग द्वारा काँग्रेस व हिन्दुओं के खिलाफ किया जा रहा प्रचार है। इस प्रचार का कारण यह है कि कांग्रेस व हिन्दू सिक्खों, भारतीय ईसाइयों और राष्ट्रवादी मुसलमानों के साथ लीग की पाकिस्तान योजना का विरोध करते रहे हैं। इस प्रचार के फलस्वरूप दोनों जातियों में कटुता बढ़ गई। जब कांग्रेस ने अन्य प्रतिनिधियों के

साथ केन्द्र में अन्तःकालीन सरकार स्थापित की, तो मुस्लिम लीग ने उसका बहिष्कार किया। १६ अगस्त को 'सीधी कार्यवाही' दिवस मनाया गया। फलस्वरूप कलकत्ता में भीषण क़त्लेआम हुआ। कलकत्ता के उपद्रवों में बिहारियों को अत्यधिक नुकसान उठाना पड़ा। कुछ पीड़ित जान बचा कर बिहार वापिस आये और उन्होंने गाँवों में अपने रिश्तेदारों को कलकत्ता की करुण कहानियाँ सुनाईं। बिहार में बसे हुए कुछ बंगाली भी कलकत्ता व पूर्वी बंगाल की घटनाओं से दुःखी और क्रुद्ध थे। नोआखाली की घटनाओं ने कटुता और बढ़ा दी। फल यह हुआ कि बंगाल से लगे हुए बिहार के प्रदेशों में दंगे शुरू हो गये। प्रांत के १६ जिलों में से ५ में निःसन्देह बड़ी मार-काट हुई। शेष जिलों में शान्ति रही, मगर कुछ में तनातनी अवश्य थी।

बिहार के दंगों में कितने आदमी मारे गये और कितने गाँव दंगों से पीड़ित हुए, इस सम्बन्ध में मैं कुछ नहीं बता सकता। लेकिन इतना जरूर कह सकता हूं कि यह संख्या १० हजार या उससे अधिक होगी, यह कहना बेहूदा है।"

१३ नवम्बर को बेगूसराय सब-डिवीजन मुस्लिम लीग के मन्त्री डॉक्टर सैयद मसूद अहमद का मि० जिन्ना को लिखा हुआ एक पत्र प्रकाशित हुआ था। पत्र में डाक्टर साहिब ने मि० जिन्ना से अनुरोध किया है कि—"यदि आपको बिहार प्रांत के मुसलमानों की हिफाजत का तनिक भी ख्याल हो, तो आपको पूर्वी बंगाल की अराजकता को बन्द करने की भरसक कोशिश

करनी चाहिए। पूर्वी बंगाल की घटनाओं के फलस्वरूप ही बिहार में प्रतिशोध की भावना फैली है। यद्यपि कांग्रेस जन बिहार के मुसलमानों की हर तरह की हिफाजत करने की कोशिश कर रहे हैं; किन्तु उन की आवाज का असर जनता पर कम होता है। यदि मुस्लिम जनता को पूर्ण बर्बादी से बचाना है, तो पूर्वी बंगाल की घटनाओं की रोक-थाम की जानी चाहिए।

मि० गजनफरअली खाँ द्वारा अभी हाल में दिये गये वक्तव्य ने आग में घी का काम किया है और वह शान्ति के मार्ग में रुकावट है, क्योंकि इस वक्तव्य के बाद हिन्दू कह रहे हैं कि पूर्वी बंगाल में बलात् धर्म-परिवर्तन मुस्लिम लीग की अधिकृत नीति का अंग था।"

गाँधीजी ने बिहार हत्याकाण्ड की खबर सुनते ही अपने आहार को अल्प कर दिया और यह घोषणा कर दी कि यदि गलत रास्ते पर चलनेवाले बिहारियों ने अपना रास्ता नहीं बदला, तो यह अल्पाहार ही मरणान्त अनशन बन जायगा।

पण्डित जवाहरलाल नेहरू हालत को काबू में करने के लिये उपद्रव-ग्रस्त क्षेत्रों का दौरा करते रहे। आपने चेतावनी दी कि यदि हालत में सुधार नहीं हुआ, तो बम गिराये जायेंगे।

डॉक्टर राजेन्द्रप्रसाद और कांग्रेसी मन्त्रि-मण्डल ने परिस्थिति को शान्त करने में कोई कसर उठा नहीं रक्खी। इसके परिणाम स्वरूप बिहार का उपद्रव एक सप्ताह में ही बन्द हुआ।

बिहार के प्रधान मन्त्री बाबू श्रीकृष्णसिंह ने विधान परिषद्

में अपने भाषण में कहा था—"यदि गाँधीजी मरणान्त अनशन की धमकी न देते और घटना-स्थल पर पंडित जवाहरलाल नेहरू और डॉक्टर राजेन्द्रप्रसाद उपस्थित न होते, तो मैं बिहार में मुसलमानों की रक्षा करने में समर्थ नहीं हो पाता।"

ब्रिटिश शासन-काल में हिन्दुओं ने कभी बिहार-जैसा कत्ले-आम नहीं किया। कांग्रेस के नेताओं को महान् आश्चर्य हुआ कि बिहार के हिन्दू एकदम जोश में इतने पागल कैसे हो गये। परन्तु इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है। बिहार के हिन्दू न तो गाँधी जी के अहिंसावाद को हृदय से स्वीकार करनेवाले योगी पुरुष थे और वे इतने नपुंसक भी नहीं थे कि कलकत्ता और नोआखाली की घटनायें सुनकर भी जोश में न आ जायें। यह स्पष्ट है कि पूर्वी-बंगाल की घटनाओं ने हिन्दू समाज की मनोवृत्ति में कुछ परिवर्तन कर दिया है।

बिहार के उपद्रव-ग्रस्त इलाकों का दौरा करने के बाद श्री जयप्रकाश नारायण ने १६ नवम्बर १६४६ को प्रकाशित अपने वक्तव्य में कहा—"मैंने विनाश और विध्वंस के दृश्य देखे, पर मुझे यह देखकर प्रसन्नता हुई कि हर जगह शान्ति है। हम लोगों को यह देख कर हर्ष होना चाहिए कि हिन्दू जनता में विवेक बुद्धि पुनः जागृत हो रही है।

"परन्तु पुनर्निर्माण के कार्य में कुछ लोग रोड़े अटका रहे हैं। इन लोगों का एकमात्र उद्देश्य अपने राजनीतिक लक्ष्य की सिद्धि है, इसीलिये ये लोग इस प्रकार बाधाएँ उपस्थित करते हैं।

"यह बात तो सभी लोग मानते हैं कि इस समय सब से ज्यादा जरूरी काम यह है कि मुसलमान आश्रित अपने अपने घर वापस जायें और स्वाभाविक दैनिक जीवन व्यतीत करना पुनः आरम्भ करें।

"इस दिशा में सारी चेष्टाएँ की जा रही हैं, और हिन्दू गाँववाले अपने सहग्रामीण मुसलमानों की वापसी का आतुरता-पूर्वक स्वगत करने को और उनके जीवन-यापन के सभी सम्भव साधन जुटाने को तैयार हैं।

"परन्तु लीगी कार्यकर्ता इन चेष्टाओं को निकम्मा कर रहे हैं। ऐसे उदाहरण मौजूद हैं कि जो आश्रित लोग अपने अपने गाँवों को वापस चल पड़े थे, उन्हें ये कार्यकर्ता आश्रय कैम्पों में पुनः लौटा लाये।

"वास्तव में मुस्लिम लीग संसार को दिखाना चाहती है कि हिन्दू-मुसलमान एक साथ नहीं रह सकते, इसलिये पाकिस्तान की स्थापना आवश्यक है। इस पाकिस्तान में, जो बंगाल में होगा, बिहार के शरणार्थी चले जायेंगे। इसीलिये लीगी कार्यकर्ता अपने विषैले प्रचार द्वारा मुसलमानों के पुनर्निर्माण का कार्य पूरा नहीं होने देते हैं।

"लीग को इन सीधे-सादे मुसलमानों के कष्टों की पूरी जान-कारी है, परन्तु फिर भी वह ऐसे काम में लगी हुई है, जिसके द्वारा उसके प्रचार के शिकारों को और भी अधिक मुसीबतें झेलनी पड़ेंगी।

"हमें यह कदापि न भूलना चाहिये कि लीग की इस कुटिल राजनीति का उद्गम स्थान भारत और ब्रिटेन के ब्रिटिश साम्राज्यवादी ही है, जिनके समर्थन और पथ-प्रदर्शन के द्वारा लीग फल-फूल रही है। इससे पुनर्निर्माण का कार्य कठिन हो गया है। परन्तु हमें यह काम तो पूरा करना ही पड़ेगा, न केवल पीडितों को राहत देने के लिये ही, बल्कि अंग्रेजी हथकण्डों की उपेक्षा करके स्वतन्त्रता के लक्ष्य की ओर अग्रसर होने के लिये भी।

"मुझे इसका पूर्ण विश्वास है कि मुसलमान पीड़ितों की मुसीबतें बनाये रखने की मुस्लिम लीग की सारी चेष्टाओं के बावजूद हमारा यह कार्य पूर्ण होगा और भारतीय राष्ट्रीयता इस विश्वासघातपूर्ण आक्रमण से बचकर पहले से भी अधिक बलवती और विजयशील होगी।"

लीगियों ने पूर्वी बंगाल में जो कुछ किया, उसका उद्देश्य पाकिस्तान की प्राप्ति के लिये हिन्दू-मुस्लिम द्वेषभाव को बढ़ाकर आबादी परिवर्तन का आन्दोलन प्रारम्भ करना था। इससे स्पष्ट होता है कि बिहार हत्याकाण्ड के लिये मुस्लिम लीग और लीगी मन्त्रि-मण्डल जिम्मेवार हैं, बिहार के हिन्दू नहीं।

★

हिन्दू-महासभा का मुसलमानों के सम्बन्ध में दृष्टिकोण

"If you come, with you; if you do'nt without you; and if you oppose inspite of you - the Hindus will continue to fight for their national freedom as best as they can." —वीर सावरकर

यह पहले ही कहा जा चुका है कि हिन्दू महासभा को मुसलमानों से किसी तरह का द्वेष नहीं है। महासभा चाहती है कि हिन्दू-मुसलमान भाई-भाई बन कर रहे। यह तभी हो सकता है, जब कि मुसलमान साम्प्रदायिकता को छोड़ कर राष्ट्रीयता के रंग में रंग जायें। हिन्दू स्वभाव से ही उदार हैं। मुसलमानों ने हिंदुओं की इस उदारता से साम्प्रदायिक लाभ उठाने की अनुचित चेष्टा की है। वे हिन्दुस्थान की अपेक्षा इस्लाम को श्रेष्ठ समझते रहे और हिंदुस्थान में इस्लाम के फैलाव का साम्प्रदायिक प्रयत्न करने लगे। यही कारण है कि हिन्दू महासभा को उन के विरुद्ध अपनी आवाज बुलन्द करनी पड़ी। हिन्दू जाति, धर्म, संस्कृति तथा भाषा पर होनेवाले किसी भी साम्प्रदायिक आक्रमण को महासभा उदासीनता से नहीं देख सकती। वह ऐसे प्रत्येक आक्रमण का शक्ति भर विरोध करेगी।

भारतीय स्वतंत्रता के युद्ध में साम्प्रदायिक प्रश्न उठा कर मुसलमानों ने जो गतिरोध पैदा किया है, उसका महासभा निषेध करती है और चाहती है कि राष्ट्रीयता के आधार पर साम्प्रदायिक समस्या का सदा के लिए अन्त हो जाये। यदि मुसलमान अनुचित साम्प्रदायिकता पर डटे ही रहेंगे, तो विवश होकर महासभा को विरोध करना ही पड़ेगा और वह करेगी। महासभा गृह-युद्ध के भय से हिन्दू-हितों का हनन होते नहीं देख सकती। वह प्रत्येक परिस्थिति में हिंदुओं के जन्म-सिद्ध अधिकारों की रक्षा करने के लिये कटिबद्ध रहेगी। गाँधीजी पहले कहते थे—"जब तक हिन्दू-मुसलमान एक नहीं हो जाते, तब तक स्वराज्य नहीं मिल सकता।" गाँधीजी या कांग्रेस की इस भोली धारणा को मुसलमानों ने अपना साम्प्रदायिक स्वार्थ सिद्ध करने का साधन बनाया। मर्ज बढ़ता गया, ज्यों-ज्यों दवा की। गाँधीजी तथा कांग्रेस की उपर्युक्त धारणा से सरकार 'विभाजन और शासन' की नीति से अपना ही उल्लू सीधा करती रही। साम्प्र-यिक उलझनें बढ़ गईं और स्वतन्त्रता का प्रश्न एक ओर रह गया। गाँधीजी ने अपनी ग़लती को थोड़ा बहुत अनुभव किया है और अब आपका कथन है—"जब तक भारत में ब्रिटिश सर-कार है, तब तक हिन्दू-मुस्लिम एकता नहीं हो सकती।" गाँधी जी के परस्पर विरोधी विचारों पर पाठक स्वयं विचार कर सकते हैं।

हिन्दू महासभा को ३० करोड़ हिन्दुओं की एकता तथा

शक्ति में विश्वास है। कांग्रेस ने हिंदुओं में पराजित मनोवृत्ति निर्माण की है। महासभा प्राचीन इतिहास तथा संस्कृति के आधार पर हिंदू समाज में स्वावलम्बन की भावना उत्पन्न करना चाहती है। महासभा के नेता वीर सावरकर ने परिस्थिति को भली भांति समझ कर निर्भयता तथा विश्वास के साथ घोषणा की—"यदि तुम आते हो, तो तुम्हारे साथ, यदि तुम नहीं आते, तो तुम्हारे बिना ही, और यदि तुम विरोध करते हो, तो उसके होते हुए भी हम हिंदू पूरी ताक़त से अपने स्वराज्य-संग्राम को जारी रखेंगे।" स्वतंत्रता के नाम पर साम्प्रदायिक समझौता करने-वाले मुसलमानों को सिवा इसके महासभा कह ही क्या सकती है?

यहाँ हम फिर स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि हिंदू महासभा राजनीतिक क्षेत्र में हिंदू-मुस्लिम भेद-भाव मिटाने के उद्देश्य से ही 'एक मनुष्य एक मत और सब को समान नागरिक अधिकार'—इस शुद्ध राष्ट्रीय सिद्धान्त का समर्थन करती है। यह राष्ट्रीयता ही हिंदू-मुस्लिम एकता का सही मार्ग है। यदि किसी कारण से यह सिद्धान्त स्वीकार नहीं किया जाता, तो महासभा सम्प्रदाय की संख्या के अनुसार प्रतिनिधित्व का सिद्धान्त स्वीकार करने के लिये तैयार है। संख्या से अधिक प्रतिनिधित्व का महासभा विरोध करती है। सौदा करके मित्रता नहीं खरीदी जा सकती। कांग्रेस राष्ट्रीयता का खून करके लीग से सौदा करती रही। सौदा करने से साम्प्रदायिकता बढ़ गई और पल्ले कुछ भी न पड़ा। इसका अनिवार्य परिणाम आज की

भारतीय राजनीति में विद्यमान साम्प्रदायिक संघर्ष है। यदि हम इस संघर्ष को स्थायी तौर पर समाप्त कर देना चाहते हैं, तो हिन्दू महासभा द्वारा प्रदर्शित राष्ट्रीय मार्ग पर ही चलना होगा।

मुस्लिम लीग धमकियों से पाकिस्तान की स्थापना करना चाहती है और हिन्दुओं को भयभीत करने के लिये लीगियों ने हिन्दुओं पर घातक आक्रमण करना भी शुरू कर दिया है। हिन्दू-मुस्लिम दोनों मारे जा रहे हैं। इन खूनी कार्रवाइयों से पाकिस्तान नहीं हो सकता। २३ सितम्बर १९४६ को मास्टर तारासिंह ने अपने पत्र 'सन्त सिपाही' में 'भावी घटनायें' शीर्षक लेख में लिखा है—"इसमें कोई सन्देह नहीं कि मुस्लिम लीगी प्रचारक घृणा और द्वेष के जो गीत गा रहे हैं, उनके कारण ही ये दंगे हुए हैं। पाकिस्तान की प्राप्ति के लिये लीग के पास केवल दो विकल्प हैं। पहला राजनीतिक हत्याओं का है। इसकी भारत में परीक्षा हो चुकी है और आतंकवादियों ने देख लिया है कि यह बेकार है। दूसरा शान्तिपूर्ण सविनय अवज्ञा है। इसमें लीग को सफलता मिलने की सम्भावना नहीं है, क्योंकि पाकिस्तान का आदर्श युक्तिसंगत नहीं है और उसको जनता का समर्थन भी प्राप्त नहीं है। मुस्लिम बहुसंख्यक क्षेत्रों में अल्प-संख्यकों के प्रति मुस्लिम लीग ने अन्याय किया है। केन्द्र में तो लीग यह चाहती है कि गैर-मुस्लिम बहुमत प्रभावहीन हो जाय, परन्तु मुस्लिम बहुसंख्यक प्रांतों में वह इस अधिकार को गैर-मुस्लिमों को देने के लिये तैयार नहीं है।" मास्टर तारासिंह का कथन सोलहों

आना सही है। कांग्रेस बिना किसी निश्चित राजनैतिक सिद्धांत के ही स्वतन्त्रता के लिये संघर्ष करती रही है। मुस्लिम लीग बिना किसी राजनीतिक सिद्धान्त के ही साम्प्रदायिक स्वार्थ सिद्ध करती रही और भारत सरकार बिना किसी राजनीतिक सिद्धान्त के ही कांग्रेस-लीग कशमकश में पंच बनकर फैसला देती रही है। तीनों की नीतियाँ राष्ट्रीय राजनीतिक सिद्धान्तों की धज्जियाँ उड़ाने में सहायक होती रही हैं। राष्ट्रीय राजनीतिक सिद्धान्तों की धज्जियाँ उड़ाने के परिणाम-स्वरूप हिन्दू-मुस्लिम एकता की भी धज्जियाँ उड़ गईं। संघर्ष जारी है। कांग्रेस के नेताओं को चाहिये कि अब वे भूतकाल में की हुई अपनी गलतियों का सुधार करें और निश्चित राष्ट्रीय राजनीतिक सिद्धान्तों के आधार पर ही भारत की केन्द्रीय तथा प्रान्तीय शासन-व्यवस्था की इमारत खड़ी करें। कांग्रेस प्रत्येय अन्याय का डंके की चोट विरोध करे।

हिन्दू महासभा संघर्ष नहीं चाहती। वह राष्ट्रीयता के आधार पर स्थायी समझौता चाहती है, साम्प्रदायिकता के आधार पर क्षणिक नहीं। यदि मुस्लिम लीग अपनी अन्यायपूर्ण माँगों के लिये संघर्ष करने पर तुली है, तो हिन्दू महासभा मि० जिन्ना के ही शब्दों में मुस्लिम लीग से कहती है—"हम युद्ध नहीं चाहते, पर यदि तुम युद्ध चाहते हो, तो हम इसे निस्संकोच होकर स्वीकार करते हैं।"

★

हिंदू महासभा और गीता-धर्म

'हे अर्जुन ! ऐसा नामर्द मत हो। यह तुझे शोभा नहीं देता। अरे शत्रुओं को ताप देने वाले, अन्तःकरण की इस क्षुद्र दुर्बलता को छोड़ कर युद्ध के लिये खड़ा हो। —भगवान श्रीकृष्ण

कई वर्षों से हिंदू राष्ट्रवादी, अहिंसक, असैनिक विचारवाले और झगड़े-फसाद से दूर रहनेवाले बन गये हैं। इस दृष्टिकोण से लाभ उठा कर मुसलमानों ने अपनी माँग बढ़ा ली हैं और उनको धार्मिक रूप दे दिया है। इससे हिंदुओं को काफी क्षति उठानी पड़ी है। धार्मिक जोश का उत्तर धार्मिक जोश से ही दिया जाना चाहिए। —स्वर्गीय महामना मालवीय जी

हिन्दुओं का सैनिकीकरण ही हिन्दुओं के उत्थान का एक मात्र मार्ग है। —वीर सावरकर

हम पहले यह भली भाँति सिद्ध कर चुके हैं कि गाँधी जी या काँग्रेस की मुस्लिम-पोषक नीति ब्रिटेन की विभाजन तथा शासन की नीति में सहायक होती आई है। अब और देखिये। सरकार ने हम से हथियार छीन कर हमें निःशस्त्र बना दिया—क्यों? इसलिये कि हम सशस्त्र क्रांति करने के योग्य न रह सकें, इसलिये कि हम में जीवन का जोश रहने न पाये, इसलिए कि हम कायर बन जायें, इसलिये कि हम में आत्म-सम्मान तथा आत्म-गौरव की भावना रहने न पाये और इसलिये कि हम स्वतन्त्रता की

भावना को भूल कर गुलामी को नतमस्तक होकर स्वीकार करें हाँ, विजेताओं की ऐसी ही इच्छा थी और किसी सीमा तक ऐसा हुआ भी। गुलामी की भावना हमारे रक्त में घुल-मिल गई। ऐसे समय में गाँधी जी ने गुलाम भारत के सामने अहिंसा का आदर्श रक्खा है। और इस प्रकार गाँधीजी का अहिंसावाद ब्रिटेन की नीति में सहायक हुआ है। बात कुछ विचित्र मालूम होती है, पर यह एक सत्य है। गाँधीजी तथा कांग्रेस ने राष्ट्र में स्वतन्त्रता की भावना को जागृत किया है, इस सत्य को हम स्वीकार करते हैं, पर इससे हमारी उपर्युक्त बात असत्य प्रमाणित नहीं हो सकती। यह ठीक है कि हम बन्धनों में इतने अधिक जकड़े हुये हैं कि हम सशस्त्र क्रान्ति करने की अवस्था में नहीं हैं, पर यह हमारी विवशता है। प्रयत्न करने से ही विवशता दूर हो सकती है, पर ऐसी दयनीय विवशता को अहिंसावाद के अध्यात्मवादी रंग में रंगने का प्रयत्न करने का अर्थ है उस विवशता को ईश्वर का वरदान समझ कर हृदय से स्वीकार करना। अहिंसा वीर विजेताओं का आभूषण है, पर गुलामों की वह कमजोरी ही कहलायेगी। अहिंसावाद राष्ट्र की क्रान्तिकारी भावना पर कुठाराघात है। हमें इस सत्य को स्वीकार करना चाहिये कि हम विवश हैं और विवशता की अवस्था में शान्तिपूर्ण उपायों से जो कुछ किया जा सकता है, कर रहे हैं; पर समय आने पर हिंसावाद को अपनाने में किसी तरह की हिचकिचाहट नहीं होगी। परिस्थिति साफ हो और नीति स्पष्ट हो।

हमें यह सब कुछ इसलिये लिखना पड़ा है कि अहिंसावाद को भारतीय संस्कृति की विशेषता तथा महत्ता के रूप में रक्खा जा रहा है। हमारा कथन यह है कि हिन्दू संस्कृति की विशेषता तथा महत्ता गाँधीजी के अहिंसावाद में नहीं है, प्रत्युत गीता के वक्ता, महान् तत्ववेत्ता तथा सर्वश्रेष्ठ राजनीतिज्ञ भगवान श्रीकृष्ण के हिंसावाद तथा अहिंसावाद के समन्वय में है। अर्जुन राज्य के लिये गुरु द्रोणाचार्य तथा भीष्म पितामह जैसे पूजनीय व्यक्तियों और कौरवों को मारना पाप समझता था और 'मैं नहीं लड़ूंगा' कह कर रथ में बैठ गया था। भगवान् कृष्ण ने अर्जुन की प्रशंसा नहीं की, प्रत्युत दिल पर चोट पहुँचाने वाले कड़े और कटु शब्दों में भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को फटकारा—

क्लैब्यं मा स्म गमः पार्थ नैतत्त्वय्युपपद्यते।
क्षुद्रं हृदय दौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परंतप॥

अर्थात्—हे अर्जुन! ऐसा नामर्द मत हो। यह तुझे शोभा नहीं देता। अरे शत्रुओं को ताप देने वाले! अन्तःकरण की इस क्षुद्र दुर्बलता को छोड़ कर युद्ध के लिये खड़ा हो।

और फिर यह भी कहा—

अथ चेत्त्वमिमं धर्म्यं संग्रामं न करिष्यसि।
ततः स्वधर्मं कीर्तिं च हित्वा पापमवाप्स्यसि॥

अतएव यदि तू धर्म के अनुकूल यह युद्ध न करेगा, तो स्वधर्म और कीर्ति को खोकर पाप को प्राप्त होगा।

अहिंसा परमो धर्मः—यह सत्य है, पर हिंसा परमो

धर्म भी सत्य है। धर्म स्वयं अपने में पूर्ण नहीं है, वह परिस्थिति पर निर्भर करता है। स्वतन्त्रता की प्राप्ति के लिये गुलामों का हिंसावाद को अपनाना अधर्म नहीं है। वैदिक आर्य अहिंसक न थे। उनकी वैदिक प्रार्थनाओं में शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने की अभिलाषा ओत-प्रोत है। मनु-स्मृति हम हिन्दुओं का प्रमुख धर्मशास्त्र है। मनुजी कहते हैं—

गुरुं वा बालवृद्धौ वा ब्राह्मणं वा बहुश्रुतम्।
आततायिनमायान्तं हन्यादेवाविचारयन्॥

अर्थात्—ऐसे आततायी दुष्ट को अवश्य मारडाले, किन्तु यह विचार न करे कि वह गुरु है, बूढ़ा है, बालक है या विद्वान् ब्राह्मण है। आततायी कौन? वसिष्ठ-स्मृति में कहा है—

अग्निदो गरदश्चैव शस्त्रपाणिर्धनापहः।
क्षेत्र दारा हरश्चैव षडेते आततायिनः॥

अर्थात्—घर जलाने के लिये आया हुआ, विष देनेवाला, हाथ में हथियार लेकर मारने के लिये आया हुआ, धन लूट कर ले जानेवाला और स्त्री या खेत का हरणकर्त्ता—ये छः आततायी हैं। इनको मार देना धर्म है, अधर्म नहीं।

हिन्दू-समाज के अधिकांश देवी-देवता शस्त्रधारी हैं। चक्र-सुदर्शनधारी श्रीकृष्ण, धनुर्धारी राम, त्रिशूलधारी शिव, खड्ग-धारिणी दुर्गा, शंख-चक्र-गदा-पद्मधारी विष्णु और इस प्रकार और कितने ही हैं, जिनकी हिन्दू-समाज प्रतिदिन पूजा करता है। क्या यह हिन्दू-समाज के अहिंसावादी होने के लक्षण हैं? गीता

में भगवान् श्रीकृष्ण "विनाशाय च दुष्कृताम्" दुष्टों का नाश करना यह एक ईश्वरीय कार्य बताते हैं। अन्याय तथा अत्याचार करनेवाली हिंसा अधर्म्य तथा घृणित है और इसलिये त्याज्य है, पर अन्याय तथा अत्याचार को मिटानेवाली हिंसा धर्म्य तथा प्रशंसनीय है और इसलिये ग्राह्य है। हिन्दू-धर्म एकांगी नहीं है, वह सर्वाङ्ग परिपूर्ण है। गीता हिन्दुओं का धर्म के आधार पर स्थित नीतिशास्त्र है, कर्मयोगशास्त्र है और दार्शनिक ग्रन्थ भी। गीता का सन्देश हिन्दुओं के लिये जीवन का शुभ सन्देश है।

हिंदू महासभा के नेता अव्यवहार्य आदर्श के आकाश में नहीं उड़ते हैं। वे वास्तविकता की जमीन पर चलते हैं। और इसलिये उन्होंने शुरू से ही हिन्दुओं के सैनिकीकरण पर विशेष जोर दिया है। वीर सावरकर ने हिन्दू महासभा के सभापति पद से या अखिल भारतीय दौरा करते हुए विभिन्न स्थानों में जो भाषण दिये हैं, उन सब में आपने हिन्दुओं के सैनिकीकरण, समस्त यूनिवर्सिटियों, कालेजों और स्कूलों में सैनिकशिक्षा अनिवार्य करने और हिंदू युवकों के नौ-सेना, वायुयान-सेना और स्थल-सेना में सम्मिलित होने पर विशेष जोर दिया है। यही कारण था कि हिन्दू महासभा ने दूसरे महायुद्ध में हिन्दुओं के सम्मिलित होने का समर्थन किया था। युद्ध के प्रति महासभा की नीति स्पष्ट करते हुए वीर सावरकर ने कहा था—"हिंदू युद्ध के अवसर से लाभ उठायें और अपने आपको औद्योगीकरण तथा सैनिकीकरण के कार्यों में लगा दें। हमें सरकार की उन रियायतों से लाभ उठाना

चाहिये, जो वह विवश होकर हमें पेश कर रही है। इस समय हमें काफी अवसर मिल रहे हैं, जो गत पचास वर्षों में नहीं मिले और संभव है कि आगामी पचास वर्षों में आन्दोलन या मांग करने पर भी न मिलते। स्मरण रहे कि ब्रिटिश सरकार ये रियायतें भारतीयों की भलाई के लिये पेश नहीं कर रही है, प्रत्युत वह अपनी भलाई के लिये दे रही है। हम भी अंग्रेजों को सहायता देने के खयाल से युद्ध प्रयत्नों में सम्मिलित नहीं हो रहे हैं, बल्कि अपनी भलाई के लिये ही ऐसा कर रहे हैं।"

वीर सावरकर के वक्तव्य से यह स्पष्ट हो जाता है कि महासभा ने इस युद्ध को जनता का युद्ध कह कर कम्युनिस्टों की तरह सरकार की चापलूसी नहीं की है, प्रत्युत हिन्दुओं के सैनिकीकरण के लिये एक शुभ अवसर समझ कर युद्ध प्रयत्नों से लाभ उठाया है। सिद्धान्तों की स्पष्टता महासभा की विशेषता है।

हिन्दू महासभा के वयोवृद्ध नेता धर्मवीर डॉ० मुंजे के जीवन का मिशन ही हिन्दुओं में सैनिक शिक्षा का प्रचार करना रहा है। आपने अपने जीवन की सम्पूर्ण शक्ति इसी कार्य में लगादी। नाशिक में 'भोंसला मिलिटरी स्कूल' की स्थापना डॉ० मुंजे के अदम्य उत्साह तथा सततोद्योग का परिणाम तथा परिचय है।

राजनीति में अहिंसा एक बहिष्कृत शब्द है। देश-विदेश के उलट-फेर से कोई गुलाम राष्ट्र अहिंसा से चमत्कार के तौर पर स्वतंत्र भले ही हो जाय, पर अहिंसावाद स्वतंत्रता की रक्षा नहीं कर सकता। यह एक सत्य है, जिसे गांधीजी ने भी स्वीकार किया

है। आप कहते हैं—"A Government cannot succeed in becoming entirely non-violent because it represents all the people.' अर्थात् 'सरकार पूर्णतया अहिंसावादी बनने में सफलता प्राप्त नहीं कर सकती, क्योंकि वह सभी लोगों का प्रतिनिधित्व करती है।' गांधीजी ६ मार्च-१९४० के हरिजन में लिखते हैं—'Even under a Government based on non-violence a small police force will be necessary." अर्थात् 'अहिंसा के आधार पर स्थित सरकार को भी थोड़ी सैनिक शक्ति की आवश्यकता होगी।' १५ सितम्बर १९४६ के हरिजन सेवक में कांग्रेस वर्किङ्ग कमेटी के सदस्य श्री शंकरराव देव का गांधीजी को लिखा हुआ एक पत्र प्रकाशित हुआ है, जिस में आप लिखते हैं—'आम तौर पर कांग्रेसियों की अहिंसा कमजोरों की अहिंसा ही रही है। हिन्दुस्थान की मौजूदा हालत में यही हो सकता था, इसे तो आप भी जानते हैं। आप कहते हैं कि ताकतवर की अहिंसा में तेज होता है, फिर कमजोर को तगड़ा बनाने के लिये आपने अहिंसा का इस्तेमाल करना मंजूर किया। यही नहीं, बल्कि आप उसके नेता भी बने। इस तरह दुर्बल या कमजोर होते हुए भी आज उसके हाथ में सत्ता या हकूमत आयी है। यह असम्भव है कि जो लोग अंग्रेजी हकूमत के खिलाफ अहिंसा से लड़े, वे ही अब अपने हाथ में ताकत लेकर मुल्क में दंगा-फसाद के वक्त भी अहिंसा का इस्तेमाल करके उसे मिटाने को तैयार हों। अगर वे

ऐसी कोशिश करें भी, तो न वे उस में कामयाब होंगे और न इस काम में उन्हें आम लोगों की हमदर्दी ही मिलेगी।' यह पत्र का एक अंश है। इसके उत्तर में गांधीजी ने लिखा है-'कुछ अरसे से मैंने यह कहना शुरू कर दिया है कि कांग्रेस के विधान या कानून से 'सत्य और अहिसा' को हटा देना चाहिये'। जादू वह है जो सिर पर चढ़ कर बोले।

यह स्पष्ट हो गया है कि पूर्व बंगाल में हिंदुओं पर जो हिंसात्मक आक्रमण हुआ है, उसमें सेना से निकाले गये मुस्लिम सैनिकों का हाथ था। कबाइली क्षेत्रों के पठानों का सीमाप्रांत के हिंदुओं पर समय-समय पर आक्रमण होता रहा है। दिसम्बर १९४६ में सीमाप्रांत के हजारा जिले की हिंदू बस्तियों पर आक्रमण किया गया है। वहाँ के हिंदू जान बचाने के लिये काश्मीर रियासत और रावलपिंडी में गये हैं। इस दृष्टि से विचार करने पर हिन्दू समझ जायँगे कि क्यों वीर सावरकर और डॉक्टर मुंजे हिंदुओं के सैनिकीकरण पर जोर देते रहे हैं? महासभा के नेता दूरदर्शी हैं, उनकी भविष्यवाणी सही प्रमाणित हो रही है।

हिंदुओं में सैनिक शिक्षा का प्रचार होना चाहिये। हिंदू-जीवन में जोश, साहस तथा आत्मविश्वास पैदा करने के लिये क्षत्रियत्व की भावना का विकास होना अत्यन्त आवश्यक है। यह विचार करने की बात है कि मुसलमान अल्प-संख्यक होते हुए भी बहु-संख्यक हिदुओं को संघर्ष की धमकी देते हैं और प्रायः पहला आक्रमण उन्हीं की ओर से होता है। मुसलमानों में

इतना हौसला क्यों ? प्रायः देखा जाता है कि हिन्दू बहुमत मुहल्ले में मुसलमान निर्भय होकर रहते हैं और मुस्लिम बहुसंख्यक मुहल्ले में हिंदू भयभीत जीवन व्यतीत करते हैं। हमें इस का मनोवैज्ञानिक दृष्टि से अध्ययन करना चाहिये। इसी लिये हम गाँधीजी के हिंदुओं में किये जानेवाले अहिंसावाद के प्रचार का विरोध करते हैं। अहिंसा की महत्ता को कौन नहीं जानता ? पर समाज की परिस्थिति की उपेक्षा कर देने से समाज आदर्शवादी नहीं बन सकता। वीरों के समाज में अहिंसावाद का प्रचार शोभा पाता है, भीरुता को सभ्यता समझनेवाले समाज में नहीं। हिंदुओं के उत्थान के लिये हिंदुओं की पराजित मनोवृत्ति का खातमा होना आवश्यक है और पराजित मनोवृत्ति का खातमा सावरकरवाद अर्थात् सैनिकवाद से हो सकता है, गाँधीवाद से नहीं। नेताजी सुभाषचन्द्र बोस की पराजित आज़ाद हिन्द फौज ने भी कांग्रेस को आगे बढ़ाया है। इससे सैनिक-शक्ति की महत्ता को हम भली भांति समझ सकते हैं।

अहिंसावाद के वातावरण में क्षत्रियत्व का विकास भली भांति हो नहीं सकता। गाँधीजी ने ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध भारत में स्वतन्त्रता की भावना को बढ़ाया है, पर जब हम हिंदू मुस्लिम समस्या का अध्ययन करते हैं, तो कहना पड़ता है कि गाँधीजी ने हिंदुओं में पराजित मनोवृत्ति का निर्माण किया है। हिंदू समाज का सूक्ष्म अध्ययन करनेवाला कोई भी व्यक्ति हमारी बात का समर्थन करेगा।

हिंदुओं के सन्मुख छत्रपति शिवाजी, महाराणा प्रताप, गुरु गोविन्दसिंह आदि शस्त्रधारी महापुरुषों का आदर्श होना चाहिये। यह आदर्श ही उनकी पराजित मनोवृत्ति को मिटाने में सहायक होगा।

★

हिन्दू महासभा और हिन्दू संस्कृति

उन लोगों के सामने, जो अपना कुछ भी छोड़ना नहीं चाहते, हिंदुओं का अत्यधिक उदार बनना या झुक जाना घातक है। यह दुःख की बात है कि गाँधीजी हिंदी के लिये जयचन्द (हिन्दी-द्रोही) प्रमाणित हो रहे हैं। —माननीय बाबू पुरुषोत्तमदास टण्डन, स्पीकर यू० पी० असेम्बली

वर्धा-शिक्षा-योजना को देखते ही पाठक पर प्रथम असर यह पड़ता है कि यह किसी ऐसे दिमाग़ की उपज है, जिसको भारत से वैसी ही विरक्ति हो गई है, जैसी राजा भर्तृहरि को स्त्रियों से हो गई थी। —प्रसिद्ध इतिहासज्ञ पं० जयचन्द्र विद्यालंकार

कांग्रेस तथा गाँधीजी जिस प्रकार राजनीतिक क्षेत्र में हिंदुओं के राजनीतिक अधिकारों की कथाकथित राष्ट्रीयता के नाम पर उपेक्षा कर रहे हैं, उसी प्रकार वे हिंदुओं के सांस्कृतिक दृष्टिकोण की उपेक्षा कर रहे हैं। तथाकथित हिंदू-मुस्लिम एकता के नाम पर गाँधीजी तथा कांग्रेस मुसलमानों के सामने नत-मस्तक होकर जो आत्मसमर्पण कर रहे हैं, वह हिंदू समाज और हिंदू संस्कृति दोनों के लिए घातक सिद्ध हो रहा है।

विदेशी विजेता अपने गुलाम राष्ट्र में हीनता की भावना उत्पन्न करने के लिये और इसके द्वारा उसको चिरकाल तक

गुलाम बनाये रखने के लिये अपना पहला वार गुलाम राष्ट्र की भाषा तथा इतिहास पर करते हैं। और इस प्रकार गुलाम राष्ट्र को सांस्कृतिक दृष्टि से हीन बनाते हैं। इसी दृष्टि से लार्ड मेकाले ने हिंदुस्थान में अंग्रेजी भाषा प्रचलित की थी। स्कूलों और कालेजों में पढ़ाने के लिये भारत के इतिहास को ऐसा विकृत बनाया गया, जिससे हिंदुओं में हीनता का भाव पैदा हो। इन इतिहासों में भारत के विश्व-विजयी आर्य हिंदुओं के प्राचीन चक्रवर्ती साम्राज्यों का वर्णन बिल्कुल नहीं है। उसमें सिकन्दर, चंगेज खाँ, महमूद गजनवी, महमूद गोरी, नादिरशाह, तैमूरलंग, बाबर, अकबर, अहमदशाह अब्दाली इनकी विजय का वर्णन विस्तारपूर्वक किया गया है। मुसलमानों के राज्य को नष्ट-भ्रष्ट करनेवाले और हिन्दू राज्य की रक्षा के लिये अंग्रेजों से वीरता-पूर्वक सामना करनेवाले हिंदू वीरों का वर्णन इतिहास में नहीं के बराबर है। यह हमारी पराधीनता का अनिवार्य परिणाम था। जब राष्ट्रीय आन्दोलन शुरू हुआ, तो हमने अपने पतन को बुरी तरह अनुभव किया।

हमारे नेताओं ने विदेशी राज-भाषा अँग्रेजी के स्थान पर किसी भारतीय भाषा को राष्ट्रभाषा का स्थान देना चाहा और इसके लिये राष्ट्रभाषा हिन्दी ही सबसे अधिक उपयुक्त मानी गई। इसमें साम्प्रदायिकता का कोई प्रश्न न था, क्योंकि हिन्दी ही एक ऐसी भाषा है, जो भारत की विभिन्न प्रान्तीय भाषाओं से अधिक समीप है। अधिकांश भारतीय भाषाओं का मूल

स्रोत संस्कृत है और हिन्दी का भी। भारत की लगभग १२ करोड़ जन-संख्या की तो हिन्दी मातृभाषा है और १२ करोड़ मनुष्य आसानी से हिन्दी को समझ लेते हैं। भारतीय भाषाओं में संस्कृत के तत्सम तथा तद्भव शब्दों की अधिकता है और हिन्दी में भी। यही कारण है कि किसी भी प्रांत के निवासी हिन्दी को आसानी से सीख सकते हैं। हिंदी की देवनागरी लिपि सरल, वैज्ञानिक तथा सर्वाङ्ग परिपूर्ण है। देवनागरी लिपि की बराबरी संसार की कोई भी लिपि नहीं कर सकती। जो लिखा जाता है, वही पढ़ा जाता है। उर्दू की फारसी लिपि या रोमन लिपि में लिखा कुछ जाता है और पढ़ा कुछ और जाता है। बहुमत की भाषा, लिपि की वैज्ञानिकता, लिखने पढ़ने की सरलता और साहित्य की श्रेष्ठता के कारण भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी ही हो सकती है, परन्तु मि० जिन्ना या मुस्लिम लीग की माँग है कि उर्दू को राष्ट्रभाषा बनाया जाय। यह है साम्प्रदायिकता का दुराग्रह। यहां कोई तर्क नहीं है। जनता की सुविधा का कोई प्रश्न नहीं है। है केवल मजहबी जिद। मध्यप्रांत, मध्य हिन्दुस्थान, बंगाल, बिहार, युक्तप्रांत, महाराष्ट्र, गुजरात, काठियावाड़, कच्छ, राजपूताना आदि प्राँतों के मुसलमानों की भाषाओं में संस्कृत शब्दों का बाहुल्य रहता है। इसलिये उपर्युक्त प्रांतों के मुसलमान उसी राष्ट्रभाषा को समझ सकते हैं, जिस का निर्माण संस्कृत के तत्सम तथा तद्भव शब्दों के आधार पर हुआ हो, पर मि० जिन्ना या मुस्लिम लीग को अधिक से अधिक मुसलमानों

का ख़याल नहीं है। उनको तो केवल इस्लाम का ख़याल है।

और गांधीजी ने मुसलमानों को ख़ुश करने के लिए हिन्दी और उर्दू को मिला कर हिंदुस्थानी भाषा का आविष्कार किया है। यह भाषा 'धोबी का कुत्ता न घर का, न घाट का' कहावत को चरितार्थ करती है। हिन्दी की सुन्नत करके उसे उर्दू बेश पहनाया गया है। काँग्रेसी मन्त्रि-मण्डलों ने इस भ्रष्ट हिंदुस्थानी का प्रचार अपने शासन-काल में ख़ूब किया है। प्राथमिक पाठ्य-क्रम के लिये प्रारम्भ में बिहार में जो हिन्दुस्थानी की पुस्तकें तैयार की गई थीं, उन में बादशाह राम, बेगम सीता, मौलाना वसिष्ठ और उस्ताद विश्वामित्र ऐसे शब्द प्रयुक्त किये गये थे। हिन्दुओं के आंदोलन करने पर ये पुस्तकें हटा ली गई हैं। अब जो पुस्तकें तैयार की गई हैं, उनमें संस्कृत शब्दों का बहिष्कार करने का पूरा प्रयत्न किया गया है। कहानियाँ इस ढङ्ग से लिखी गई हैं कि हिन्दू बच्चों के अपरिपक्व मस्तिष्क तथा हृदय में अपने पूर्वजों तथा देवताओं के प्रति अश्रद्धा या अनादर के भाव पैदा हों। बड़े होने पर उन लड़कों में हिन्दू संस्कृति के प्रति श्रद्धा का भाव न रहे, इसी दृष्टि से इन पुस्तकों की रचना की गई है। भाषा भाव की वाहिका और संस्कृति की आत्मा है। भाषा का प्रश्न संस्कृति का प्रश्न है। गांधी जी उर्दू का प्रचार या वकालत करते हुए स्थान-स्थान पर कहते हैं—"जिन लोगों को उर्दू से प्रेम नहीं है, उन्हें भारतीय स्वराज्य से भी प्रेम नहीं है। यदि आप भारतीय स्वराज्य से प्रेम करते हैं, तो आपको उर्दू

भाषा और फारसी लिपि सीखनी ही होगी।" गांधी जी दक्षिण भारत के लोगों को भी उर्दू सीखने के लिये प्रेरित कर रहे हैं। हिन्दू-मुस्लिम एकता के लिये गांधी जी के उर्दू-प्रचार से मुसलमान हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि सीखना आवश्यक नहीं समझेंगे। इसका अनिवार्य परिणाम यह होगा कि हिन्दुस्थान में ऐसी भाषा, जो हिन्दू-मुस्लिम दोनों समझ सकें, उर्दू होगी और ऐसी लिपि, जो हिन्दू-मुस्लिम दोनों समझ सकें, फारसी होगी। ऐसी अवस्था में राष्ट्रभाषा का स्थान प्राप्त होगा उर्दू को और राष्ट्र-लिपि का सम्मान प्राप्त होगा फारसी को। यह होगा गांधीजी के हिन्दुओं में किये जानेवाले उर्दू प्रचार का अवश्यम्भावी परिणाम। क्या यह हिन्दू-मुस्लिम एकता के नाम पर हिन्दू और हिन्दू-संस्कृति का अपमान नहीं किया जा रहा है? उर्दू का जन्म यद्यपि हिन्दुस्थान में हुआ है, तथापि उसका मूल स्रोत अरबी तथा फारसी के रूप में अरबस्तान में है। प्रयाग विश्व-विद्यालय के वायस-चान्सेलर डॉक्टर अमरनाथ झा का कथन है—"उर्दू भारत के अतिरिक्त और कहीं नहीं बोली जाती, अतः वह भारत की ही भाषा है, किन्तु फारसी शब्दों की भरमार से तथा अपनी संस्कृति और साहित्य के लिये विदेशोन्मुख होने के कारण वह भारतीय संस्कृति की परिचालिका नहीं है। जिस भाषा में लैला-मजनू का आदर्श है, सावित्री-सत्यवान या नल-दमयन्ती का नहीं, बुलबुल का राग है, कोयल या पपीहा का नहीं, गुल का सौन्दर्य है, कमल का नहीं, वह भारत की राष्ट्रभाषा कैसे हो सकती है?"

हिन्दुस्थान की बहु-संख्यक जनता उर्दू से नितान्त अनभिज्ञ है। उसकी लिपि अवैज्ञानिक तथा लिखने-पढ़ने में कठिन है। इन सब अयोग्यताओं के होते हुए भी तथाकथित हिंदू-मुस्लिम एकता के नाम पर उर्दू को सब प्रकार की योग्यताओं से परिपूर्ण बहु-संख्यक की भाषा हिन्दी के सिर पर चढ़ाया जा रहा है। मुसलमानों को खुश करने के लिये हिंदू संस्कृति का गला घोंटा जा रहा है। चूँकि सरकार तथा कांग्रेस दोनों ही मुसलमानों को एक दूसरे से बढ़ कर खुश रखना चाहती हैं, इसलिये प्रत्येक बात में हिंदुओं के दृष्टिकोण की उपेक्षा कर दी जाती है। बिहार में प्राथमिक तथा माध्यमिक शिक्षा के लिये हिंदुस्थानी को माध्यम बनाया गया है। ध्यान रहे, बिहार में १२ प्रतिशत मुसलमान हैं और इन १२ प्रतिशत मुसलमानों की भाषा बिहारी है, उर्दू नहीं। बिहारी भाषा हिंदी ही है, उर्दू नहीं। १२ प्रतिशत मुसलमानों को खुश करने के लिये ८७ प्रतिशत हिंदुओं के मत्थे हिंदुस्थानी अर्थात् वह भाषा, जिसमें हिंदी में प्रयुक्त होने वाले संस्कृत के तत्सम शब्दों के स्थान पर अरबी और फारसी के शब्द प्रयुक्त करने का प्रयत्न किया जाता है, मढ़ी जायेगी। कांग्रेसी मंत्रि-मण्डल हिंदुस्थानी के प्रचार में प्रयत्नशील हैं। गाँधीजी की वर्धा-शिक्षा-योजना के अनुसार हिन्दी-भाषा-भाषी प्रांतों में देवनागरी लिपि के साथ फारसी लिपि भी आवश्यक कर दी गई है। अहिंदी-भाषा-भाषी प्रांतों में फारसी लिपि आवश्यक करने की प्रार्थना की गई है। अब सब हिंदुओं को अलिफ, बे, पे

सीखना होगा। यह अन्याय देख कर ही यू० पी० के प्रतिष्ठित कांग्रेसी नेता, यू० पी० असेम्बली के स्पीकर तथा हिंदी-साहित्य-सम्मेलन के कर्णधार बाबू पुरुषोत्तमदास टण्डन ने गाँधीजी की हिंदुस्थानी का विरोध किया है। आपके इस कथन से प्रत्येक आत्मभिमानी हिंदू सहमत होगा कि गाँधीजी हिंदी के लिये जयचन्द प्रमाणित हो रहे हैं। आपका मत है कि उन लोगों के सामने, जो अपना कुछ भी छोड़ना नहीं चाहते, हिंदुओं का अत्यधिक उदार बनाना या झुक जाना घातक है। इसके फल-स्वरूप गांधीजी हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन से अलग हो गये हैं, ताकि आप स्वतंत्र रूप से हिन्दुस्थानी का प्रचार कर सकें।

हिन्दुस्थान का रेडियो-विभाग तो हिंदुस्थानी के नाम पर शुद्ध उर्दू का प्रचार करता रहा है। ध्यान रहे, रेडियो के लगभग ढाई लाख लायसेन्सदार हैं और उनमें से लगभग दो लाख हिंदू हैं। हिंदुओं के पैसे पर चलनेवाला यह व्यापारी रेडियो-विभाग हिंदुस्थानी के नाम पर उर्दू को आगे बढ़ा रहा है। हिंदी-साहित्य-सम्मेलन के नेताओं ने बहुत कुछ विरोध किया, पर इस विभाग के युद्धकालीन अध्यक्ष सर सुलतान अहमद के कान पर जूँ तक नहीं रेंगी। बाबू श्री सम्पूर्णानन्दजी ने अपने एक वक्तव्य में कहा था—"मुझे ऐसा कहने में कोई संकोच नहीं है कि रेडियो-विभाग की भाषा नीति भारतीय संस्कृति के लिये घातक है। हिंदुस्थानी की आड़ में उर्दू का और उस संस्कृति का, जिसका उर्दू प्रतीक हो रही है, प्रचार करके रेडियो अधिकारी अपने पद का निर्लज्ज

दुरुपयोग कर रहे हैं। ऐसा कोई समय रहा हो, जब उसको हिंदी पक्ष की पूरी जानकारी न रही हो, परन्तु दिल्ली में सर सुलतान अहमद ने जो सम्मेलन कराया था, उसके बाद तो ऐसा नहीं कहा जा सकता। वहाँ हमें जैसा आश्वासन दिया गया, रेडियो विभाग की गति विधि से उसका मिलान करने से तो यही कहना पड़ता है कि हमारे साथ विश्वासघात किया गया। केन्द्र में उत्तरदायी सरकार के अभाव ने इन लोगों को खुल कर खेलने का अवसर दिया है।"

श्रीयुत सम्पूर्णानन्दजी के वक्तव्य से हम सहमत हैं, पर केन्द्र में उत्तरदायी सरकार की स्थापना हो जाने से हिन्दी को समुचित स्थान प्राप्त होगा, इस आशा के पूर्ण होने में हमें सन्देह है। गाँधीजी और कांग्रेस हिन्दुस्थानी के पक्ष में हैं। कांग्रेस की राष्ट्रीय योजना-समिति ने वर्धा शिक्षा-योजना को स्वीकार किया है, जिसके अनुसार हिन्दी भाषा-भाषी प्रान्तों में फारसी लिपि अनिवार्य कर दी जायेगी और अहिन्दी भाषा-भाषी प्रान्तों में फारसी लिपि के प्रचार का प्रयत्न किया जायेगा। ऐसी अवस्था में संस्कृत-निष्ठ हिन्दी को कांग्रेसी सरकार आगे बढ़ायेगी, यह आशा नहीं की जा सकती। फिर भी सरदार पटेल से, जिन्होंने अन्तः कालीन सरकार बनने के बाद इस विभाग को सँभाला है, थोड़ी आशा की जा सकती है। गाँधीजी की 'हिन्दुस्थानी,' आचार्यकाका कालेलकर की 'सब की बोली', मौलाना आजाद की 'कौमी जबान' या डॉ० अन्सारी की 'मुश्तर्का जबान' वास्तव में ऐसी सरल

उर्दू है, जिसमें अरबी और फारसी के क्लीष्ट शब्द न हों। इसको हिन्दी तो नहीं कहा जा सकता।

हिन्दू और हिन्दी के साथ तथाकथित राष्ट्रीयता के नाम पर जो अन्याय किया जा रहा है, उसके विरुद्ध यदि हिन्दुओं की सम्मिलित आवाज बुलन्द हो, तो परिस्थिति में सुधार हो सकता है और इसीलिये हम हिन्दू-महासभा को मजबूत बनाने की आवश्यकता का प्रतिपादन करते हैं।

गाँधीजी की वर्धा-शिक्षा योजना हिन्दू संस्कृति पर जबर्दस्त कुठाराघात है। इस योजना में इतिहास का जो पाठ्यक्रम तैयार किया गया है, उसको पढ़ने से ऐसा प्रतीत होता है कि वह अरबस्तान के किसी 'मदरसा' के लिये लिखा गया है। उसमें मुस्लिम संस्कृति ने हिन्दू संस्कृति और इतिहास को मात कर दिया है। चौथी श्रेणी के पाठ्यक्रम में मानव जाति के उद्धारकों की सूची में ये नाम हैं—जरथुस्त, साक्रेटिस, हुसेन, लिंकन, पास्टर, डेवी, फ्रैन्कसीन, फ्लोरेन्स नाइटिंगेल, टालस्टाय, बुकर वाशिंगटन, सनयातसेन और गाँधीजी। मानव जाति के उद्धारक १२ महापुरुषों में केवल एक भारतवासी और वह भी गाँधीजी। इसका साफ मतलब यह है कि गाँधीजी के जन्म से पहले हिन्दू-जाति तथा संस्कृति ने एक भी मानवजाति का उद्धारक पैदा नहीं किया था। इसमें राम या कृष्ण नहीं, राणा प्रताप या शिवाजी नहीं, तुकाराम या चैतन्य नहीं, शंकराचार्य या रामानुजाचार्य नहीं, तिलक या टैगौर नहीं, राममोहनराय या स्वामी दयानन्द नहीं,

गोखले या नौरोजी नहीं, गुरु गोविन्दसिंह या समर्थ रामदास भी नहीं। क्या यह किसी अन्तर्राष्ट्रीय विद्यालय के लिये पाठ्यक्रम तैयार किया गया है ? इसका नाम क्यों Basic National Education—बुनियादी राष्ट्रीय शिक्षा रक्खा गया है ?

पंचम श्रेणी के लिये जो पाठ्यक्रम बनाया गया है, उसमें तो इस्लामी सभ्यता का बोलबाला है। इसमें हिन्दुस्थान तथा सारी दुनिया की मुस्लिम सभ्यता का इतिहास दिया गया है। अरब-स्तान की भौगोलिक तथा सामाजिक परिस्थिति के साथ इस्लाम के संस्थापक महमद पैगम्बर और इस्लाम के आदि युग के नेता उमर, अली, हुसेन, खलिफ अब्दुल अजीज के जीवन चरित्र बालकों को पढ़ाये जायेंगे। हिन्दुस्थान के साथ मुस्लिम सम्पर्क का प्रारम्भिक इतिहास जानने के लिये महम्मदबीन कासिम और ख्वाजा मोइउद्दीन चिश्ती के जीवन चरित्र पढ़ाये जायेंगे। मुस्लिम संस्कृति की संसार को देन के तौर पर अली, हारून-उर-रशीद सलाल्लुदीन और अब्दुल रहमान की जीवन-कथाएँ पढ़ाई जायेंगी। संसार में मुस्लिम साम्राज्य का विस्तार दिखानेवाले नक्शे खींचना सिखाया जायेगा। अलबरूनी, इब्नबतूता, फिरोज-शाह तगलख, बाबर, चाँदबीबी, नूरजहाँ, दादू, कबीर, नानक और बाबा फरीद के जीवन चरित्र पढ़ाये जायेंगे। यह है बुनियादी राष्ट्रीय शिक्षा ! हिन्दू बालकों को बचपन से ही इस्लामी संस्कृति की शिक्षा दी जायेगी। हिन्दू संस्कृति और हिन्दुत्व की भावना को मिटाने के लिये ही वर्धा-शिक्षा योजना का आविष्कार हुआ

है। प्रसिद्ध इतिहासज्ञ पण्डित जयचन्द्र विद्यालंकार कहते हैं—"इस शिक्षा को देखते ही पाठक पर प्रथम असर यह पड़ता है कि यह किसी ऐसे दिमाग की उपज है, जिसको भारत से वैसी ही विरक्ति हो गई है, जैसी भर्तृहरि को औरतों से हो गई थी। यह पाठ्यक्रम गांधीजी की सलाह से डॉ० जाकिर हुसैन ने तैयार किया है और इसीलिये राष्ट्रीय शिक्षा के नाम पर भारत राष्ट्र का अपमान किया गया है।

हम ऊपर लिख चुके हैं कि हिन्दुस्थान के स्कूलों और कालेजों में पढ़ाये जानेवाले इतिहास इस दृष्टि से लिखे गये हैं कि हिन्दू बालक और युवक अपने वैभवपूर्ण भव्य भूतकाल के भली भाँति दर्शन न कर सकें और इङ्गलैण्ड को ही सब बातों में सर्वश्रेष्ठ समझें। सरकार की इस नीति में कांग्रेस और गाँधीजी सहयोग दे रहे हैं। अन्तर केवल यह है कि सरकार ने अंग्रेजी के द्वारा हिन्दू युवकों के सामने इङ्गलैण्ड का आदर्श रक्खा और गांधीजी या कांग्रेस ने हिन्दुस्तानी के द्वारा हिन्दू युवकों के सामने अरबस्तान का आदर्श उपस्थित किया है। वर्धा योजना के इतिहास के पाठ्यक्रम को पढ़कर कोई भी विचारक हिन्दू इस बात को मानेगा कि इतिहास में हिन्दू दृष्टिकोण की सर्वथा उपेक्षा की गई है। हिन्दू समाज के भूतकाल को नष्ट-भ्रष्ट करने का प्रयत्न सरकार और गाँधीजी या कांग्रेस ने समान रूप से किया है।

हिन्दू-महासभा दृढ़ता से कहती है कि हिन्दी भारत की राष्ट्र-भाषा होने के योग्य है और देवनागरी राष्ट्रीय लिपि। महासभा

रेडियो विभाग की भाषा नीति की निन्दा करती है। महासभा वर्धा-शिक्षा-योजना को हिन्दू जाति और हिन्दू संस्कृति का अपमान समझती है। महासभा उर्दू का विरोध नहीं करती है। मुसलमान उर्दू पढना, चाहें तो पढ़ें, पर राष्ट्रभाषा के तौर पर उर्दू को ३० करोड़ हिन्दुओं के मत्थे मढ़ना महासभा को स्वीकार नहीं हो सकता।

★

ईसाई मिशनरियों का आक्रमण

प्रत्येक प्रांतीय सरकार के दिमाग में यह बात ठोक दी जानी चाहिये कि आंशिक बहिर्गत(partially excluded) क्षेत्रों के प्रति उन प्रान्तीय सरकारों की कोई जिम्मेदारी है और सबसे पहले जिम्मेदारी यह है कि आंशिक बहिर्गत क्षेत्रों में धर्म भ्रष्ट करनेवाले ईसाई पादरियों को पांव ही न रखने दिया जाय। जब तक ईसाई मिशनरी वापिस नहीं चले जाते, तब तक जनता को दम नहीं लेना चाहिये। —भूतपूर्व ईसाई मिशनरी

—डाक्टर एलविन

पिछले प्रकरणों में लिखा जा चुका है कि भारत सरकार ने १९३५ के शासन विधान के अनुसार भारतीय एकता तथा राष्ट्रीयता के टुकड़े टुकड़े कर दिये हैं। जैन, बौद्ध, सिख, दलित हिन्दू सवर्ण हिन्दू ये सब एक होते हुये भी इनको पृथक्-पृथक् कर दिया गया है। ईसाई, एंग्लो इंडियन और यूरोपियन ये सब एक ही ईसाई धर्म को मानने वाले हैं, पर इनको भी पृथक्-पृथक् कर दिया गया है। यह सब 'विभाजन और शासन' की नीति के अनुसार किया गया है। इसका उद्देश्य केवल स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करने वाली हिन्दू जाति को अल्पमतों के संरक्षण का प्रश्न उठा कर संख्या और शक्ति की दृष्टि से दुर्बल बनाये रखने का है। क्या बात है कि मुसलमानों के शिया, सुन्नी, आगाखानी, मोमिन,

वहाबी आदि फिर्कों को आपस में मतभेदों के होते हुए भी पृथक्-पृथक् नहीं किया गया ? इसलिये कि सरकार ने संगठित मुसलमानों को हिन्दुओं के विरुद्ध उभाड़ कर भारत में ब्रिटिश साम्राज्यवाद को कायम रखने की नीति को अपना रक्खा है।

पिछले प्रकरण में आसाम के सम्बन्ध में हमने लिखा है कि १९४१ की जन-गणना में आदिवासियों अर्थात् जंगली जातियों को हिन्दुओं से पृथक् कर दिया गया है, जिससे आसाम की हिंदू जन-संख्या में २८ लाख की कमी हो गई है। यह केवल आसाम का ही प्रश्न नहीं है, प्रत्युत सारे भारत की जंगली जातियों को १९४१ की जन-गणना में हिन्दू जाति से पृथक् कर दिया गया है। इन जातियों को सन १९४१ तक हिन्दू ही माना जाता था, पर १९४१ में सरकार की हिंदू विरोधी नीति के कारण इन को हिन्दू जाति से पृथक् कर दिया गया है। हिन्दुओं के प्राचीन धर्मग्रन्थों में इन जातियों का उल्लेख पाया जाता है और इन में से अधिकांश क्षत्रिय हैं। सन १९३१ की जन-गणना के अनुसार इनकी संख्या भारत भर में ७६११८०३ थी, पर १९४१ के जन-गणना के अनुसार २५४४१४८९ अर्थात् ढाई करोड़ से भी अधिक दिखाई गई है। इसका परिणाम यह हुआ कि हिन्दुओं की संख्या ढाई करोड़ से भी अधिक कम हो गई है। हिन्दू जन-संख्या में ढाई करोड़ की कमी कोई साधारण बात नहीं है।

ढाई करोड़ से अधिक आदिवासी अर्थात् तथाकथित जंगली जातियाँ भारत भर में पहाड़ी प्रदेशों में, समुद्र-तटवर्ती प्रान्तों

में और जंगलों में निवास करती हैं। जिन स्थानों में ये जातियाँ निवास करती हैं, वे स्थान बहिर्गत (excluded) तथा आंशिक बहिर्गत (Partially excluded) क्षेत्र कहे जाते हैं। इन क्षेत्रों पर प्रान्तीय सरकार का शासन नहीं होता। गवर्नरों को यह अधिकार दिया गया है कि वे इन क्षेत्रों में चाहें जैसी मनमानी करें। परिणाम यह हो रहा है कि सरकार के संरक्षण में ईसाई मिशनरी इन क्षेत्रों में घुस पड़े हैं और वहाँ वे प्रत्येक संभव उपाय से जंगली जातियों तथा हरिजनों को ईसाई बनाते चले जा रहे हैं। मध्य भारत के भीलों में, गढ़वाल की शिल्पकार आदि जातियों में, आसाम के खासी, नागा, गारो, लसाई आदि जातियों में, मध्यप्रान्त के गोंडों में, संथाल परगना के संथालों में, छोटा नागपुर के आदिवासियों में, दक्षिण भारत के पुलय, गड्वा आदि जातियों में ईसाई पादरी साम, दाम, दण्ड और भेद—इन चारों नीतियों से काम लेकर ईसाई धर्म का प्रचार कर रहे हैं। उन लोगों को प्रत्येक संभव उपाय से विवश किया जा रहा है कि वे ईसाई धर्म को स्वीकार करें। अत्याचार द्वारा धर्म प्रचार किया जा रहा है। इन ईसाई मिशनरियों के अत्याचार यहाँ तक बढ़ गये कि उनका विरोध करना एक विचारशील ईसाई मिशनरी डॉक्टर एलविन ने अपना कर्तव्य समझा। मंडला में ईसाई मिशनरियों की कुटिल कार्रवाइयों से आपका हृदय सन्तप्त हुआ और आपने उनके विरोध में अपनी आवाज बुलंद की। आपने मध्य-प्रान्त की सरकार से जोर देकर कहा है कि सन् १९३५ के

गवर्नमेण्ट आफ इंडिया एक्ट पास होने के बाद जिस मंडला जिला को आंशिक बहिर्गत क्षेत्र कायम किया गया है, उसमें धर्म भ्रष्ट करनेवाली किसी भी ईसाई संस्था को घुसने न दिया जाय। आपने भारतीय नेताओं को सतर्क और सचेत करते हुए कहा है– 'प्रत्येक भारतीय नेता इस प्रश्न पर प्रत्येक स्थान में अपनी आवाज बुलंद करें। मंडला का प्रश्न समूचे भारत का प्रश्न है। यहाँ की समस्या से प्रत्येक प्रान्तीय सरकार के दिमाग में यह बात ठोक दी जानी चाहिये कि आंशिक बहिर्गत क्षेत्रों के प्रति उन प्रान्तीय सरकारों की कोई जिम्मेदारी है और सबसे पहले जिम्मेदारी यह है कि आंशिक बहिर्गत क्षेत्रों में इन धर्म भ्रष्ट करनेवालों को पांव ही न रखने दिया जाय। जब तक मिशनरी लोग वापिस नहीं चले जाते, तब तक जनता को दम नहीं लेना चाहिये। हालैंड के कैथोलिक उपनिवेशकों का कोई भी नैतिक, कानूनी अथवा राजनीतिक अधिकार नहीं है कि मंडला जिले पर अपना अस्तित्व लादें और इसका तो प्रश्न ही पैदा नहीं होता कि वे यहाँ के निवासियों के चाल-ढाल के बीच में कूदें अथवा देश के शासन में सिर घुसेड़ने का दावा करें।'

यह वक्तव्य उद्धृत करने का कारण यह है कि पाठक ईसाई मिशनरियों के अत्याचारी प्रचार का अनुमान कर सकें। यह मण्डला का प्रश्न नहीं है। समूचे भारत में, जहाँ जहाँ जंगली जातियों की संख्या अधिक है, यह अत्याचार हो रहा है। ध्यान रहे, ईसाई धर्म स्वीकार करनेवालों पर किसी तरह का अत्या-

चार नहीं किया जाता, प्रत्युत उनकी सब प्रकार से सहायता की जाती है। जो लोग ईसाई बनने से इन्कार करते हैं, उन पर ये मिशनरी मुसीबत की तरह टूट पड़ते हैं और उनको ईसाई धर्म ग्रहण करने पर विवश किया जाता है। इस प्रकार जंगली जातियाँ ईसाई बनती चली जा रही हैं।

आज हिन्दुस्थान में हजारों की संख्या में ईसाई पादरी ईसाई धर्म का प्रचार कर रहे हैं। ईसाइयों की सैकड़ों संस्थाएँ, जिन में औषधालय, हस्पताल, अन्धशालाएँ, अनाथालय, मिशन स्कूल, कालेज, उद्योग-गृह आदि सम्मिलित हैं, ईसाई धर्म के प्रचार में प्रयुक्त की जा रही हैं। निर्धन तथा अस्पृश्य हिन्दुओं के लिये ईसाई धर्म आज आकर्षण का केन्द्र बना हुआ है। परिणाम यह हो रहा है कि प्रति दिन लगभग ढाई सौ हिन्दू ईसाई धर्म ग्रहण कर रहे हैं। १९३१ से १९४१ तक १० वर्षों में ईसाइयों की संख्या चार लाख बढ़ गई है। ईसाइयों के आक्रमण का शीघ्र ही प्रतिकार न किया गया तो आगे चल कर यह बात हिन्दू समाज के लिये घातक प्रमाणित होगी। उधर मुसलमानों की संस्थाएँ हिन्दुओं को मुसलमान और मुस्लिम बहुमत प्राँतों की संख्या बढ़ाने के लिये प्रयत्नशील हैं। ऐसी अवस्था में हिन्दू जाति की रक्षा के लिये हिन्दू-दृष्टिकोण से विचार तथा कार्य करनेवाली हिन्दुओं की शक्तिसम्पन्न तथा स्वतन्त्र हिंदू संस्था की आवश्यकता है। इस आवश्यकता की पूर्ति हिन्दू महासभा ही कर सकती है।

हिन्दू महासभा और समाजवाद

भारत की आर्थिक योजना में पूँजीवाद का कोई दोष न हो, और समाजवाद के समस्त गुण हों। —हिन्दू महासभा

भारत के कम्युनिस्ट या रायिस्ट हिन्दू महासभा को साम्प्रदायिक तथा पूँजीवादी संस्था कह कर बदनाम करते हैं। राजनीतिक सिद्धान्तों की दृष्टि से हिन्दू महासभा साम्प्रदायिक संस्था नहीं है, प्रत्युत राष्ट्रीय है, यह हम पहले ही प्रमाणित कर चुके हैं। महासभा न तो साम्प्रदायिक है और न पूँजीवादी है। वह राष्ट्रीयता तथा समाजवाद के आधार पर स्थित शुद्ध प्रजातंत्रवाद का समर्थन करती है। कांग्रेस के मेरठ अधिवेशन के अवसर पर 'प्रजातंत्र' का प्रस्ताव उपस्थित करते हुए पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने भी घोषणा की थी कि जब हम विधान बनायेंगे, तो प्रकट है कि वह समाजवादी होगा। महासभा ने समाजवाद के बुनियादी सिद्धान्त को स्वीकार किया है।

हिन्दू महासभा के बिलासपुर अधिवेशन में श्रीयुत भोपटकर जी का राष्ट्रीय योजना का जो प्रस्ताव पास हुआ है, उसमें आर्थिक आयोजना के जो मौलिक सिद्धान्त स्वीकार किये गये हैं, उनको संक्षेप में देते हैं—

(१) आर्थिक आयोजना समस्त भारत की उन्नति के आधार पर निर्धारित हो, न कि कुछ लोगों के स्वार्थ पर।

(२) उसका विशेष और तात्कालिक सिद्धान्त भारतीय जनता की जरूरी आवश्यकताओं को पूर्ण करना हो—उदाहरणार्थ भोजन, वस्त्र, जल, रक्षागृह, स्वास्थ्य, सफाई, औषध और शिक्षा।

(३) आर्थिक आयोजना में पूँजीवाद का कोई दोष न हो और समाजवाद के समस्त गुण हों।

उद्योग-धन्धे

(४) ऐसे सारे उद्योग, जो देश के विशेष उद्योग कहे जाते हैं, सरकार के आधीन या सरकार के अधिकार में हों।

(५) अन्य समस्त उद्योग, चाहे वे एक आदमी के अधिकार में हों या किसी कम्पनी के, देश की राष्ट्रीय आयोजना में सम्मिलित हों।

(६) समस्त उद्योग, चाहे वे बड़े हों या छोटे, एक जगह या थोड़ी जगह में इकट्ठे रहने के बजाय समस्त भारत में हों। विशेतया ऐसे स्थानों में हों, जहाँ कि कच्चा माल सुगमता से मिल सके।

(७) हिन्दुस्थान को अपने प्राचीन उद्योगों की रक्षा विदेशी माल पर कर लगा कर करनी चाहिये या उसके आयात पर प्रतिबन्ध लगाना चाहिये, जिस से कि आर्थिक उन्नति हो सके।

(८) समस्त उद्योग उपयोगी तो पहले हों और व्यापारी बाद में।

मजदूरों के अधिकार

(क) काम करने के घण्टे कम कर दिये जायें, ताकि उनको शारीरिक, बौद्धिक तथा मानसिक उन्नति करने के लिये पर्याप्त समय मिल सके।

(ख) एक वर्ष में एक मास की सवेतन छुट्टी दी जानी चाहिए।

(ग) मूल्य-सूची के अनुसार वेतन।

(घ) काम करने के लिये स्वास्थ्य सम्बन्धी सुविधायें।

(ङ) मातृत्व की रक्षा, बालकों की उचित देख भाल, बीमारी, दुर्घटना और बुढ़ापे की आर्थिक कठिनाइयों और बेकारी के लिये आवश्यक इन्शोरेंस।

(च) ट्रेड यूनियन और दूसरी संस्थाओं की स्थापना, जिनके द्वारा वे अपने उचित अधिकारों की रक्षा के लिये हड़ताल कर सकें।

(छ) वधानिक रक्षा सुधार जैसे कि अन्य देशों में हो रहा है।

(ज) जहाँ तक सम्भव हो सके, अन्तर्राष्ट्रीय समझौते, जो कि उनके लिये उपयोगी हों, कार्यरूप में परिणत किये जायें।

किसानों के सम्बन्ध में

समस्त कृषि उद्योगों के दो उद्देश्य होने चाहिये। एक तो यह कि कृषि के साधनों की उन्नति से अधिक उपज हो सके और दूसरे यह कि कृषक और भूमि-विहीन कृषक मजदूरों को उनकी मेहनत का उचित फल मिल सके। जहाँ तक सम्भव हो, इकट्ठी

कृषि करनी चाहिये। भूमि के और अधिक टुकड़े नहीं किये जाने चाहिये। कृषि सम्बन्धी मवेशी की नस्ल में उन्नति और उनके द्वारा दूध, दूध की वस्तुएँ और खाद्य सरलता से सब को दिया जा सके। इसके लिये चरागाह हरेक गाँव में और उस के आस-पास के जंगलों में सुरक्षित हों। छोटे परिमाण में ग्रामोद्योग की स्थापना की जाये, ताकि प्रत्येक गाँव देश का स्वयं स्वावलम्बी भाग बन सके। गाँवों में कोआपरेटिव सोसाइटी और कोआपरेटिव बाजारों की स्थापना हो, जिनसे गाँववालों में सहयोग-भावना का विकास हो। परीक्षणात्मक खेतों की स्थापना हो, जिन से किसानों को अच्छे बीज आदि मिल सके।

ऊपर महासभा का राष्ट्रीय आर्थिक-आयोजना सम्बन्धी प्रस्ताव संक्षेप में दिया है, ताकि पाठक समझ सकें कि कम्युनिस्टों या रायिस्टों का हिन्दू महासभा पर किया गया आक्षेप बिल्कुल ग़लत है। बात यह है कि समाजवाद के बुनियादी सिद्धान्त को स्वीकार करने पर भी महासभा कम्युनिस्टों की कार्य-प्रणाली और सिद्धान्तों से पूर्णतया सहमत नहीं है और यही कारण है कि कम्युनिस्ट महासभा को पूँजीवादी कह कर बदनाम करते हैं।

कम्युनिस्ट राष्ट्रवाद को नहीं मानते। वे कहते हैं कि राष्ट्रवाद ही आगे चल कर साम्राज्यवाद में परिणत हो जाता है। इसलिये राष्ट्रवाद ही बुराइयों की जड़ है। कम्युनिस्टों का आदर्श आकाश की सैर कर रहा है और वे चल रहे हैं जमीन पर। क्या रूस राष्ट्रवाद को मान कर आगे नहीं बढ़ रहा है? दूसरे महायुद्ध में

इंग्लैण्ड और अमरीका ने अपने राष्ट्रीय स्वार्थों की रक्षा के लिये जो कुछ किया है, वही रूस ने किया है। बात यह है कि राष्ट्र-वाद को मान कर ही कोई राष्ट्र जीवित रह सकता है। एक अंग्रेज को ग्रेट-ब्रिटेन से और एक अमरीकन को संयुक्त राज्य अमरीका से जो प्रेम है, वही एक रूसी को रूस के भौगोलिक प्रदेश और उसके साहित्य और संस्कृति से है। यही तो राष्ट्रवाद है और वह रूसियों में भी अंग्रेजों और अमरीकनों की तरह सोलह आना विद्यमान है। मुँह से राष्ट्रवाद को न मानने की बातें बनाने से फायदा क्या ? हिन्दू महासभा राष्ट्रवाद को मानती है और वह भी हिन्दू राष्ट्रवाद को मानती है। साम्राज्यवादी राष्ट्रवाद का समर्थन महासभा नहीं करती है।

कम्युनिस्ट मानते हैं कि वर्ग-संघर्ष अर्थात् मजदूर और पूँजीपतियों के संघर्ष से ही वर्ग-विहीन समाज की स्थापना होगी। महासभा वर्ग-संघर्ष का विरोध नहीं करती है, पर वह भारत में वर्ग-संघर्ष के बिना भी समाजवाद की स्थापना सम्भव समझती है। प्रत्येक राष्ट्र की परिस्थिति भिन्न-भिन्न होती है और एक ही प्रकार की कार्य-प्रणाली सब राष्ट्रों में सफल नहीं हो सकती। इंग्लैण्ड का उदाहरण हमारे सामने है। वहाँ केवल चुनाव से क्रान्ति हो गई और मजदूर पार्टी का राज हो गया है। रूस की तरह खून की नदी नहीं बही। कम्युनिस्ट जिसको वर्ग-संघर्ष कहते हैं, वह भी इंग्लैण्ड में नहीं हुआ है। यह बात दूसरी है कि इंग्लैण्ड के मजदूर नेता पूँजीवादी और साम्राज्यवादी प्रमाणित

हो जायें। क्या रूस साम्राज्यवादी प्रमाणित नहीं हो रहा है? स्वतन्त्र राष्ट्रों में इंग्लैंड की तरह संघर्षहीन क्रान्ति हो सकती है। भारत में समाजवादी विचारों का इतना अधिक प्रचार हुआ है कि स्वतन्त्र भारत में समाजवाद की स्थापना होकर रहेगी। समाजवाद के प्रवाह को कोई रोक नहीं सकेगा। अभी तक रूस में भी वर्ग-हीन समाज की स्थापना नहीं हो पाई है। आगे की राम जाने। मनुष्य में ममत्व—'यह मेरा है'—की भावना स्वाभाविक रूप में काम कर रही है। भौतिक ध्येय को सामने रख कर ममत्व की भावना के नाश की कल्पना कोई मनोविज्ञान का शत्रु ही कर सकता है, समझदार नहीं। होना यह चाहिये, जैसा कि महासभा ने माना है, व्यक्तिगत सम्पत्ति पर उचित राष्ट्रीय नियन्त्रण रख कर ऐसा वातावरण पैदा किया जाय, जिसमें समाज के सभी जीव सुख तथा शान्ति के साथ जीवन बिता सकें। इसके लिये पहला प्रश्न राष्ट्र की स्वतन्त्रता का है। ब्रिटिश साम्राज्यवाद के होते हुए पूँजीवाद को कौन मिटा सकता है? मुख्य प्रश्न पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिये। कामरेड राय ब्रिटिश साम्राज्यवाद की सहायता करने के लिये युद्धकाल में १३०००) रु० मासिक भारत सरकार से लेते रहे और इधर पूँजीवाद को मिटाने की बातें भी बनाते रहे। पी० सी० जोशी कम्युनिस्ट पार्टी का खर्च कभी इस सरकार से और कभी उस सरकार से सहायता लेकर चलाते हैं। हिन्दुत्व-निष्ठ पूँजीपतियों से आर्थिक सहायता लेने से यदि हिन्दू महासभा को

पूँजीवादी कहा जाता है, तो भारत के कम्युनिस्ट साम्राज्यवादी और देश-द्रोही हैं। दूसरे महायुद्ध को जनता का युद्ध कह कर कम्युनिस्टों ने साम्राज्यवाद की जो सेवा की है, उससे मालूम हो जाता है कि कम्युनिस्टों का 'जनता का राज्य' कैसे होगा ?

एक बात और। कम्युनिस्टों ने अपनी देश-भक्ति का परिचय देने के लिये कांग्रेस और मुस्लिम लीग की एकता का नारा बुलन्द किया है और कहते हैं कि कांग्रेस को मुस्लिम लीग की पाकिस्तान की माँग स्वीकार कर लेनी चाहिये। इसके लिये वे प्रमाण रूस का देते हैं। उनका कथन है कि रूस के प्रत्येक यूनिट को आत्मनिर्णय का अधिकार दिया गया है। ये लोग इस बात का बिल्कुल ख्याल नहीं करते कि रूस ने किस परिस्थिति में क्या किया। ये केवल आँखें बन्द करके रूस के अन्धानुकरण पर जोर देते हैं। राष्ट्रान्तर्गत किसी प्रांत को केन्द्र से अलग होने के लिये आत्मनिर्णय का अधिकार नहीं दिया जा सकता। प्रांत को अर्थात् राष्ट्र के किसी विभाग को उस अवस्था में यह अधिकार दिया जाता है, जब कि दो स्वतन्त्र राज्य उस पर अपना स्वामित्व सिद्ध करते हों। हिन्दुस्थान में ऐसी कोई समस्या नहीं है। हिन्दुस्थान-भर में फैले हुए अल्पमत मुस्लिम सम्प्रदाय को आत्मनिर्णय का अधिकार नहीं दिया जा सकता।

यह ठीक है कि १६३६ में रूस ने अपने सब विभागों को आत्मनिर्णय का अधिकार प्रदान किया, पर साथ ही यह समझना आवश्यक है कि रूस ने यह नकली उदारता किस परि-

स्थिति में और क्यों दिखाई ? रूस में जो क्रान्ति हुई, वह कम्युनिस्टों के प्रयत्न से हुई है। कम्युनिस्ट अन्तर्राष्ट्रवादी थे, पर जब इनके हाथ में शासन की बागडोर आई, तो जार के रूस के लिये इन्हों ने प्रथम योजना बनाई। कहने की आवश्यकता नहीं है कि योजना राष्ट्रीय दृष्टि से बनाई गई थी। इसमें जार के रूस को एक और अखण्ड माना गया था। इस के किसी भी हिस्से को आत्मनिर्णय का अधिकार नहीं दिया गया था। इस योजना में आर्मिनिया अपनी इच्छा से सम्मिलित हुआ था, इसलिये उसको उसकी इच्छानुसार पृथक् होने के लिए आत्मनिर्णय का अधिकार दिया गया था। उसके बाद तीन पंचवर्षीय योजनाओं से मास्को में केन्द्रीय सत्ता को सुदृढ़ बनाया गया। विदेश विभाग, न्याय विभाग, बैंक, फौजी कानून, शिक्षा, स्वास्थ्य, यातायात, अर्थ, कृषि, सब तरह के कर, कारखानों की नीति, नागरिक अधिकार—ये सब बातें केन्द्रीय सत्ता के आधीन हैं। प्रांत तथा केन्द्र में मतभेद पैदा हो जाय, तो केन्द्र का निर्णय ही सर्वोपरि माना जाता है। इस प्रकार केन्द्र को सब तरह से प्रबल तथा सुदृढ़ बनाने के बाद १९३६ की योजना में प्रांतों को आत्मनिर्णय का अधिकार दिया गया है। ऐसी अवस्था में सब तरह से केन्द्र के आधीन प्रांत आत्मनिर्णय के अधिकार का उपयोग नहीं कर सकते। रूस के एकीकरण के लिये तो संयुक्त अर्थ-नीति, संयुक्त कृषि, न्याय-विभाग, औद्योगीकरण आदि आधार थे, पर कम्युनिस्ट बतायें कि भारत में उनके पास क्या है ? रूस का अनु-

करण करना ही है, तो पूरा करो। धर्म के विरुद्ध ये कम्युनिस्ट हमेशा ही बोलते ही रहते हैं। ये धर्म को अफीम की गोली समझते हैं और इधर धर्म के आधार पर राष्ट्र के दो टुकड़े करने का समर्थन करते हैं। ऐसे सिद्धान्त की बलिहारी! लीग-कम्युनिस्ट गठबन्धन की चर्चा करते हुए डॉक्टर पट्टाभि सीता-रमैया ने १६ सितम्बर १९४६ को मछलीपट्टन में अपने भाषण में कहा—"भारत के कम्युनिस्टों ने देश के साथ जैसा कमीना विश्वासघात किया है, वैसा दुनिया में अन्यत्र देखने को नहीं मिलता। कम्युनिस्ट दल की गश्ती चिट्ठी में मि० जिन्ना के 'प्रत्यक्ष संघर्ष' में सहयोग देने के लिये कम्युनिस्टों को आदेश दिया गया है। इस अपवित्र गठबन्धन का दुष्परिणाम कलह के रूप में सारे भारत में फैलेगा। जनता को अपनी रक्षा के लिये उद्यत हो जाना चाहिये। मुस्लिम लीगी रूस का भय दिखा रहे हैं। रूस हमारी सीमा से कुल ४० मील की दूरी पर है। यदि रूस का भारत पर आक्रमण हुआ तो कहने की आवश्यकता नहीं कि कम्युनिस्ट किसका साथ देंगे। उनकी पितृभूमि भारत है, किन्तु उनके आदर्श का पथ-प्रदर्शन लेनिनग्राड से होता है। रूस कम्यु-निस्टों की आदर्श-भूमि है। इस पार्टी पर भरोसा नहीं किया जा सकता। हमें गृहरक्षिणी सेना अथवा देश-भक्तों की नियमित सेना तैयार करनी चाहिये।"

हिन्दू किसान और मजदूरों को चाहिये कि वे कम्युनिस्टों के बहकावे में न आयें।

हिन्दू-समाज और राष्ट्रधर्म

केवल रक्षात्मक नीति और ध्वंसात्मक नारों से कुछ काम न होगा। अब हमें विधायक कार्यक्रम को पूरे तौर पर अपनाना चाहिये। —डॉ० श्यामाप्रसाद मुकर्जी

हिन्दू संगठित हों, एक साथ मिलकर कार्य करें, विभिन्न जातियों तथा वर्णों के तमाम भेद भाव को भुला दें और इस प्रकार संगठित होकर विधर्मियों के आक्रमण का प्रतिकार करें।

—स्वर्गीय महामना मालवीजी

हिन्दुओं को मुसलमान तथा ईसाई बनाने के मुसलमानों और ईसाइयों के घातक आक्रमण होते हुये भी आज हिन्दुस्थान में ७५ प्रतिशत हिन्दू हैं और उनकी संख्या ३० करोड़ है। हिन्दू ही हिन्दुस्थान के सच्चे राष्ट्रीय हैं और अन्य मुसलमान, ईसाई, पारसी, यहूदी आदि अल्पमत सम्प्रदाय हैं। इसलिये सब सम्प्रदायों की भलाई के लिये राष्ट्रीयता के आधार पर प्रजातन्त्र की स्थापना करने की जिम्मेदारी हिन्दुओं के सिर पर है। यह महान् कार्य हिन्दू समाज तभी कर सकता है, जब कि वह राष्ट्र-धर्म का पालन करें। हिन्दू-महासभा हिन्दू जाति को राष्ट्रधर्म का पालन करने के लिये कहती है, कट्टर साम्प्रदायिक बनने के लिये नहीं। साम्प्रदायिकता के आधार पर स्थित स्वार्थान्धता निन्दनीय है, पर समाज तथा राष्ट्र की उपेक्षा करनेवाली उदासीनता तथा सम्प्र-

दायिकता को प्रोत्साहन देनेवाली दुर्बलता या उदारता अधिक निन्दनीय है। स्वाधिकारों के प्रति उदासीनता तथा कांग्रेस की दुर्बलता या उदारता ने हिन्दू-समाज को हानि पहुँचाई है। अत्याचार करना पाप है, पर अत्याचार का प्रतिकार न करना उससे भी बढ़कर पाप है। हिन्दू दूसरी जाति पर अत्याचार नहीं करते, यह हिन्दू समाज के लिये गर्व तथा गौरव की बात है, पर हिन्दू अत्याचार का प्रतिकार नहीं करते, यह हिन्दू समाज के लिये लज्जा, आत्माभिमान-शून्यता, दीनता तथा नपुंसकता की बात है। अत्याचार न करो और न करने दो। जीवित तथा न्यायप्रिय समाज का यही जीवन सिद्धान्त होता है। भारत में राष्ट्रीयता की स्थापना करने के लिये हिन्दू समाज को इसी जीवन-सिद्धान्त पर चलना होगा। यही हिन्दुओं का राष्ट्रधर्म है।

राष्ट्रधर्म का दृढ़तापूर्वक पालन करने के लिये विभिन्न जाति-भेदों में विभाजित हिन्दू-समाज को समानता के आधार पर संगठित होना चाहिये। संगठन में शक्ति है, शक्ति में ही सत्ता है और सत्ता का अर्थ ही स्वतन्त्रता है। जाति-भेद से हिन्दुओं की शक्ति बिखर गई। जाति-भेद से जाति-जाति में सहानुभूति तथा सम-वेदना की भावना कम हो गई। आज हिन्दू-समाज में सैकड़ों जातियाँ तथा सैकड़ों उपजातियाँ विद्यमान हैं। हिन्दू-समाज में कुछ जातियों को अस्पृश्य समझा जाता है। उनको उच्च समझी जानेवाली जातियाँ स्पर्श तक नहीं करतीं। इन अस्पृश्य जातियों की संख्या लगभग छः करोड़ है। अपने को उच्च समझने वाली

कई जातियाँ भी एक दूसरे के यहाँ भोजन नहीं करतीं। एक जाति का दूसरी जाति में विवाह भी नहीं हो सकता। कुछ व्यवसाय ऐसे हैं, जिनको विशिष्ट जातियाँ ही कर सकती हैं। तात्पर्य यह कि आज हिन्दू-समाज में स्पर्श-बन्दी, रोटी-बन्दी, बेटी-बन्दी तथा व्यवसाय-बन्दी विद्यमान हैं। इन चार समाज-घातक रूढ़ियों के होते हुये हिन्दू-समाज संगठित नहीं हो सकता। इन रूढ़ियों को मटियामेट करना ही होगा। हिन्दू-समाज की इन स्पृश्यास्पृश्य की रूढ़ियों से मुसलमान तथा ईसाइयों ने बहुत लाभ उठाया है। आज भारत में जो मुसलमान हैं, उनमें ६५ प्रतिशत मुसलमान हिन्दुओं से बने हुये हैं। दक्षिण भारत में ईसाइयों की संख्या बढ़ती जा रही है। १६३१ से १६४१ तक १० वर्षों में ईसाइयों की संख्या ४ लाख के लगभग बढ़ गई है। ईसाइयों की सब से अधिक संख्या मद्रास, त्रावनकोर और कोचीन में है। कारण स्पष्ट है। दक्षिण भारत में स्पृश्यास्पृश्य के विचार बहुत ही प्रबल हैं। हिन्दुओं की इस घातक प्रथा से ईसाई पादरी लाभ उठा रहे हैं। ईसाई पादरियों के अत्याचारों का वर्णन हम पिछले प्रकरण में कर चुके हैं, उनको यहाँ दोहराने की आवश्यकता नहीं है। २५० हिन्दू प्रति दिन ईसाई धर्म स्वीकार कर रहे हैं। उधर मुसलमान अपनी संख्या बढ़ाने के लिये प्रयत्नशील हैं। जिन्हें सवर्ण हिन्दू स्पर्श तक नहीं करना चाहते हैं, उन्हीं को ईसाई और मुसलमान गले लगाकर अपनी संख्या बढ़ा रहे हैं। हम हिन्दू अपने हाथों अपने पाँव पर कुल्हाड़ी मार रहे हैं। सवर्ण

हिन्दुओं के अत्याचार से आज अस्पृश्य जातियों में हिन्दुओं से पृथक् होने के विचार पैदा हो रहे हैं। हिन्दुओं को परिस्थिति की गम्भीरता को भलीभाँति समझना चाहिये। हम हिन्दू सब एक हैं और समान हैं। हाँ, हिन्दू संगठन इसी बुनियादी विचार पर सुदृढ़ होगा। जन्म-मूलक उच्च-नीच की कल्पनाओं को मिटा देना होगा और समानता के आधार पर हिन्दू समाज के संगठन को मजबूत बनाना होगा। हिन्दू-समाज निम्नलिखित वेदाज्ञा को कार्यरूप में परिणत करें।

संगच्छध्वं संवदध्वं संवो मनांसि जानताम।
देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते ॥

ऋग्वेद

अर्थात्—तुम परस्पर मिलकर चलो। मिलकर बातचीत करो। ज्ञानी बनकर तुम अपने मनों को भी एक बनाओ। जैसे तुमसे पहले विद्वान तथा ज्ञानी संगठित होकर अपने अधिकार प्राप्त करते रहे हैं।

समानो मंत्रः समितिः समानी समानं मनः चित्तमेषाम।
समानं मंत्रं अभिमंत्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि ॥

ऋग्वेद

अर्थात्—तुम्हारे गुप्त विषयों के विचार मिलकर हों। विचार के लिये तुम्हारी सभा एक जैसी हो, जिनमें तुम सब मिलकर बैठ सको। तुम्हारा मनन मिलकर हो। निश्चय मिलकर हो। मैं तुन्हें मिलकर विचार करने का उपदेश देता हूँ। तुमको पारस्परिक

उपकार के लिये समान रूप से त्याग के जीवन में नियुक्त करता हूँ।

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि व।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति॥
(ऋग्वेद)

अर्थात्—तुम्हारे संकल्प और प्रयत्न मिल कर हों। तुम्हारे हृदय परस्पर मिले हुए हों। तुम्हारे अन्तःकरण मिले रहें, जिस से परस्पर सहायता से भरपूर उन्नति हों।

समानी प्रपा सह वो अन्नभागः॥
(अथर्ववेद)

अर्थात्—तुम्हारा खान-पान एकत्र हो।

यह है हिन्दू समाज का राष्ट्रधर्म। प्राचीन आर्य अर्थात् हिंदू इस धर्म का पालन करते थे और यही कारण था कि वे चक्रवर्ती साम्राज्यों की स्थापना करते रहे। कालान्तर में हिन्दू समाज ने इस राष्ट्र-धर्म की उपेक्षा कर दी और उसका परिणाम आज हम भुगत रहे हैं।

धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः।

अर्थात्—जो धर्म की रक्षा करते हैं, धर्म भी उनकी रक्षा करता है। जो धर्म का नाश करते हैं, धर्म भी उनका नाश कर देता है।

हमारे समाज की कितनी ही घातक रूढ़ियों के कारण मुसलमान और ईसाई हिन्दुओं को हजम करते जा रहे हैं। हिंदू समाज की कुछ तथाकथित धार्मिक कल्पनाएँ, जो वास्तव में

समाज-द्रोही हैं, हिन्दू समाज को कमजोर बनाने में सहायक होती रही हैं और हो रही हैं। स्पर्शबन्दी, रोटीबन्दी, बेटीबन्दी, व्यवसायबन्दी, दहेज प्रथा, समुद्र-यात्रा-निषेध, विधवा-विवाह-निषेध, पतित स्त्रियों के प्रति अनुदारता, विधर्मी स्त्री को ग्रहण करने में आनाकानी, विधर्मियों को हिन्दू बनाने का कार्य धर्म-विरुद्ध समझना और इसी प्रकार कितनी ही समाज-घातक रूढ़ियों ने हिन्दू समाज पर बुरी तरह आघात किया है। समय के फेर से कुछ रूढ़ियों का खात्मा हो गया है, कुछ मिटती जा रही हैं। अब समय आ गया है कि हम अपनी सामाजिक प्रथाओं को राष्ट्रधर्म की कसौटी पर कस कर देखें और जो प्रथाएँ हमारे राष्ट्रधर्म के विरुद्ध हों, उनका खात्मा कर दें। विधर्मियों को हजम करने की शक्ति हिन्दू समाज को बढ़ानी चाहिए। हमारा शुद्धि आन्दोलन तब तक सफल नहीं हो सकता, जब तक कि हिन्दू धर्म को स्वीकार करने वाले विधर्मी स्त्री-पुरुषों से हिंदू लोग खुले दिल से रोटी-बेटी व्यवहार नहीं करेंगे। जब दूसरे सम्प्रदाय प्रत्येक सम्भव उपाय से अपनी संख्या बढ़ाने का प्रयत्न कर रहे हैं, तब हिन्दू समाज को भी ईंट का जवाब पत्थर से देना चाहिये अर्थात् शुद्धि आन्दोलन को राष्ट्रधर्म समझ कर सफलतापूर्वक आगे बढ़ाना चाहिये। कहने की आवश्यकता नहीं कि यह महत्वपूर्ण कार्य कांग्रेस नहीं कर सकती। इसके लिये हिन्दुओं को चाहिये कि वे हिन्दू महासभा को शक्ति-सम्पन्न बनायें। हिन्दू-राष्ट्रपति डॉ० श्यामाप्रसाद मुकर्जी ने कहा है—

"केवल रक्षात्मक नीति और ध्वंसात्मक नारों से कुछ काम न होगा। अब हमें विधायक कार्य-क्रम को पूरे तौर पर अपनाना चाहिये।"

नोआखाली और पूर्व बंगाल की घटनाओं से और मुस्लिम लीग की उस चाल से, जो उसने अन्तःकालीन सरकार में अपने कोटे के ५ सदस्यों में श्री जोगेन्द्रनाथ मण्डल को शामिल करके चली है, हिन्दुओं को सतर्क और सचेत हो जाना चाहिये। श्रद्धानन्द शुद्धि सभा के प्रधान स्वामी चिदानन्द जी सरस्वती ने नोआखाली और पूर्व बंगाल के दौरे के सम्बन्ध में अपने एक पत्र में लिखा है—"१६ नवम्बर को मि० सुहरावर्दी यहाँ लखीपुर में आये थे। उनके भाषण से मुसलमानों को बड़ा प्रोत्साहन मिला है। जब सुहरावर्दी ने यह कहा कि यह इलाका पाकिस्तान का केन्द्र बनेगा, तब मुसलमानों की खुशी का कोई अन्त ही नहीं था। बंगाल के २८ जिलों में नोआखाली सबसे छोटा जिला है। ८५ प्रतिशत मुसलमान यहाँ प्रायः संगठित हैं, किन्तु १५ प्रतिशत हिन्दू जिनमें लगभग ४ प्रतिशत उच्च श्रेणी के हिन्दू, ५ प्रतिशत नमःशूद्र और ६ प्रतिशत शूद्र हैं, सभी अलग-अलग हैं। ४ प्रतिशत उच्च श्रेणी के हिन्दू वैश्य हैं और शेष हिंदुओं से बड़ी घृणा करते हैं। यही कारण है कि यहाँ मुसलमानों को हिंदुओं पर आक्रमण करने का अवसर मिला है। दूसरे यहाँ छोटी अवस्था में विवाह करने का रिवाज है और बाल-विधवा हो जाने पर स्त्री के सामने सिवाय मुसलमान हो जाने के अन्य

चारा नहीं है। इसलिये यहाँ पर, जहाँ ३० वर्ष पहले हिंदुओं का बाहुल्य था, आज हिन्दू सिर्फ १५ प्रतिशत रह गये हैं। इसके अलावा यहाँ नौका मोटर आदि सब आने-जाने के साधन मुसलमानों के हाथ में है और अन्य भी सब मजदूर वर्ग मुसलमान है।

लीग की ओर से शूद्रों और नमःशूद्रों में (जो प्रायः उपद्रवों से बच गये हैं) यह प्रचार किया जा रहा है कि उच्च श्रेणी के हिन्दू तुम्हारा साथ नहीं दे सकते। इसलिये तुम मुसलमान बन जाओ, इसी में तुम्हारी भलाई है। प्रतीत ऐसा होता है कि लीग की यह चाल सफल हो जायेगी, क्योंकि उच्च श्रेणी के हिंदू अब भी शूद्रों और नमःशूद्रों से अच्छा बर्ताव-व्यवहार करते नजर नहीं आते। यदि लीग की स्कीम पूरी हो गयी और हिंदुओं ने अपनी कमी को नहीं निकाला, तो लीग का यह स्वप्न कि यह पाकिस्तान का केन्द्र बनेगा – ठीक-सा ही दीख रहा है।

यह पत्र हिन्दुओं के उस दृष्टिकोण पर, जिसने हिंदू समाज को दुर्बल बनाया है, भली भांति प्रकाश डालता है।

पूर्व-बंगाल की घटनाओं ने हिन्दुओं के सामाजिक दृष्टिकोण में क्रान्तिकारी परिवर्तन कर दिया है। सैकड़ों सुधारक, लेखक और वक्ता, जो काम नहीं कर सके, वह पूर्व-बंगाल की घटनाओं ने एकदम कर दिया है। पूर्व-बंगाल में स्त्रियों पर बलात्कार किया गया, जबर्दस्ती धर्म-परिवर्तन और विवाह भी किये गये। आज का हिन्दू समाज बिना शुद्धि किये ही उन सब अभागो

स्त्रियों को अपनाने के लिये तैयार हैं। डॉ० श्यामाप्रसाद मुकर्जी अपने एक वक्तव्य में कहते हैं—"इस बात की घोषणा कर दी जाय कि समाज में उन स्त्री-पुरुषों को, जिन्हें जबर्दस्ती मुसलमान बनाया गया है, फिर वापिस लेने में किसी प्रकार की शुद्धि की कोई आवश्यता नहीं है।" गाँधीजी एक पत्र के उत्तर में लिखते हैं—"मुझे इसमें सन्देह नहीं कि जिन लड़कियों को बलात् उड़ाया गया, उन्होंने कोई अपराध नहीं किया; न वे घृणा की पात्री ही हैं। प्रत्येक समझदार आदमी को उनके प्रति दया दिखाना और उनकी सहायता करनी चाहिये। ऐसी लड़कियों को उनके परिवार बाहें फैला कर स्नेहपूर्वक वापस लें और उनके विवाह में किसी प्रकार की अड़चन नहीं होनी चाहिये।"

अखिल भारतीय ब्राह्मण महासभा और स्वामी शंकराचार्य ने भी इसी प्रकार विचार प्रकट किये हैं। बंगाल के कुछ नवयुवकों ने पूर्व-बंगाल की अपहृता लड़कियों से विवाह करने का विचार प्रकट किया है। ये विचार हिन्दू दृष्टिकोण में परिवर्तन के परिचायक हैं।

हिन्दू समाज राष्ट्र-धर्म की उपेक्षा न करे। भूतकाल में की हुई ग़लतियों के दुष्परिणाम हम वर्तमान काल में भुगत रहे हैं। यदि हम अपने भविष्यकाल को उज्ज्वल बनाना चाहते हैं, तो हमें वर्तमान काल में उन ग़लतियों से बचना चाहिये, जो हमने भूतकाल में की थीं।

शुद्धि और संगठन हमारा राष्ट्र-धर्म है। सब जातियाँ एक

दूसरे के यहाँ खान-पान कर सकें। अन्तर्जातीय विवाह की प्रथा प्रचलित हो। कोई भी जाति कोई भी व्यवसाय कर सके। योग्यता हो, तो भंगी भी कथावाचक बन सके और होटल या भोजनालय का धन्धा कर सके। वीर सावरकर ने राजबंदी की अवस्था में रत्नागिरी में अस्पृश्यता को दूर करने के लिये प्रशंसनीय कार्य किया है। आपने एक भंगी को कथावाचक बना कर ब्राह्मण स्त्रियों से उसकी पूजा कराई। आज भी आप जहाँ जाते हैं, सहभोज आन्दोलन के कार्य-क्रम पर विशेष जोर देते हैं। हिन्दू समाज की कमजोरियों का अध्ययन कर उन्हें दूर करने की कोशिश करनी चाहिये। ऐसा वातावरण बनाना चाहिये कि हिन्दू-धर्म को स्वीकार करनेवाले ईसाई तथा मुसलमान स्त्री-पुरुष के विवाह-सम्बन्ध हिन्दू समाज में आसानी से हो सके। शुद्धि और संगठन का अर्थ है वर्तमान हिन्दू समाज-व्यवस्था में आमूल क्रान्ति। राष्ट्र-धर्म का पालन करने के लिये यह क्रान्ति हिन्दू समाज को करनी ही होगी।

★

विचारक हिन्दुओं का कर्तव्य

जब तक हिन्दू एक जाति के रूप में अपने अस्तित्व का परिचय नहीं देंगे, तब तक हिन्दू-मुस्लिम समस्या पूरे खतरे के साथ बनी रहेगी। यदि हिन्दुओं को सम्मान पूर्वक जीवित रहना है, तो उन्हें अपने अस्तित्व का परिचय देना चाहिये।

—स्वर्गीय महामना पण्डित मदनमोहन
मालवीयजी का अन्तिम सन्देश

इसमें कोई सन्देह नहीं है कि कांग्रेस में थोड़े बहुत मुसलमान और अन्य अल्पमत भी सम्मिलित हैं, पर वे सब दाल में नमक के बराबर हैं। भारत सरकार ने पहली शिमला कान्फ्रैन्स के अवसर पर कांग्रेस को सवर्ण हिन्दू-संस्था माना था और अब चुनाव के आधार पर दलित समेत हिन्दू-संस्था स्वीकार किया है। मुस्लिम लीग तो कांग्रेस को शुद्ध सवर्ण हिन्दू-संस्था मानती है। यह स्पष्ट है कि कांग्रेस को हिन्दुओं का बहुमत प्राप्त है। हिन्दुओं के त्याग और तपस्या से ही कांग्रेस को प्रतिष्ठा प्राप्त हुई है। हिन्दुओं के पैसे से ही कांग्रेस का सारा काम हो रहा है। कांग्रेस का क्रान्तिकारी इतिहास हिन्दुओं के खून से लिखा गया है। यह सब कुछ होते हुये भी कांग्रेस अपने को हिन्दू-संस्था कहलाना स्वीकार नहीं करती। पहली शिमला कान्फ्रैन्स में कांग्रेस सवर्ण हिन्दू-संस्था के तौर पर सम्मिलित हुई थी, फिर भी वह

हिन्दू कहलाना पसन्द नहीं करती । हिन्दुओं के वोट लेकर ही कांग्रेस विभिन्न संस्थाओं में अपने प्रतिनिधि भेजती है, फिर भी कांग्रेस हिन्दू-संस्था कहलाना अपनी प्रतिष्ठा पर आघात समझती है । इस विचित्र नीति के कारण कांग्रेस ने अपने को और साथ ही हिन्दू-जाति को एक विचित्र परिस्थिति में ला पटका है । कांग्रेस कभी हिन्दू-संस्था का पार्ट अदा करती रही और कभी राष्ट्रीय संस्था का । परिणाम यह हुआ कि वह हिन्दू दृष्टिकोण और राष्ट्रीयता दोनों में से किसी एक की भी रक्षा न कर सकी । ऐसी अवस्था में हिन्दुओं के अधिकारों को बिना मालिक की सम्पत्ति समझा जाना स्वाभाविक ही था । ऐसा ही हुआ ।

आज ३० करोड़ हिंदुओं के सामने एक राजनीतिक प्रश्न उपस्थित है—"केन्द्र में हिंदू-मुस्लिम समान प्रतिनिधित्व या पाकिस्तान"?—यह प्रश्न हिंदुओं के लिये जिंदगी और मौत का प्रश्न है । सरकार और मुस्लिम लीग के गठबन्धन की बात को हम जानते हैं । कांग्रेसी नेताओं के त्याग और तपस्या की कहानी भी हम जानते हैं । कांग्रेस के नेताओं को जिन कठिनाइयों में से होकर गुजरना पड़ा, उनसे भी हम अनभिज्ञ नहीं हैं । आज भी कांग्रेसी नेता जिन उलझनों में उलझे हुए हैं, उनसे भी हम परिचित हैं, पर फिर भी हम जोर देकर कहते हैं कि कांग्रेस को आज जो हिंदू बहुमत प्राप्त है, उतना बहुमत यदि हिंदू अधिकारों की रक्षा के लिये लड़नेवाली किसी हिंदू-संस्था को प्राप्त होता, तो आज हिंदुस्थान में हिंदुओं के सामने—"केन्द्र में हिंदू-मुस्लिम समान

प्रतिनिधित्व या पाकिस्तान ?"—यह प्रश्न ही उपस्थित न होता। कांग्रेसी नेताओं की मनोवैज्ञानिक और राजनीतिक गलतियों ने इस प्रश्न के निर्माण में सरकार और लीग को बहुत कुछ सहायता प्रदान की है। कोई कांग्रेसी हिंदू कांग्रेस के नेताओं से यह पूछने की हिम्मत नहीं करता कि यह आपने क्या किया ?

विचारक हिंदू इस बात को सोचें और समझें कि हिंदुस्थान में क्या हो रहा है और क्यों हो रहा है। कांग्रेसी हिंदू अपने को हिंदुस्थानी मानते हैं, पर आज के शासन-विधान के अनुसार हिंदुस्थानी कोई है ही नहीं। जब तक पृथक् निर्वाचन प्रणाली का भारत में अस्तित्व है, तब तक किसी हिंदुस्थानी को लेजिस्लेटिव असेम्बलियों में कोई स्थान नहीं है, क्योंकि विधान के अनुसार उम्मेदवार को अपनी जाति तथा धर्म लिखना पड़ता है। तब तो कांग्रेसी भाई चुपचाप जाति और धर्म लिख देते हैं और हिंदुओं के वोटों से असेम्बलियों में जाते हैं और जाते ही वे 'हिंदू' से 'हिंदुस्थानी' बन जाते हैं। हिंदू-हित की दृष्टि से तो वे कोई बात असेम्बलियों में पेश ही नहीं करते, क्योंकि ऐसा करने से वे 'हिंदू' प्रमाणित हो जायेंगे और 'हिंदू' प्रमाणित होने का अर्थ है 'राष्ट्रीय' (?) पद से गिर जाना। इसलिये वे ऐसी कोई बात नहीं करते, जिससे उनका हिंदू होना सिद्ध होता हो। ध्यान रहे, हम यह बात किसी एक कांग्रेसी हिंदू व्यक्ति के सम्बन्ध में नहीं लिख रहे हैं, प्रत्युत कांग्रेस की अधिकृत नीति के सम्बन्ध में लिख रहे हैं। साम्प्रदायिक निर्णय और सत्यार्थ-प्रकाश के सम्बन्ध में

कांग्रेस की तटस्थता की नीति हमारी बात का समर्थन करती है। ऐसी अवस्था में हिंदुओं के अधिकारों की दुर्दशा हो जाना स्वाभाविक ही है।

कांग्रेस स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष कर रही है। कांग्रेसी नेताओं ने बहुत कुछ कष्ट सहन किया है। इसलिए हिन्दुओं के हृदय में कांग्रेस के नेताओं के प्रति आदर और श्रद्धा के भाव हैं। निस्सन्देह गांधी-जवाहर और राजेन्द्र-पटेल महान् हैं, पर हिन्दू-राष्ट्र और हिन्दू समाज उनसे भी महान् हैं। बड़े नेताओं ने गलतियाँ भी बड़ी की हैं। बड़ी गलतियों के परिणाम भी बड़े ही होंगे और हो रहे हैं। हिन्दुओं के राजनीतिक तथा सांस्कृतिक अधिकारों पर घातक प्रहार हो रहे हैं।

कांग्रेस आज नाजुक परिस्थति में है। कांग्रेस ने प्रजातंत्रवाद की घोषणा की है। सरदार पटेल ने विधान परिषद में इस बात को स्पष्ट कर दिया है कि कांग्रेस ब्रिटिस सरकार का ६ दिसम्बर १९४६ का वक्तव्य, जिसमें प्रांतों की प्रारंभिक गुटबन्दी को अनिवार्य कर दिया गया है, स्वीकार नहीं कर सकती। २१ दिसम्बर १९४६ को कराची में मि० जिन्ना ने कहा है—'जब तक कांग्रेस १६ मई के सरकारी वक्तव्य तथा ६ दिसम्बर को प्रकाशित तत्सम्बन्धी सरकारी अर्थ को स्वीकार नहीं करती, तब तक मुस्लिम लीग के निर्णय में संशोधन करने के लिए लीग कौन्सिल की बैठक नहीं बुलाई जा सकती।' गांधीजी ने आसाम को सलाह दी है कि वह गुटबन्दी में शामिल न हो। भारत-मन्त्री ने लंदन में

घोषणा की है कि विधान परिषद ६ दिसम्बर के वक्तव्य के आधार पर ही विधान बनाये या लीग की सहमति से और कोई विधान बनाये। ये दो ही विकल्प हैं। तीसरी कोई बात ब्रिटिश सरकार मंजूर नहीं कर सकती। ऐसी परिस्थिति में लीग के बिना ही कांग्रेस विधान-परिषद के कार्य को आगे बढ़ा रही है, विधान परिषद की प्रगति में कठिनाइयों की कमी नहीं है रियासतों का रुख भी आशाजनक नहीं है। संघर्ष की सम्भावना है। यदि संघर्ष हुआ, तो हिन्दू महासभा को कॉंग्रेस का साथ देना चाहिये।

हिन्दू जनता को चाहिये कि वह स्वतन्त्रता की प्राप्ति के लिये किये जानेवाले संघर्ष में कांग्रेस का पूरा साथ दे, पर साथ ही हिन्दू महासभा को सुदृढ़ बनाने का खयाल रखे। स्वर्गीय महामना मालवीयजी ने अपने अन्तिम सन्देश में कहा है—"जब तक हिन्दू एक जाति के रूप में अपने अस्तित्व का परिचय नहीं देंगे, तब तक हिन्दू-मुस्लिम समस्या पूरे खतरे के साथ बनी रहेगी। हिंदुओं को सम्मानपूर्वक जीवित रहना है, तो उन्हें अपने अस्तित्व का परिचय देना चाहिये।" यह उस राजनीतिज्ञ महापुरुष का, जिसने अपने जीवन में समय-समय पर कांग्रेस तथा हिंदू महासभा दोनों का साथ दिया है और जो दोनों संस्थाओं का अध्यक्ष रह चुका है, अन्तिम अनुभव है। राष्ट्रीयता और साम्प्रदायिकता के संघर्ष में राष्ट्रीयता दुर्बल हो, तो साम्प्रदायिकता प्रबल होती जाती है। भारतीय राजनीति में ऐसा ही हुआ है। अब यह आवश्यक हो गया है कि हिंदू एक

महान् जाति के रूप में अपने अस्तित्व का परिचय दें और अपनी जातीय संस्था हिन्दू महासभा को सुदृढ़ तथा शक्ति-सम्पन्न बनायें।

हिन्दू इस बात को भली भांति समझें कि उनका कोई जातीय सुदृढ़ संगठन न होने से ही मुस्लिम लीग ने जोर पकड़ा है। भारतीय राजनीति में हिन्दू दृष्टिकोण की उपेक्षा होती रही है— क्यों ? इसलिये कि हिंदुओं ने एक जाति के रूप में अपने संगठन को कभी महत्व नहीं दिया। हिंदुओं का अपना सुदृढ़ संगठन होता, तो मुस्लिम लीग को 'खुला संघर्ष' का प्रस्ताव पास करने की भी हिम्मत न होती।

हिंदुओं की सामाजिक परिस्थिति तथा मनोवृत्ति का मुस्लिम लीग और मुस्लिम रियासतों ने भली भांति अध्ययन किया है और इसलिये उनको हिंदुओं पर आक्रमण करने में किसी तरह की हिचकिचाहट नहीं होती। सिंध के लीगी मन्त्रि-मण्डल ने सत्यार्थ-प्रकाश पर प्रतिबन्ध लगाया है—क्यों ? इसलिये कि मुस्लिम समाज की हिंदुओं के सम्बन्ध में यह धारणा बन चुकी है कि हिन्दुओं को दबाया जा सकता है। निजाम हैदराबाद में क्या हो रहा है ? और अत्याचारों की तो बात जाने दीजिये, निजाम सरकार ने हाल में जो सुधार घोषित किये हैं, उनमें हिन्दुओं के प्रति जो अन्याय किया गया है, उस पर विचार करें, तो मालूम हो जाता है कि हिन्दू-राष्ट्र हिंदुस्थान में हिन्दुओं की क्या इज्जत है। यद्यपि हिन्दुओं की आबादी रियासतों की कुल आबादी की ८८·१२ प्रतिशत है, तथापि उन्हें धारासभा में केवल

६० सीटें दी गई हैं और मुसलमानों को ६६ सीटें दी गई हैं, जिनकी आबादी ११·१२ प्रतिशत है। निजाम सरकार को हिंदुओं के साथ इतना अन्याय करने का साहस क्यों? इसलिये कि संगठित होकर हिन्दू अन्याय तथा अत्याचार का प्रतिकार नहीं करते। हमारी सामाजिक कमजोरियों ने हमें कमजोर बना दिया है। हिंदू एक जाति के रूप में संगठित होकर प्रत्येक अन्याय तथा अत्याचार के विरुद्ध क्रियात्मक आवाज बुलंद करें, तो निकट-भविष्य में ही हिंदुस्थान में हिंदू जाति के विरुद्ध कोई बात सुनाई नहीं देगी।

हिन्दू महासभा के सामने काम का पहाड़ पड़ा है, पर आज जो हिन्दू महासभा है, उसमें इतनी शक्ति नहीं है कि वह इस पहाड़ को उठा सके। पाकिस्तान का प्रचार, हिन्दू-मुस्लिम समान प्रतिनिधित्व, रेडियो का उर्दू प्रचार, गांधीजी का हिन्दुस्थानी प्रचार, वर्धा-शिक्षा योजना, बहिर्गत क्षेत्र में ईसाई प्रचार, आसाम की समस्या, लीगी मन्त्रि-मण्डलों की हिन्दू-विरोधी नीति आदि कितनी ही बातों का सफलतापूर्वक विरोध करने के लिये एक निश्चित योजना के अनुसार कार्य करने की आवश्यकता है। हिन्दू महासभा को सरकार, काँग्रेस और लीग तीनों का समय-समय पर विरोध करना पड़ेगा। इस कार्य के लिये बहुत ही मजबूत संगठन की आवश्यकता है। कर्मयोगी नेताओं का साथ देने में हिन्दू जनता कभी पीछे नहीं रही—इस सामाजिक सत्य को सामने रख कर महासभा के नेता गण यदि कर्मक्षेत्र में कूद

पड़ें, तो निकट भविष्य में हिन्दू महासभा प्रभावशाली संस्था हो सकती है। हिन्दू महासभा की ताकत इतनी अधिक बढ़ जानी चाहिये कि हिन्दू महासभा के दृष्टिकोण की उपेक्षा कांग्रेस न कर सके। हिन्दू महासभा के नेता तथा हिन्दू जनता के संयुक्त प्रयत्न से ही हिन्दू महासभा और हिन्दू जाति दोनों शक्ति-सम्पन्न बन सकती हैं। हिन्दू जाति का भूतकाल महान था। यदि हम वर्तमान को सम्भालें, तो भविष्य भी महान होगा।

—वन्दे मातरम्